विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका

वर्ष-२ अंक-३ कार्तिक कृष्ण चतुर्थी युगाब्द-५१०२ तदनुसार २०५७ विक्रमी १७ अक्टूबर, २०००

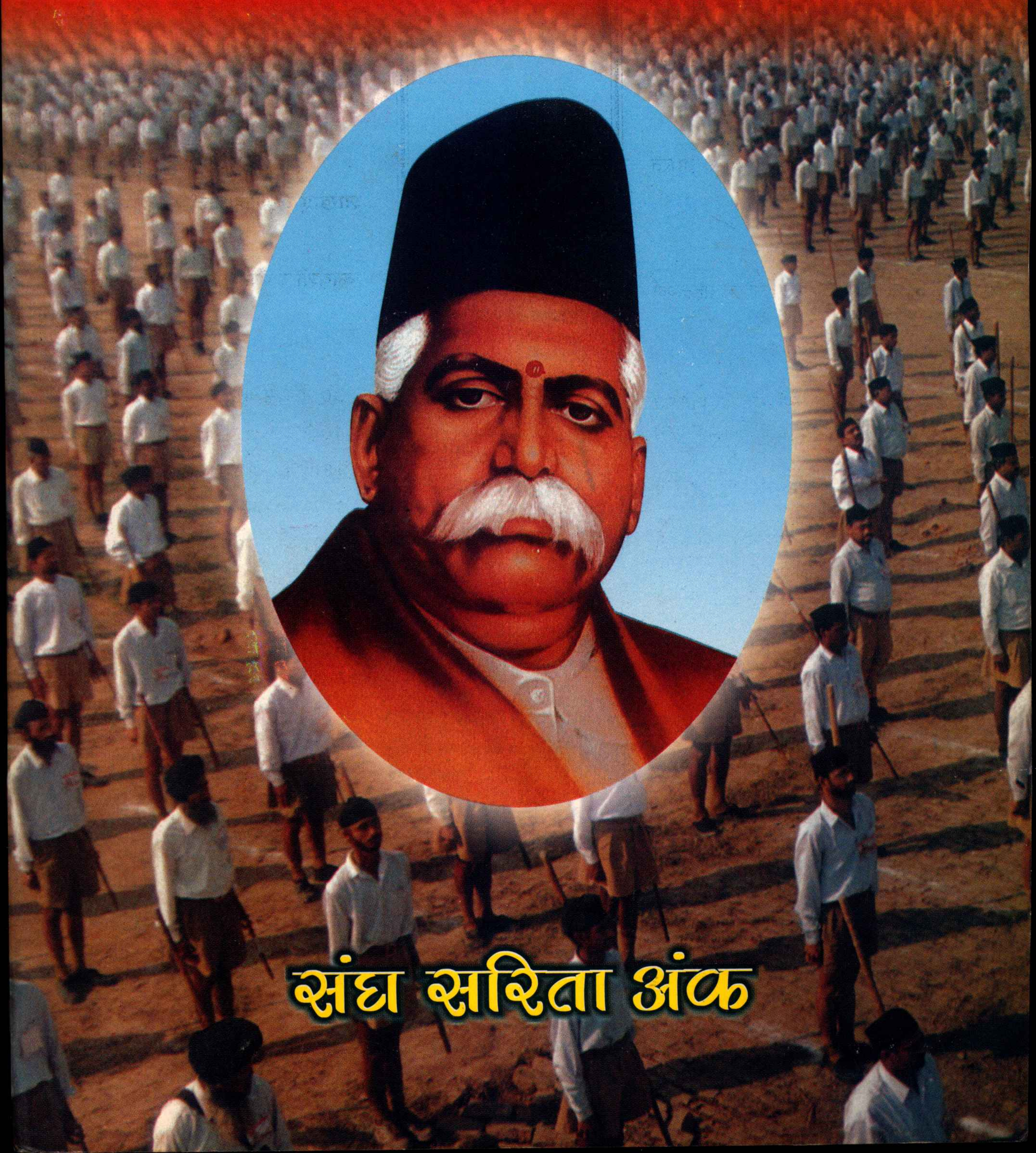

संघ सरिता अंक

अधिक ब्याज | स्थापित 1918 | अधिक सुरक्षा

उत्तर प्रदेश के सहकारी क्षेत्र के अग्रणी बैंक

नार्दर्न रेलवे प्राइमरी कोआपरेटिव बैंक लि.

प्रधान कार्यालय : ९ए, विधान सभा मार्ग, लखनऊ

शाखाएँ : इलाहाबाद, मुरादाबाद, डी.एल.डब्ल्यू वाराणसी, कानपुर एवं आलमबाग (लखनऊ)

फोन नं. : 225964

कार्यशील पूँजी : 52 करोड़ से अधिक | **जमा धन :** 40 करोड़ से अधिक

सावधि जमा की 1.6.2000 से संशोधित दरें

30 दिन से 45 दिन तक	5.00%
46 दिन से 179 दिन तक	6.00%
180 दिन से एक वर्ष	8.00%
1 वर्ष से ऊपर तथा 2 वर्ष	10.00%
2 वर्ष से ऊपर तथा 3 वर्ष से कम	10.50%
3 वर्ष तथा उससे ऊपर	11.00%
बचत खाता	5.00%

नोट : मासिक आय की सुविधा उपलब्ध है। जमा धन रेलवे कर्मचारियों एवं जन-साधारण से स्वीकार किये जाते हैं।

आर.पी. सिंह
अपर निबंधक
सहकारी समितियाँ, उ.प्र. लखनऊ
एवं
प्रशासक
नार्दर्न रेलवे प्राइमरी कोआपरेटिव बैंक लि.
लखनऊ

विजय कुमार
सचिव एवं सामान्य प्रबंधक

ॐ

विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका

(त्रैमासिक)

लखनऊ

वर्ष – २ अंक – ३

संघ सरिता अंक

परामर्शदाता मण्डल

डॉ० शैलनाथ चतुर्वेदी
श्री योगेन्द्रनाथ योगी
श्री अधीश कुमार
श्री पीयूष कान्ति राय
श्री आनन्द मिश्र 'अभय'

सम्पादक

डा० गौरीनाथ रस्तोगी

मुखपृष्ठ

श्री योगेन्द्रनाथ 'योगी'

छायाकार

श्री संजय खरे

प्रकाशक

श्री विपिन बिहारी तिवारी
प्रबन्ध निदेशक
विश्व संवाद केन्द्र
डी–२, विधायक निवास–६
पार्क रोड, लखनऊ–१
दूरभाष : ०५२२ – २१६२३५

मुद्रक

नूतन आफसेट मुद्रण केन्द्र
राजेन्द्र नगर, लखनऊ–४

शुल्क

आजीवन	१००० रु०
वार्षिक	१०० रु०
एक प्रति	२५ रु०
इस अंक का मूल्य	५० रु०

विषयानुक्रमणिका

विषय		लेखक	पृष्ठ
१.	हिन्दू राष्ट्र के विचार का औचित्य		७
२.	संघ सरिता बह रही है		८
३.	राष्ट्र– रोग का मूल एवं उसका उपचार	हो० वे शेषाद्रि	६
४.	संघ सरिता के भगीरथ	रामशंकर अग्निहोत्री	१३
५.	संघ गंगा (कविता)	अटल बिहारी वाजपेयी	१६
६.	लोक शिक्षण का अभिनव विश्वविद्यालय	लज्जाराम तोमर	१७
७.	क्रान्तिपथिक डॉ० हेडगेवार	वचनेश त्रिपाठी	२३
८.	देव दुर्लभ नेतृत्व	विजय कुमार	२६
६.	संघ और न्यायपालिका	डॉ० गौरीनाथ रस्तोगी	३५
१०.	था एक बूँद पर बह निकला (कविता)	रामशंकर अग्निहोत्री	४१
११.	महामना मालवीय और संघ	दीनानाथ सिंह	४३
१२.	संघ की अभूतपूर्व कार्यपद्धति	नन्दकिशोर	४५
१३.	नींव के पत्थर	जी०एन० पथरिया	४७
१४.	संघ के स्वयंसेवकों ने जान हथेली...	डॉ० भगवानदास	५०
१५.	शहीद सुखदेव के परिवार को बचाया	शिवकुमार गोयल	५१
१६.	स्वतंत्रता संग्राम में संघ की भूमिका	संकलित	५३
१७.	भारत विभाजन और संघ	संकलित	५६
१८.	प्रणाम (कविता)	सोहनलाल द्विवेदी	५८
१६.	गाँधी हत्या और संघ	संकलित	५६
२०.	संघ और समरसता	सुरेश जोशी	६१
२१.	संघ जैसा कि मैंने देखा	महात्मा गाँधी	६४
२२.	स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद स्वतंत्रता संग्राम	संकलित	६५
२३.	जब स्वयंसेवकों ने पुर्तगालियों को भगाया	अजय मित्तल	६७
२४.	खेल–खेल में देशभक्ति के संस्कार	एन० के० श्रीवास्तव	६६
२५.	संघ ने समरसता सिखाई	सूरजभान	७१
२६.	शत–शत प्रणाम (कविता)	पं० श्यामनारायण पाण्डेय	७२
२७.	सेवाभारती	भैय्या जी जोशी	७३
२८.	मातृशक्ति जागरण	मीनाक्षी दीक्षित	७६
२६.	बिछुड़ों को गले लगायें	मोहन जोशी	७६
३०.	विश्व का अद्वितीय एवं अनोखा संगठन	वीरेन्द्र कुमार 'वीरू'	८३
३१.	विद्याभारती	संकलित	८६
३२.	विश्व हिन्दू परिषद्	संकलित	८६
३३.	लोकतन्त्र का रक्षक : संघ	संकलित	६३
३४.	संघ और राजनीति	डॉ० दिलीप अग्निहोत्री	६६
३५.	संघ और प्रचार माध्यम	सर्वेश कुमार सिंह	६८
३६.	भारतीय किसान संघ के बढ़ते चरण	संकठा प्रसाद सिंह	१००
३७.	ना मूलं लिख्यते किञ्चित	डॉ० उदयनारायण उपाध्याय	१०२
३८.	विद्यार्थियों को दिशा बोध	आशुतोष भटनागर	१०४
३६.	भारतीय मजदूर संघ	संकलित	१०७
४०.	विदेशों में संघ	योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	११०
४१.	संघ के ७५ वर्ष	मा.गो. वैद्य (जे.आर. पावगी)	११३
४२.	रा. स्व. संघ : वामन से विराट	हो.वे. शेषाद्रि	११८
४३.	संघ विचारधारा से अनुप्राणित संगठन	देवदत्त शर्मा	१२३

अपनी बात

भारत के स्वाधीन होने के उपरान्त भी इस गौरवशाली राष्ट्र की सर्वकल्याणमयी सनातन संस्कृति की घोर उपेक्षा, राष्ट्रीय अस्मिता की खुली अवज्ञा एवं भारत को पश्चिमी ढाँचे में ढाल देने के सुनियोजित षड्यन्त्र को उध्वस्त कर इस राष्ट्र के सनातन जीवन–मूल्यों के संरक्षण–संवर्धन एवं प्रसार हेतु सुप्रसिद्ध राष्ट्रभक्त श्री अशोक जी सिंहल की प्रेरणा से उत्तर–प्रदेश की राजधानी लखनऊ में विश्व संवाद केन्द्र प्रस्थापित हुआ है।

इस केन्द्र का सफल संचालन एक विधिवत गठित एवं नियमानुसार पंजीकृत न्यास के माध्यम से हो रहा है। न्यासी मंडल में र्स्वश्री सिद्धार्थ प्रसाद अध्यक्ष, प्रदीप कुमार उपाध्यक्ष, प्रकाश झुनझुनवाला कोषाध्यक्ष, वीरेश्वर द्विवेदी सचिव, तथा सर्वश्री प्रदीप भार्गव, प्रेम कुमार रस्तोगी, ओमप्रकाश जी, बालकृष्ण जी, स्वान्त रंजन जी, अधीश कुमार जी, रामनिवास जैन, राधारमण अग्रवाल, योगेन्द्र कुरिछ न्यासी एवं श्री विपिन बिहारी तिवारी प्रबन्ध निदेशक हैं।

बहुआयामी गतिविधियाँ

अपने जन्म–काल से ही विश्व संवाद केन्द्र बहुआयामी गतिविधियों का संचालन कर रहा है। प्रति सप्ताह नेपाल सहित देश के विभिन्न भाषा–भाषी पत्र–पत्रिकाओं को समाचार एवं प्रसंग लेख संप्रेषण, सामयिक विषयों पर गोष्ठियाँ, पत्रकारिता प्रशिक्षण, संदर्भ पुस्तकालय, श्रव्य–दृश्य अथवा आडियो–वीडियो लाइब्रेरी, छाया–चित्र अनुभाग, ई–मेल एवं वेबसाइट का प्रयोग, समाचार–पत्रों से कटिंग करके उनकी विषयानुसार फाइलिंग, पत्रकार वार्ताओं के सफल आयोजन, पत्रकार–बन्धुओं की सामयिक विषयों पर विचारार्थ बैठकें, लखनऊ महानगर सहित प्रदेश के समाचार–पत्रों से जीवन्त संबंध, महत्वपूर्ण सामयिक विषयों पर पुस्तक प्रकाशन, महत्वपूर्ण विषयों पर सर्वेक्षण आदि गतिविधियाँ उसके प्रमुख कार्यकलाप हैं। **'करगिल, अपराधी कौन ?'** और **'ईसाइयत का अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्र'** नामक पुस्तकों का संपूर्ण देश में व्यापक स्वागत हुआ है। 'पत्र–मित्र लेखक संघ' का अपना विशिष्ट स्थान है। अनेक विद्वज्जनों के महत्वपूर्ण लेखक मंडल का सक्रिय सहयोग केन्द्र को प्राप्त है। अति शीघ्र **'संवाद भारती डॉट काम'** के नाम से हिन्दी में साइबर समाचार सेवा प्रारम्भ होने जा रही है। कलियुग की ५२वीं शताब्दी के प्रारम्भ अथवा १८ मार्च, १९९९ से प्रकाशित होने वाली **'विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका (त्रैमासिक)'** अपनी विशिष्ट पहचान बना चुकी है। उसके **'वन्दे मातरम्', ५२वीं शताब्दी, विजयी भारत, संविधान समीक्षा, इस्लामी आतंकवाद एवं राष्ट्र संकल्पना अंकों'** तथा उसके पूर्व प्रकाशित **'स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी पत्रकारिता'** तथा **'स्वाधीनता के ५० वर्ष'** नामक वार्षिक स्मारिकाओं को खूब सराहा गया। 'पोखरण परमाणु परीक्षण, 'करगिल : समस्या और समाधान' तथा 'अखण्ड भारत दिवस' संबंधी गोष्ठियाँ अत्यन्त सफल रही हैं।

इस पावन राष्ट्र–यज्ञ में हमें अपने न्यासियों, पत्रिका के परामर्शदाता मंडल, अन्य विद्वज्जनों एवं श्रेष्ठ लेखकों सहित केन्द्र के प्रबन्ध निदेशक श्री विपिन बिहारी तिवारी, श्री अधीश कुमार एवं राज्य ललित कला अकादमी के अध्यक्ष श्री योगेन्द्रनाथ 'योगी' का भरपूर सहयोग प्राप्त है। सुधी पाठकवृन्द एवं विज्ञापनदाता हमारे सबसे महत्वपूर्ण संबल हैं।

प्रस्तुत **'संघ सरिता अंक'** में हमें अनेक महानुभावों का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ है। हम उन सभी के प्रति कृतज्ञ हैं। निर्धारित पृष्ठों में समस्त सामग्री समाहित न हो पाने से पृष्ठ संख्या में वृद्धि की गई है। फिर भी स्थानाभाव के कारण अनेक महत्वपूर्ण रचनायें समाविष्ट न हो सकी हैं। उनसे हम हार्दिक क्षमायाचना के प्रार्थी हैं तथा भविष्य में अपने समस्त सुहृदजनों के सक्रिय सहयोग के आकांक्षी हैं।

□

सम्पादकीय

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आज विश्व का सर्वाधिक विशाल एवं अनुशासित स्वयंसेवी संगठन है। विगत ७५ वर्षों के गंभीर राजनीतिक झंझावात के मध्य भी उसका द्रुतगति से विकास हुआ है; क्योंकि उसका कार्य परिस्थिति निरपेक्ष है। संवत् १६८२ (सन् १६२५) में रा० स्व० संघ को प्रारम्भ करते समय भारत के राष्ट्र–जीवन में अपरिचित से दिखने वाले तथा किसी श्रेष्ठतम नेता के मार्गदर्शन से रहित इस महापुरुष का कार्य जहाँ **स्वयमेव मृगेन्द्रता** का परिचायक है, वहीं वह **'क्रिया सिद्धिः सत्वे भवति महतां नोपकरणे'** का भी व्यावहारिक प्रगटीकरण है।

संघ सरिता रूपी युगान्तरकारी संगठन को इस धरा पर लाने वाला यह आधुनिक भगीरथ हिन्दू जीवनादर्शों की प्रतिमूर्ति था। अतः प्रसिद्धि पराङ्मुखता उसके जीवन का व्यवहार रहा तथा बाल–किशोर–युवा स्वयंसेवकों के समक्ष केवल उनसे दो कदम आगे रहने का व्यावहारिक आदर्श रख कर डा० हेडगेवार ने ऐसे देवदुर्लभ कार्यकर्ताओं की अजस्र मालिका की निर्माण–प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप दिया है जो संपूर्ण विश्व में अनन्य एवं अद्वितीय है। राष्ट्र–जीवन के विविध क्षेत्रों का सम्यक् मार्गदर्शन करने का तथ्य इस विश्लेषण की पुष्टि कर रहा है।

डा० हेडगेवार एवं रा०स्व० संघ की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता उनका भारत के एकात्मवादी जीवन–दर्शन से एकरूप होना है। फलस्वरूप मत भिन्नता के बावजूद डा० हेडगेवार, उनके अनुयायियों एवं संघ ने किसी भी राजनेता अथवा दल को राजनीतिक अस्पृश्य नहीं माना तथा सभी को साथ लेकर चलने की नीति को व्यावहारिक रूप दिया। यहाँ तक कि गाँधीजी जी की दुर्भाग्यपूर्ण हत्या के उपरान्त षड्यन्त्रपूर्वक संघ को सभी प्रकार की हिंसा एवं अपमान का भक्ष्य बनाने वालों के विषय में भी प्रतिबंध के हटने पर श्री गुरुजी ने 'वयं पंचाधिकं शतम्' का आदर्श रखा तथा स्पष्टतम शब्दों में स्वयंसेवकों को निर्देश दिया कि दाँतों के मध्य जीभ के आ जाने पर दाँत नहीं तोड़ दिये जाते। फलतः संघ–गंगा आज भारत के सभी मत–मतान्तरों को भागीरथी में न केवल समाहित करती जा रही है अपितु विश्वव्यापी हिन्दू–बौद्ध एकता के साकार होने के लक्षण भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं। संपूर्ण विश्व में हिन्दू जीवनादर्शों की ग्राह्यता बढ़ रही हे। अतः यह असाधारण एवं युगान्तरकारी उपलब्धि है।

इसके विपरीत जीवनादर्शों के आधार पर १८८५ से चलने वाला राष्ट्रीय अभियान मतभिन्नता को विरोध में परिवर्तित करता रहा। अन्ततः उदारवादी, संविधानवादी, राष्ट्रवादी, क्रान्तिकारी आदि वर्गों में मत–भिन्नता स्वाधीनता प्राप्ति के साधनों को लेकर थी, साध्य को लेकर नहीं। किन्तु वे एक–दूसरे के सहयोगी एवं पूरक न बनकर अपनों का ही विरोध करते दिखाई देते हैं जिससे ब्रिटिश राज्य सत्ता ही लाभान्वित हुई थी। सूरत कांग्रेस की फूट एवं उसके बाद की घटनाएँ, भगतसिंह आदि की जीवन–रक्षा की उपेक्षा किंवा विरोध, कांग्रेस को अलविदा कहने के लिए सुभाष को विवश करना, क्रान्तिकारियों की घोर उपेक्षा, सावरकर पर मिथ्या दोषारोपण कर उन्हें बन्दी बनाने, गाँधी की हत्या के बाद संघ पर प्रतिबन्ध आदि की घटनाओं का आकलन इसी परिप्रेक्ष्य में अपेक्षित है। वस्तुतः सूरत कांग्रेस की दुर्भाग्यपूर्ण घटना के फलस्वरूप ही ब्रिटिश राज्य सत्ता को लोकमान्य तिलक तथा लाला लाजपतराय का निर्वासन करने का साहस हो सका था। इसी भाँति यदि पारस्परिक मतभिन्नता विरोध में परिणत न होती तो देश का पापपूर्ण विभाजन १६४७ में घटित नहीं होने पाता।

संघ गंगा ने हिन्दू समाज में समरसता निर्माण करने का जो प्रशंसनीय कार्य किया है, उसकी सराहना स्वयं गाँधी जी एवं डॉ० अम्बेडकर ने की है। संघ के प्रारम्भिक वर्षों में महाराष्ट्र के चितपावन ब्राह्मणों के मध्य अस्पृश्यता की घातक दीवार को ढहाना एक आश्चर्यजनक कार्य से कम नहीं है। किन्तु मौन तपस्वी डॉ० हेडगेवार ने इसे व्यवहार से चरितार्थ कर दिखाने का चमत्कार किया है। फलस्वरूप अब तो हिन्दू समाज के धर्माचार्यों ने भी एक स्वर में 'न हिन्दू पतितो भवेत्' का उद्घोष कर राष्ट्र की एकजुटता में अपना महत्वपूर्ण योगदान किया है जोकि संघ के प्रयासों से ही संभव हो सका है।

□

॥ श्रीः ॥

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

(प्रधान कार्यालय – नागपुर)

डॉ. हेडगेवार भवन, महाल, नागपुर – ४४० ००२

दूरभाष : ७२३००३ / ७२०१५० फैक्स : ७२१५८६

सरसंघचालक : कुप्.सी. सुदर्शन **सरकार्यवाह : मोहन भागवत**

केशवकुंज, झंडेवाला, देशबन्धु गुप्ता मार्ग, नई दिल्ली–११० ०५५

दूरभाष : ३६७०३६५ / ३६१५८५४ फैक्स : ३५१७७२२

पत्र क्र. : .... दिनांक : २८–६–२००० तिथि : आश्विन शुक्ल १ युगाब्द ५१०२

आदरणीय डॉ. गौरीनाथ जी,

सादर सप्रेम नमस्कार।

विश्व संवाद केन्द्र के 'संघ सरिता' विशेषांक की सूचना पाकर अपार हर्ष हुआ। विश्व के खोये संतुलन को पुनः प्रस्थापित कर नये युगधर्म को सृष्टि परिचालित करने के लिए, धर्मचक्र प्रवर्तन के लिए संघ का ईश्वरीय कार्य भारत में स्फुरित हुआ। उसके युगांतरकारी नित्यवर्धिष्णु रूप के विभिन्न पहलुओं को हिन्दी पाठकों के सामने सामयिक संदर्भों में रखने का कार्य विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका ने पहले भी कई बार किया है। उसी कड़ी में यह 'संघ सरिता' विशेषांक भी बड़ा महत्त्वपूर्ण होगा यह विश्वास है।

विशेषांक तथा सम्पादनकर्ताओं को अनेकों शुभकामनाएँ।

आपका

(मोहन भागवत)

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

केन्द्र : नागपुर

डा० हेडगेवार भवन,
नागपुर : २
दूरभाष : ७२३००३, ७२०१५०

केशव कुंज, झण्डेवाला,
देशबन्धु गुप्त मार्ग,
नई दिल्ली, ११००५५
दूरभाष : ३६७०३६५, ३६१५८५४

तिथि : स्थान : दिनांक : आश्विन शु. १०

परम मित्र श्री गौरीनाथ जी रस्तोगी,

सप्रेम नमस्कार !

यह जानकर अतीव प्रसन्नता हुई कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ७५ वर्ष पूर्ण होने के प्रेरणादायी सन्दर्भ की प्रासांगिकता को ध्यान में रखकर लखनऊ के विश्व संवाद केन्द्र ने 'संघ सरिता' नाम से एक विशेषांक प्रकाशित करने का निश्चय किया है।

जिस तेज गति से आपके वि० सं० केन्द्र के वार्ता–पत्रों का पत्रकार जगत में व्यापक स्वागत हो रहा है उससे यह बात स्पष्ट हो रही है कि जनता में अपने देश की गतिविधियों के बारे में राष्ट्रीय दृष्टि से महत्व रखने वाले सत्यनिष्ठ समाचारों और विचारों की तीव्र भूख है। खास तौर पर निहित स्वार्थ प्रेरित, विकृत और कपोल–कल्पित समाचारों का निर्भयतापूर्वक पर्दाफाश करने की आज तीव्र आवश्यकता है। अपने देश की एकता और अखण्डता को छिन्न–भिन्न करने के षड्यन्त्र में लगी हुई अंतर–बाह्य सभी शत्रु–शक्तियों को प्रोत्साहन भी ऐसे समाचारों से मिलता रहा है। इतना ही नहीं, विश्व की आँखों में भारत की छवि को धूमिल करने का कार्य भी यही शक्तियाँ करती हैं।

रा०स्व०संघ की बढ़ती हुई शक्ति और प्रभाव से ऐसे देश विघातक शक्तियों को सिंहस्वप्न जैसे लगना स्वाभाविक है। साथ ही संघ स्वयंसेवकों से प्रेरित तेजस्वी हिन्दू संगठनों को अपने दुष्ट प्रचार का लक्ष्य बनाना भी स्वाभाविक है। इसलिए संघ के बारे में वस्तुस्थिति जानने की आज जनता की उत्सुकता भी तेजी से बढ़ रही है।

ऐसी सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखकर 'संघ सरिता' को अत्यन्त रोचक और उद्‌बोधक ढंग से सुसज्जित करने में आप सफल हों, ऐसी प्रभु चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

आपका

ह.वे. शेषाद्रि

(हो.वे. शेषाद्रि)

।। ओऽम् नमो भगवते गोरक्षनाथाय ।।

एस.टी.डी. – ०५५१
२५५४५३
☎ २५५४५४
२५५४५५

श्री गोरखनाथ मन्दिर

महन्त अवेद्यनाथ
पूर्व संसद सदस्य (लोकसभा)

गोरखपुर–२७३०१५

क्रमांक ....

दिनांक : १८–६–२०००

प्रिय डॉ. गौरीनाथ रस्तोगी,

शुभाशीर्वाद।

आपका पत्र मिला। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि विश्व संवाद केन्द्र लखनऊ की पत्रिका विश्व संवाद केन्द्र का वर्ष २ अंक ३ का प्रकाशन आगामी विजयादशमी के अवसर पर ७ अक्टूबर, २००० को 'संघ सरिता अंक' के रूप में प्रकाशित होने जा रही है। इस समय जब विश्व के समस्त देश एक–दूसरे के बहुत समीप हो गये हैं ऐसे समय में आपकी पत्रिका पाठकों के लिए बहुत उपयोगी साबित होगी।

पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु मेरी शुभकामना है।

शुभेच्छु

(महन्त अवेद्यनाथ)

डॉ. गौरीनाथ रस्तोगी,
सम्पादक,
विश्व संवाद केन्द्र
डी–२, पार्क रोड ६, लखनऊ

हिन्दू राष्ट्र के विचार का औचित्य

हिन्दू राष्ट्र एक आधारभूत सिद्धान्त है। यह हमारे लिए दृढ़ निष्ठा और आस्था दोनों का विषय है। स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द, लोकमान्य तिलक, स्वातंत्र्यवीर सावरकर, महाकवि सुब्रह्मण्यम भारती जैसे अनेक मनीषियों ने इस राष्ट्र की हिन्दू राष्ट्र के रूप में उदघोषणा की है। पश्चिमी जगत से आयी प्रबुद्ध प्रतिभाएँ डा० ऐनी बेसेंट, भगिनी निवेदिता और श्री माँ (पांडिचेरी) ने भी इसे हिन्दू राष्ट्र घोषित किया है। महात्मा गांधी ने 'हिन्दूधर्म' नामक पुस्तक के पृष्ठ ३४ पर असंदिग्ध शब्दों में लिखा है– **"हिन्दुत्व ही हमारी राष्ट्रीयता का आधार था।"**

जीवन पद्धति का बोध

'हिन्दू' शब्द से भारत की जीवन पद्धति का बोध होता है। अंग्रेजों के आने से पहले यह देश 'हिन्दुस्थान' नाम से जाना जाता था। इसलिए अनेक राष्ट्रवादी पत्र–पत्रिकाएँ– हिन्दू या हिन्दुस्थान नाम से प्रारम्भ हुईं। आज भी सरकारी क्षेत्र में अनेक उद्योग : हिन्दुस्तान पेट्रोलियम, हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लि., हिन्दुस्तान मशीन टूल्स, हिन्दुस्तान कॉपर लि. आदि हैं। इन सभी स्थानों पर 'हिन्दू' शब्द राष्ट्रीयता, इस देश के संदर्भ में है, न कि किसी पूजा पद्धति विशेष के रूप में।

न्यायालय का निर्णय

भारत के उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने ११ दिसम्बर १९९५ को अपने एक ऐतिहासिक निर्णय में घोषित किया कि 'हिन्दुत्व' शब्द का कोई संकीर्ण अर्थ नहीं है। इसे संस्कृति से असम्बद्ध करके देखना आवश्यक नहीं है। 'हिन्दुत्व' का प्रमुख अर्थ है भारतीय जन की जीवन शैली न कि किसी हिन्दू–पंथ के लोगों के रीति रिवाज मात्र।

- संसार में किसी भी धर्मपंथी–बीज (रिलीजियस–क्रीड) के लिए जो कसौटियाँ लागू हो सकती हैं वे सब हिन्दू धर्म के लिए अपर्याप्त हैं।
- 'हिन्दुत्व' शब्द का प्रयोग किसी अन्य धर्म–पंथ के प्रति आक्रामक भाव, वैरभाव या असहिष्णु का सूचक नहीं है।

हिन्दू या हिन्दुत्व जैसे शब्द का प्रयोग धर्म के आधार पर वोट माँगने का भ्रष्ट तरीका नहीं कहा जा सकता। उच्चतम न्यायालय में 'मनोहर जोशी बनाम नितिन भाऊ पाटिल' के मुकदमे में न्यायमूर्ति जे.एस. वर्मा, न्यायमूर्ति एन.पी. सिंह तथा न्यायमूर्ति के. वेंकट–स्वामी की संविधान खण्ड पीठ ने सुनवाई के बाद अपने ६३ पृष्ठीय सर्वसम्मति निर्णय में घोषित किया कि हिन्दुत्व या हिन्दूवाद जैसे शब्दों का प्रयोग न तो साम्प्रदायिक है और न इस आधार पर वोट माँगना भ्रष्ट तरीका ही कहा जा सकता है।

निर्णय के महत्वपूर्ण अंश

- हिन्दू धर्म का अन्य धर्मों की तरह न कोई संस्थापक है, न एक ईश्वर है, न एक धार्मिक कर्मकाण्ड। इसे एक जीवन–दर्शन के अतिरिक्त कुछ नहीं कहा जा सकता है।

निर्णय में डा० राधाकृष्णन की पुस्तक 'इंडियन फिलासफी भाग–१ के पृष्ठ २२–२३ को उद्धृत करते हुए कहा गया है कि "इतिहास के सभी ज्ञात कालखण्ड और सभी परिस्थितियों में जिनमें भारत गुजरा है, एक स्पष्ट और विशिष्ट पहचान दृष्टिगत होती है। हिन्दू धर्म ने अपने सुनियोजित मनोवैज्ञानिक रुझान को दृढ़तापूर्वक अपनाये रखा और यह उसकी विशिष्ट विरासत भी बन गयी और यही भारतीय जन की मौलिक चारित्रिक विशेषता भी बनी रहेगी, जब तक उन्हें स्वतंत्र एवं पृथक जीवन जीने का सुअवसर प्राप्त होता रहेगा।"

हिन्दू धर्म की यह अनुभूति रही है कि सत्य के अनेक आयाम हैं, भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण सत्य के ही विभिन्न पक्ष हैं।

- संविधान निर्माताओं ने भी हिन्दू को पूजा पद्धति नहीं माना। इसलिए धर्म की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकारों की गारंटी देते हुए अनुच्छेद २५ में स्पष्ट कर दिया गया है खण्ड (२) के

संघ सरिता बह रही है

संघ सरिता बह रही है।
उस भगीरथ की अनोखी
विजय गाथा कह रही है।।धृ।।

भेद कर विस्तृत शिलायें
एक लघुधारा चली थी,
कन्दरा वन बीहड़ों को
चीर निर्भय वह बढ़ी थी
स्वर्ग गंगा बन महानद,
रूप अनुपम गह रही है।।
संघ सरिता ....

क्रूर बाधायें अनेकों
मार्ग कुंठित कर न पायीं।
क्रुद्ध शंकर की जटा में,
वह असीमित क्या समायी,
जन्हु की जंघा विदारी
जाह्नवी फिर चल पड़ी है।
संघ सरिता ....

कर सुसिंचित इस धरा को
सुजल–सुफला उर्वरा
मातृभू का, पुण्यभू का
रूप है इसने सँवारा,
शुष्क मरुभू शेष क्यों फिर
ताप भीषण सह रही है।
संघ सरिता ....

दूर सागर दृष्टि–पथ में,
मार्ग में विश्राम कैसा ?
ध्येय सागर से मिलन का,
आज संभ्रम सोच कैसा ?
अथक अविरत साधना की,
पुण्यगाथा कह रही है।
संघ सरिता ...

उपखण्ड (ख) में हिन्दू धर्म के अन्तर्गत सिख, जैन अथवा बौद्ध मत सम्मिलित हैं, और हिन्दू धार्मिक संस्थानों के संदर्भ में उपर्युक्त सभी अन्तर्निहित होंगे।

- 'कमिश्नर सम्पत्ति कर मद्रास एवं अन्य बनाम स्व० आर. श्रीधरन' एल.आर. (ए.आई.आर. १९६६ ए. जी. १११६) में मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति गजेन्द्रगडकर ने भी माना था कि सिन्धु नदी के तट पर विकसित सभ्यता से प्रारम्भ हुआ समाज हिन्दू है न कि पूजा पद्धति।
- 'डा० इस्माइल फारूखी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य' १९९४ (६) एस.सी.सी., पृ. ३६० (अयोध्या का मुकदमा) में न्यायमूर्ति भरुचा और न्यायमूर्ति अहमदी ने कहा– 'सामान्यतः हिन्दुत्व का जीवन दर्शन अथवा मानसिक स्थिति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं, यह सहिष्णु है। इस्लाम, ईसाई, पारसी, यहूदी, बौद्ध, जैन, सिख आदि मत के लोग इसीलिए इस देश में संरक्षण प्राप्त कर सके। अतः हिन्दुत्व का राष्ट्रीयता के अर्थ में प्रयोग हुआ है। अन्यों के प्रति वैमनस्य या शत्रुता या साम्प्रदायिकता का हिन्दुत्व पर आरोप लगाना उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अपमान समझा जाना चाहिए।

(सन्दर्भ : Meaning of sec. 123 (3) or 3 (A) of the Representation of people-s Act AIR 1996 S.C. 196 (199^) I.S.C.C. मनोहर जोशी बनाम भाऊराव पाटिल। □

राष्ट्र-रोग का मूल एवं उसका उपचार

□ श्री हो.वे. शेषाद्रि

डॉ. हेडगेवार के अभी कुछ ही समय पूर्व के राष्ट्रव्यापी जन्म–शताब्दी समारोहों के अवसर पर ही न केवल समूचा देश बल्कि अन्य देश भी उनके नाम से परिचित हुए हैं। इससे पूर्व इने–गिने लोगों ने ही उनका नाम सुना था और उनसे भी कम लोग यह जानते थे कि उनका जीवन कैसा था और किस प्रकार उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का गठन किया। किन्तु इसके विपरीत राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एक सुपरिचित नाम है। इसके दो कारण हैं। एक तो उसकी दैनिक शाखाएँ लगती हैं और दूसरे देश के कोने–कोने में स्वयंसेवक असंख्य गतिविधियाँ चला रहे हैं। विदेशों में भी अनेक देशों में, जहाँ स्वयंसेवक पहुँचे हैं, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का नाम फैला है।

राष्ट्रीय पुनर्जागरण के यज्ञ में डॉ. हेडगेवार ने जो अनोखी आहुति दी है, उसका अता–पता वस्तुतः इस ज्वलन्त वैषम्य में छिपा है।

आधारशिला का निर्माण

डॉ. हेडगेवार ज्वलंत देशभक्ति से उद्दीप्त ज्योतिपुंज थे। वे दीर्घ काल तक स्वाधीनता आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति में रहे– प्रारम्भ में क्रांतिकारी के रूप में और बाद में कांग्रेस में। जिस समय उन्होंने संघ के श्रीगणेश का निश्चय किया, वे मध्य प्रान्त के चोटी के कांग्रेसी नेताओं में से एक थे। लेकिन एक बार जब वे इस निष्कर्ष पर पहुँच गये कि दास बनाने वाले अंग्रेजों तथा धर्मान्ध मुस्लिम अलगाववाद की मिलीजुली चुनौती का सामना करने के लिए एक नितान्त भिन्न प्रकार का संगठन आवश्यक है, तो वे राजनीति तथा आन्दोलन के क्षेत्र से अलग हो गये और उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की। तत्पश्चात्, सन् १९३० के अल्प समय को छोड़कर जब उन्होंने सत्याग्रह में भाग लिया था और वे एक वर्ष कारावास में रहे थे, वे तन–मन की सम्पूर्ण शक्ति से संघ के निर्माण में जुट गये। उनका उद्देश्य था कि एक समरस, सशक्त तथा सुसंगठित इकाई के रूप में हिन्दू समाज का पुनर्गठन किया जाये। प्रचार और प्रसिद्धि की चकाचौंध से वे दूर ही रहे। उन्होंने शाखाओं की श्रृंखला के विस्तार और सुदृढ़ीकरण पर अपना ध्यान केन्द्रित किया।

दृष्टिकोण की इस नितांत एवं निर्णायक भिन्नता के पीछे उनकी यह अडिग मूल आस्था थी कि केवल सुसंगठित तथा सशक्त हिन्दू समाज ही विश्वसनीय राष्ट्रीय शक्ति के रूप में ब्रिटिश–मुस्लिम गठबंधन की चुनौती का सामना कर सकता है और देश की एकता तथा स्वाधीनता को बनाये रख सकता है। वास्तव में अब तक राष्ट्रीय पुनर्जागरण आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति का प्रत्येक नेता भलीभाँति इस बात की आवश्यकता अनुभव कर चुका था कि हिन्दुओं को घुन की भाँति खाने वाली आन्तरिक दुर्बलताओं से मुक्त कराया जाये, उन्हें सुग्रथित समष्टि के रूप में संगठित किया जाये और उनमें ऐसी उत्कट भावना का पुनः संचार किया जाये कि वे अपनी उदात्त सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक चिति पर आग्रह कर सकें। तथापि यह कार्य डॉ. हेडगेवार की संगठनात्मक प्रतिभा पर छोड़ दिया गया कि वे इस महान् स्वप्न को साकार करने की व्यवहारिक विद्या की संकल्पना करें।

यह तथ्य है कि विगत ७५ वर्षों में संघ ने जिस समर्थ संगठित हिन्दू शक्ति का निर्माण किया है, वह अब राष्ट्रीय प्रासाद के विशाल परकोटे के रूप में खड़ी है और इस बात का जीवंत प्रमाण है कि डॉ. हेडगेवार ने अचूक विद्या का विकास किया था। एक–दो बार नहीं, बारम्बार संघ के लाखों स्वयंसेवक राष्ट्र की स्वाधीनता, सम्मान तथा अखण्डता की सुरक्षा हेतु जन–शक्ति को एकजुट करने के लिए प्रेरणा के चलते–फिरते स्रोत सिद्ध हुए हैं। एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी के अनुसार "हमारे देश के सिर पर उनकी अदृश्य छत्रछाया है।" सामान्य हिन्दू की राजनीतिक तथा अन्य सम्बद्धताएँ चाहे जो कुछ भी हों, वह अब यह अनुभव करने लगा है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रतीक रूप में सजग पुनरुत्थानवादी हिन्दुत्व आज जीवन

के हर क्षेत्र में राष्ट्र को राष्ट्रीय सत्प्रयास के उत्तुंग गौरव–शिखरों की ओर ले जा रहा है।

इस संबंध में हिन्दू मानस में संघ ने जो परिवर्तन किया है, वह वास्तव में श्लाघ्य है। जब संघ की स्थापना की गयी थी, तब सामान्य हिन्दू हताश था। वह स्वयं को नितांत असहाय अनुभव करता था और संगठित तथा आत्माभिमानी सामाजिक इकाई के रूप में खड़े होने की उसकी इच्छा और विश्वास मर चुका था। बाध्य होकर गांधी जी को भी एक बार यह कहना पड़ा था कि 'सामान्य हिन्दू कायर है और मुसलमान धोखेबाज'। किन्तु अब स्थिति ने वस्तुतः नितांत नवीन रूप धारण कर लिया है। समूचे देश को आप्लावित करने वाली हिन्दू लहर उस आत्मविश्वास तथा गौरव के पुनर्जागरण का ही प्रतीक है जो हिन्दू धमनियों में प्रवाहित हो रहा है। इससे बढ़कर राष्ट्र–सेवा और क्या हो सकती है कि उत्थान की उसकी इच्छा को पुनः जाग्रत कर दिया जाये और वह विजयोल्लास के साथ आगे बढ़ने लगे।

सच्ची राष्ट्रीय भावना का पुट

डॉ. हेडगेवार का दूसरा प्रमुख योगदान उनकी यह सफलता थी कि उन्होंने स्वाधीनता की संकल्पना में सच्ची राष्ट्रीय भावना का पुट दिया। उन दिनों स्वाधीनता–संघर्ष के नेता वैचारिक दुविधा के भँवर में फँसे हुए थे। एक ओर संघर्ष की माँग थी कि जनशक्ति को एकजुट करने के लिए अत्यावश्यक तीव्र राष्ट्रवाद की भावना को जाग्रत किया जाये तो दूसरी ओर मुस्लिमों को मनाकर संघर्ष की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रश्न था। अंग्रेज अपनी ओर से 'सत्ता–हस्तांतरण' का प्रलोभन बारम्बार इस शर्त पर दे रहे थे कि उससे पूर्व ही राष्ट्रवादी नेता मुस्लिमों के साथ समझौता कर लें। जैसे–जैसे समय बीतता गया, वैसे–वैसे मुस्लिम लीग के धर्मान्ध तथा सम्प्रदायवादी नेतृत्व की मनुहार के प्रयासों का पलड़ा भारी होता गया। राष्ट्रीय आस्था और प्रेरणा के हर निष्कलुष आदर्श की बलि चढ़ा दी गयी, क्योंकि लीग को उसके 'हिन्दू' रूप पर आपत्ति थी। विघटनकारी तथा सम्प्रदायवादी तत्त्वों को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने की प्रक्रिया को उलट दिया गया और शनैः-शनैः राष्ट्र की अपनी शक्ति क्षीण होती गयी। हमारे नेताओं की एकमेव सर्वभक्षी लालसा बन गयी कि अंग्रेज भारत छोड़कर चले जायें और सत्ता भारतीयों के हाथ में आ जाये। राजनीतिक सत्ता–प्राप्ति की तुलना में चिर–सम्मानित राष्ट्रीय लक्ष्य गौण हो गये। समूचा कार्य एक ऐसा राजनीतिक सौदा बनकर रह गया जिसके अधीन राष्ट्र–विरोधी विघटनकारी शक्तियों तथा हमारे राष्ट्रीय नेताओं के बीच सत्ता का बँटवारा होना था। सौदे में अपनी मातृभूमि का विखंडन भी सम्मिलित था।

नेतृत्व की कलुषित मानसिकता

कैसा दुर्भाग्य ! १९४७ में विभाजन का भयंकर मूल्य चुकाने के बाद भी हमारे देश के राजनीतिक नेतृत्व का मानसिक ढाँचा ज्यों का त्यों रहा है। राष्ट्रीय जीवन के मंच के केन्द्र पर अब भी राजनीतिक सत्ता का प्रभुत्व बना हुआ है। जहाँ १९४७ से पूर्व उद्देश्य स्वाधीनता प्राप्त करना था, वहाँ अब केवल यही उद्देश्य रह गया है कि अपने और अपने दल के लिए सत्ता हथिया ली जाये। किन्तु राजनीतिक नेतृत्व को अब भी इस मनोग्रंथि ने जकड़ रखा है कि मुस्लिम समर्थन के बिना सत्ता प्राप्त नहीं की जा सकती, और उसके कारण स्थिति ज्यों की त्यों बनी है। समग्र रूप से राष्ट्रीय दल और राजनेता कट्टरपंथी मुस्लिम तत्त्वों की चिरौरी करके उनकी पृथकतावादी तथा आक्रामकतावादी भूख को शांत करते रहे हैं। इसके फलस्वरूप राष्ट्रवाद की सच्ची भावना से देश की राजनीति का विनाशकारी संबंध विच्छेद होता रहा है। इसके कारण स्वयं हमारी स्वाधीनता ही दिशाहीन हो गयी है और उसका कोई उद्देश्य नहीं रह गया है।

हमारी स्वाधीनता के अग्रदूतों और प्रणेताओं ने राजनीतिक स्वाधीनता की संकल्पना किसी अंतिम लक्ष्य के रूप में नहीं की थी वरन् उन्होंने तो सोचा था कि वह राष्ट्र को उसकी प्राचीन विलक्षण प्रतिभा का चतुर्दिक विकास करने का अवसर प्रदान करेगी। किन्तु सच्चे राष्ट्रवाद के सूर्य को तो निरंकुश राजनीति के राहु–केतु ने ग्रस लिया है और उसके कारण भारत जीवन के हर क्षेत्र में अन्य राष्ट्रों की भोंडी नकल बनकर रह गया है।

भयंकर दुष्परिणामों का पूर्वाभास

परिणाम हम सबके सामने है। लोगों के मुख–मण्डल से सच्ची स्वाधीनता का ओज लुप्त हो गया है। जीवन के हर क्षेत्र में राजनीत्ति की घुसपैठ हो गयी है। समाचार–जगत् में राजनेताओं की जोड़तोड़ की चटपटी कहानियों की भरमार है। सभी का केन्द्र–

बिन्दु है राजसत्ता। राजनेता लोगों से चिकने–चुपड़े वादे करते हैं, वे भी बस अधिकाधिक आर्थिक प्रलोभनों के होते हैं। कहीं भी जीवन के उच्चतर मूल्यों का आह्वान नहीं होता। वास्तव में राजनेताओं की दृष्टि तो सत्ता पर गड़ी रहती है। अतः उनमें वैसे उच्च नैतिक स्वर में बोलने का साहस नहीं होता। जन–साधारण के सामने कोई उच्चतर राष्ट्रीय प्रयोजन नहीं रह गया है। वह भी अपनी–अपनी सीमित क्षमता के भीतर अवसर का पूरा–पूरा लाभ उठाने का प्रयास कर रहा है। उभरती पीढ़ी अर्थात् छात्रवर्ग भी इस पागलपन का शिकार हो गया है। यह राष्ट्र के भविष्य के लिए भयंकर दुष्परिणामों का पूर्वाभास है।

डॉ. हेडगेवार ने राष्ट्रवाद के सारतत्त्व पर स्पष्टतः बल देकर राष्ट्र की जड़ों के प्रति राजनीति की वैचारिक विमुखता को समाप्त करने का प्रयास किया। उनका यह स्पष्ट मत था कि स्वाधीनता की पताका के तले हिन्दू आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक संचेतना के अनुरूप राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के सभी पक्षों के बारे में मार्गदर्शी सिद्धान्त निश्चित किये जायें। उन्होंने कहा था कि केवल भौगोलिक इकाई को राष्ट्र नहीं कहा जा सकता। अब स्वाधीनता के आगमन के साथ स्वयंसेवकों के प्रयासों के कारण जीवन के सभी क्षेत्रों में ढेर सारी गतिविधियाँ होने लगी हैं और संगठन खड़े हो गये हैं। उन सभी ने उस रचनात्मक दर्शन से प्रेरणा ग्रहण की। शिक्षा, श्रम, कृषि, समाज–सुधार आदि के विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे इन प्रयासों के वातावरण में ही हम भारत–भूमि की अन्तर्जात प्रतिभा तथा मूल्यों की स्वच्छ तथा जीवनदायिनी प्राणवायु का सेवन कर सकते हैं।

सत्ता बनाम मानव

डॉ. हेडगेवार का तीसरा अति महत्त्वपूर्ण योगदान ऐसा है जिसकी ओर सभी राष्ट्रों की भ्रातृमण्डली को भी ध्यान देना चाहिए। सम्पूर्ण विश्व में सरकार का ढाँचा जो भी हो, चाहे कम्युनिस्ट हो या लोकतांत्रिक, राज्य–सत्ता ही वह प्रमुख साधन है जिसे सम्बद्ध राष्ट्रों के भाग्य को सँवारने की शक्ति प्रदान की जाती है। जहाँ कम्युनिस्ट व्यवस्था में सत्ता–संकेन्द्रण पूर्ण तथा निरंकुश होता है, वहाँ लोकतंत्र में जनता को उसमें सहभागी बनाया जाता है। किन्तु दोनों ही प्रणालियों में जन–मानस का नियमन करने वाली प्रधान प्रेरणाएँ राजनीतिक तथा आर्थिक होती हैं। इन दो प्रधान भौतिकवादी शक्तियों के जोड़–तोड़ से ही जनता को और अधिक सुखी बनाने का प्रयास किया जाता है।

मानव को गौरवपूर्ण स्थान

किन्तु हिन्दू विचारधारा तथा परम्परा ने गौरवपूर्ण स्थान 'मानव' को दिया है, सत्ता को नहीं। यहाँ साधारणतम से लेकर उच्चतम स्तर तक समाज के हर व्यक्ति के नैतिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक संस्कारों को सुदृढ़ करने पर पूर्ण बल दिया गया। स्वयं शासक को भी इस चरित्र–निर्माण का कठोर प्रशिक्षण लेना पड़ता था। सर्वोच्च मानवीय मूल्यों के पल्लवन एवं प्रस्फुटन की इस परम्परा ने ही सहस्त्रों वर्षों तक हिन्दू राष्ट्र को सम्पूर्ण मानवता की सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक जननी होने का गौरव प्रदान किया था।

स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में "मानव–निर्माण" का यह कठिन कार्य ऐसा नहीं है जिसे सम्पन्न करने की आशा सरकार से की जा सके। आर्थिक अथवा राजनीतिक सत्ता नहीं वरन् वास्तविक जीवन में समाज–कल्याण हेतु स्वार्थ–त्याग, चरित्र, सेवाव्रत के ज्वलंत उदाहरण तथा सर्वोच्च जीवन–मूल्य ही जनसाधारण को उसके भीतर उन्हीं गुणों को प्रतिष्ठित करने की प्रेरणा दे सकते हैं। समाज में सर्वाधिक दीन–हीन के लिए न्याय, सुख तथा स्वाधीनता सुनिश्चित करने की सबसे पक्की प्रत्याभूति (गारंटी) वस्तुतः ऐसी परिस्थितियों में ही दी जा सकती है जहाँ जीवन के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि हर क्षेत्र का नियमन सर्वाधिक उदात्त सामाजिक तथा आध्यात्मिक उमंगों से अनुप्राणित मानव करेंगे। एक प्रसिद्ध उक्ति है कि "सरकार कैसी हो, इसके बारे में मूर्खों को विवाद करने दो, वास्तव में सरकार वही सर्वोत्तम है जिसका प्रबन्ध सर्वोत्तम हो", वह केवल यही संकेत देती है कि प्रबंध चलाने वाले मानवों की गुणबत्ता तथा सदाशयता ही एकमात्र महत्त्वपूर्ण कसौटी है। यह भी ठीक वैसे ही अनुभव का विषय है कि यदि समाज सजग, संगठित तथा मूल्य–प्रेमी न हो तो शासक भी भ्रष्ट, अदक्ष तथा स्वेच्छाचारी होने लगते हैं जैसा कि आज हमारे देश में हुआ है।

नाम और दाम से काम नहीं

क्या कारण था कि डॉ. हेडगेवार स्वयं राजनीति के मंच से हट गये और चुपचाप चरित्र–निर्माण के कठोर कार्य में जुट गये ? इसका उत्तर इस तथ्य में निहित है कि राष्ट्र के भौतिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्रों में सच्चे राष्ट्रीय पुनर्जागरण के बारे में

इस मूल दृष्टिकोण और कार्यपद्धति की उनको स्पष्ट कल्पना थी। १९३४ में जब गांधी जी वर्धा में संघ का युवक–शिविर देखने गये थे तो बाद में उन्होंने स्वयं कहा था कि स्वयंसेवकों के अनुशासन, कठोर श्रम, सामाजिक समता तथा आदर्शवाद की भावना का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। बाद में जब डॉ. हेडगेवार से गांधीजी की भेंट हुई तो उन्होंने हेडगेवार जी से पूछा कि किस कारण उन्होंने कांग्रेस में रहते हुए वालिंटियर संगठन खड़ा करने के स्थान पर एक नये वालिंटियर संगठन की स्थापना का निश्चय किया और यह भी कि कहीं पैसे की कमी तो उनके कार्य में बाधक नहीं बन रही ? डॉ. हेडगेवार ने उत्तर दिया कि 'स्वयंसेवक' संबंधी उनकी संकल्पना राजनीतिक दल के अधीन काम करने वाले 'वालिंटियर' से मूलतः भिन्न थी। उन्होंने कहा कि संघ ऐसे स्वयंसेवक ढालने का प्रयास कर रहा है जिनमें राष्ट्र के कल्याण के लिए निःस्वार्थ सेवा के संस्कार कूट–कूट कर भरे हों और जो किसी भी प्रकार के प्रतिदान की आशा न करें। नाम और दाम से भला उन्हें क्या काम !

सत्ता के द्वारा नहीं बल्कि 'मानव' के द्वारा राष्ट्रीय पुनर्जागरण के इस महान् स्वप्न को साकार करने में डॉ. हेडगेवार ने जो अनोखी सफलता प्राप्त की, वह अब सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रही है। जिस 'शाखा' की विधा को उन्होंने विकसित किया, वह ऐसे सेवाव्रती आदर्शवादियों के लालन–पालन का अति सक्रिय तथा सृजनात्मक केन्द्र बनी हुई है जो हमारे राष्ट्रीय जीवन के हर क्षेत्र में निस्वार्थ सेवा, चरित्र, अनुशासन तथा विशुद्ध राष्ट्रीय आदर्शों के प्रति प्रतिबद्धता की स्वच्छ वायु का संचार कर रही है। ऐसे जीवन–मूल्यों तथा सद्‌गुणों के प्रति, जिनके लिए हमारा अति प्राचीन तथा महान् भारतवर्ष सर्वत्र विख्यात है, तेजी से पनपता हुआ चतुर्दिक् आग्रह, आशा तथा विश्वास से चिर आलोकित प्रकाश–स्तम्भ के रूप में उसके महान्, उज्ज्वल भविष्य का द्योतक है।

संक्षेप में, आधुनिक भारत में राष्ट्रीय पुनर्जागरण लाने में डॉ. हेडगेवार की विशिष्ट भूमिका रही है। जैसे–जैसे समय बीत रहा है, उनके विचार तथा प्रयास और अधिक सार्थक एवं मुखर होते जा रहे हैं। उनके जीवन का ज्वलंत उदाहरण अधिकाधिक नर–नारियों को यह प्रेरणा देता रहा है कि वे उस पथ का अनुसरण करें जो उन्होंने राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत दर्शन को साकार रूप देने के लिए धर्मयोद्धा जैसी अटूट लगन से प्रशस्त किया है।

मूल्यांकन

प्रस्तुत है तमिलनाडु के एक प्रसिद्ध महारथी का विचार जो उनकी दृष्टि में डॉ. हेडगेवार की महानता को साररूप में दर्शाता है– **"मुझे स्वामी विवेकानंद की महानता का बोध उनकी लिखी रचनाओं द्वारा हुआ, गांधीजी की महानता का बोध उनसे भेंट करने पर हुआ, पर डॉ. हेडगेवार से मैंने न तो भेंट की थी और न ही उनकी पुस्तकें पढ़ीं थीं; उनकी महानता की अनुभूति मुझे संघ के कार्यकर्त्ताओं को देखकर हुई।"**

भला डॉ. हेडगेवार के जीवन और ध्येय का इससे अधिक सशक्त तथा सुस्पष्ट मूल्यांकन और क्या हो सकता है ?

□

भ्रातृ-स्नेह लाया हूँ

एक वृद्ध व्यक्ति ने सभा में खड़े होकर पूछा : "श्रीमान्, आप हमारे लिए क्या लाये हैं ?" स्थान था बंगलौर की एक मलिन बस्ती और वहाँ बड़े–बूढ़ों को संघ के एक वरिष्ठ प्रचारक से भेंट के लिए आमंत्रित किया गया था। अन्य लोगों ने भी उत्सुकता से प्रचारक की ओर देखा। किन्तु प्रचारक के उत्तर को सुनकर वे स्तब्ध रह गये :

"मैं स्वयं भिक्षुक हूँ। मैं आपको क्या दे सकता हूँ ? मैं आपको अपना भाई–बन्धु समझकर आपसे यहाँ मिलने तथा बात करने आया हूँ। यही भ्रातृ–स्नेह मैं आपके लिए लाया हूँ।"

वयोवृद्ध प्रश्नकर्त्ता ने धीरे से कहा– "श्रीमन्, कृपया प्रश्न के लिए मुझे क्षमा करें। जीवन भर हमने देखा है कि नेता हमारे पास आते हैं और हमें बिजली, पीने का पानी, धन आदि देने का वचन देते हैं। यह पहला अवसर है जब आप स्नेह लेकर हमारे पास आये हैं और हमें मानव–प्राणी की प्रतिष्ठा दे रहे हैं।" ऐसा कहते–कहते उसके नेत्रों में अश्रुओं का सागर लहराने लगा।

संघ सरिता के भगीरथ

□ रामशंकर अग्निहोत्री

मनुष्य निर्माण का कार्य क्या कोई सरल बात है? इस कार्य की कल्पना करते ही साक्षात परमात्मा स्वरूप विभूतियों का स्मरण हो आता है। प्राचीन वैदिक गुरुकुलों की झांकी उपस्थित हो जाती है। तक्षशिला, नालन्दा के विद्यापीठ स्मरण हो आते हैं। बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य, परमहंस देव, तक अनेक महापुरुषों के जीवन आँखों के सामने तैरने लगते हैं। इन सभी ने भी तो श्रेष्ठ जीवन मूल्यों की शिक्षा लोगों को दी। इनके पुण्य प्रताप और इनकी तपस्या से ही भारत कितने ही झंझावातों में अविचल "भारत" रह सका। युगानुरूप परिवर्तन होते रहे, हिन्दू जीवन मूल्यों की साधना होती रही। भीषण आपत्तियाँ आयीं। विदेशी आक्रमणकारियों ने भारत को रौंद डालने में कोर–कसर नहीं रखी। फिर भी दुनिया आश्चर्य–चकित सी सदैव ठगी–ठगी निहारती रही। भारत की कालजयी प्रज्ञा इन साधु सन्तों, आचार्यों, मनीषियों और शूरवीर रणबांकुरों ने हर समय प्रज्वलित रखी।

सम्पूर्ण भारतवर्ष में या किसी क्षेत्र विशेष में काल परिस्थिति के अनुसार इन महापुरुषों के द्वारा मनुष्य निर्माण का यह कार्य अबाधित होता रहा। हिन्दू समाज का अस्तित्व बना रहा।

डॉ. हेडगेवार जी ने इसी मनुष्य निर्माण के कार्य का बीड़ा उठाया तो उन्होंने आराध्यदेव के नाते इसी सनातन हिन्दू राष्ट्र को अपने हृदय में प्रतिष्ठापित किया।

कुल पूँजी

राष्ट्र रूपी यह आराध्य देव ही उनकी कुल पूँजी थी जिसके आधार पर उन्होंनें मनुष्य–निर्माण का महाकठिन कार्य करने का निश्चय किया। अन्यथा डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार के पास इन महापुरुषों की तुलना में कुछ भी क्या था? कम से कम दिखाई तो नहीं देता। संभवतः इन महापुरुषों जैसी साधना वे पूर्वजन्म में ही कर चुके हों। जो हो, इतना सत्य है कि उन्होंने अपने महापुरुषत्व वाले भाग को कभी प्रकट नहीं किया। उनका अलौकिकत्व उनके कार्य में ही दिखाई दिया। उन्होंने मनुष्य निर्माण के कार्य को 'हिन्दू समाज का संगठन' नाम से परिचय कराया। अपनी समस्त शक्ति, बुद्धि, प्रतिभा हिन्दू समाज को संगठित करने के कार्य में झोंक दी। इस कार्य के साथ वे इतने एकाकार हो गये कि एक के बिना दूसरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

राष्ट्र से एकाकार

राष्ट्रदेवता के साथ उनका एकाकार होना ही उनकी सबसे बड़ी विलक्षणता है। उनका जन्मजात राष्ट्र प्रेम का भाव ही वह अलौकिकत्व है, जो यह दर्शाता है कि वे जन्म–जन्मान्तर से इस हिन्दू राष्ट्र की आराधना, साधना और तपस्या में लगे रहे हैं। अन्यथा क्या कारण है कि अपनी बाल्यावस्था में ही वे राष्ट्र की दुःख–दैन्य, निराशा, कातरता और गुलामी को देखकर बेचैन हो उठे। २२ जून १८९७ को अंग्रेजों की महारानी विक्टोरिया के राज को ६० वर्ष पूर्ण हुए थे। इसी का समारोह था। भारत अंग्रेजों का गुलाम था। इसलिए विक्टोरिया के राज्यारोहण के साठ वर्ष पूर्ण होने का यह समारोह भारत में भी धूमधाम से मनाया गया। स्कूलों में मिठाई के दोने बाँटे गये। तब डॉ. हेडगेवार की आयु थी केवल नौ वर्ष की। उनके स्कूल में भी मिठाई बँटी। बालक केशव मिठाई का दोना लेकर घर आया। उसने कूड़े के ढेर में मिठाई फेंक दी और बड़ी बेचैनी अनुभव करता हुआ घर के एक कोने में उदास सा बैठ गया। मिठाई क्यों फेंक दी? यह पूछे जाने पर उसने छोटा सा

उत्तर दिया कि "अपने राजा के राज्य को जीतने वाले राजा के समारोह में आनंद कैसा ?" जरूर मिठाई बाँटते समय स्कूल में यह बताया गया होगा कि रानी विक्टोरिया के राजगद्दी पर बैठने के ६० वर्ष पूरे हो चुके हैं और इसी खुशी में मिठाई बाँटी जा रही है। शायद स्कूल के हेडमास्टर ने मिठाई बाँटते समय महारानी विक्टोरिया को धन्यवाद व्यक्त किया होगा। हो सकता है उस दिन GOD SAVE THE QUEEN वाला अंग्रेजी गाना भी गाया गया हो। परन्तु यह सब केशव के लिए नहीं था। अन्य विद्यार्थियों की तरह बालक केशव भी यदि मिठाई खाता और खुश होता तो कोई अस्वाभाविक बात नहीं होती। परन्तु यह बात कि बाल केशव के हृदय को गुलामी की ठेस पहुँची, क्यों घटित हुई ? आखिर किसने उसे राष्ट्र–प्रेम की शिक्षा दी ? जैसा कि मिठाई बांटने के इस समारोह से प्रकट है, स्कूल में वैसी शिक्षा मिलना असंभव बात है। तब क्या केशव के इस उत्कट देशप्रेम का श्रेय तत्कालीन सामाजिक वातावरण या परिवार को मिलना चाहिए ?

यह सही है कि केशव के पिता पं. बलिराम पंत हेडगेवार नागपुर में श्रेष्ठ विद्वान् के नाते विख्यात थे। कुल परम्परा से चले आए वेदाध्ययन के साथ–साथ पं. बलिराम पंत हेडगेवार ने अपने सबसे बड़े पुत्र महादेव शास्त्री को काशीनगरी में वेदाध्ययन के लिए भेजा था। पिता बलिराम पंत और माता रेवतीबाई के स्नेहपूर्ण कठोर अनुशासन में केशव को भी संध्या पूजा, रुद्रपाठ आदि नित्य नियम से सीखने को मिले थे। वेद पाठन में केशव के शुद्ध उच्चारण से न केवल माता–पिता और बड़े भाई महादेव वरन् अन्य पुरोहित भी गद्गद् हो जाते थे।

यह समय लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक द्वारा की गई "स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" घोषणा से निनादित हो रहा था। बाल केशव भी तिलक जी द्वारा सम्पादित "केसरी" पढ़ा करता था। क्रांतिकारी गतिविधियों की गूँज भी उसके कानों पर पड़ती थी।

राष्ट्र की कसक

फिर भी गुलामी को इतनी तीव्र घृणा की दृष्टि से देखने की प्रखरता और देश की आजादी के लिए कुछ करने की राष्ट्रभक्तिपूर्ण इच्छा–शक्ति इस बाल्यकाल में ही केशव ने परिवार से पाई हो, यह कहना जरा कठिन सी बात है। कारण पं. बलिराम पंत का जीवन तेजस्वी होने के बावजूद परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। निर्धनता की मार जिस परिवार पर पड़ रही हो उसमें ऐसी बातें सहज नहीं आ सकतीं। ऐसे परिवारों में तो उन दिनों पढ़–लिखकर अंग्रेजों की नौकरी करने की प्रवृत्ति ही अधिक थी। केशव के मन में भी वही विचार आते तो अस्वाभाविक नहीं कहा जाता। परन्तु केशव का मन तो इन बातों के ही विरुद्ध बगावत के लिए उन्हें आन्दोलित कर रहा था। सन् १६०१ में इंग्लैण्ड के बादशाह एडवर्ड सप्तम का राज्यारोहण हुआ और इस बार नागपुर में जोरदार आतिशबाजी का आयोजन हुआ। परन्तु उस समय भी केशव ने आनन्द मनाने से इंकार कर दिया। उसने अपने मित्रों से कहा कि "विदेशी राजा का राज्यारोहण उत्सव मनाना हमारे लिए लज्जा का विषय है।"

वह समय था जब दुनिया में अंग्रेजों का डंका बज रहा था। उनके साम्राज्य के बारे में कहा जा रहा था कि अंग्रेजों का राज्य इतना बड़ा है कि उसमें सूरज नहीं डूबता। भारत में भी अंग्रेज पूरी तरह पैर जमा चुके थे। देशी राजे–रजवाड़े उनकी कठपुतली थे। सन् १८५७ का स्वातंत्र्य युद्ध विफल होने के बाद अंग्रेजों ने कठोर दमनचक्र चला रखा था।

ऐसे समय में राष्ट्रप्रेम की ज्योति अपने हृदय में प्रज्वलित करना और स्वयं को राष्ट्रोद्धार के कठिनतम कार्य के लिए समर्पित कर देना किसी बालक के लिए सहज नहीं कहा जा सकता।

इसलिए अधिक से अधिक इतना कहा जा सकता है कि केशव ने पूज्य माता–पिता से अपनी धर्म–संस्कृति में प्रगाढ़ श्रद्धा और स्वाभिमान के संस्कार पाये थे और उन दिनों देश की आजादी के लिए चल रहे आन्दोलनों तथा अंग्रेजों के अत्याचारों के वातावरण ने उसकी देशभक्ति की भावना को झकझोरा था। भोंसले राजा का राज्य अंग्रेजों ने कपटपूर्ण ढंग से हड़प लिया था। इस कारण बाल केशव ने नागपुर में भगवा ध्वज को तिरस्कृत होते देखा था। और बाल्यकाल में ही ऐसे सारे प्रश्न उन्हें बेचैन करने लगे थे कि क्या कारण है जो सात समुन्दर पार से मुट्ठी भर अंग्रेज आकर यहाँ राज करने लगे हैं। ये बातें, उन दिनों आमचर्चा के विषय जरूर थे।

मार्गदर्शक अथवा गुरु

परन्तु अपने राष्ट्र को स्वतंत्र

और वैभवपूर्ण बनाने के लिए केवल अपने बलबूते पर कार्य करने का उनका संकल्प ऐसी बात है जो उन्हें कहीं बाहर से प्राप्त हुई दिखाई नहीं देती। उनका मार्गदर्शक या गुरु दिखाई नहीं देता। जब उन्होंने नागपुर के सीताबर्डी किले पर फहरा रहे अंग्रेजों के यूनियन जैक झंडे को उखाड़ फेंकने का बाल सुलभ भोला प्रयास किया तब उन्हें किसने प्रेरित किया था? तब वे और उनके साथी, वझे गुरुजी के घर पढ़ने के लिए ही तो एकत्रित होते थे। केशव ने बाल–मित्रों के साथ गुप्त मंत्रणा कर वझे गुरुजी के घर में एक सुरंग खोदना प्रारंभ किया था। बालमंडली ने सोचा था कि जमीन के अन्दर सुरंग खोद कर सीताबर्डी किले तक पहुँचेंगे और यूनियन जैक उतार कर भगवा ध्वज फहरा देंगे। इस योजना के सूत्रधार बाल केशव ने तब ही अपनी जीवन दिशा प्रकट कर दी थी। परन्तु राष्ट्र को स्वतंत्र और वैभवपूर्ण देखने की उनकी इस उत्कट अभिलाषा की पूर्ति के लिए उनके पास क्या था? जिस बाल केशव को भोजन के लिए भी सप्ताह के हर दिन निर्धारित अलग–अलग घरों में जाना होता था और कई बार भूखा ही रह जाना पड़ता था उसे राष्ट्रोत्थान जैसे कार्य के लिए साधन और सहारा प्राप्त होने की कल्पना करना ही कठिन है। और, यह तथ्य भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि जब वे केवल १३ वर्ष के थे, उनके पूज्य माता–पिता प्लेग की बीमारी के शिकार हो गये। माता–पिता दोनों एक ही दिन चल बसे। तब उनका घर का सहारा भी टूट गया। फिर भी भूखा–प्यासा केशव निराश नहीं हुआ। क्यों? उसने परिस्थितियों का रोना नहीं रोया। क्यों? इसके विपरीत वन्दे मातरम् आन्दोलन में उसने अपने बलबूते पर नीलसिटी हाई–स्कूल में ऐसा आयोजन किया कि अंग्रेज सरकार स्कूल में इस आन्दोलन के सूत्रधार का अता–पता तक नहीं लगा सकी। यह सूझबूझ केशव को कहाँ से प्राप्त हुई? स्कूल के सभी विद्यार्थियों को प्रत्येक कक्षा में एक साथ वन्दे मातरम् का घोष करने के लिए कैसे तैयार किया? उसके आह्वान पर सब विद्यार्थी कक्षाओं से बाहर आ गये। स्कूल में हड़ताल हुई। लगभग डेढ़–दो महीने तक विद्यार्थियों को धमकाया गया। परन्तु एक ने भी न माफी माँगी और न ही आन्दोलन के सूत्रधार केशव का नाम बताया। आखिर अपने विद्यार्थी साथियों की पढ़ाई का नुकसान होता देखकर सारा दंड स्वयं अपने सिर लेने पर केशव स्कूल से निकाल दिया गया। तत्कालीन समाज–सेवी लोगों की सहायता से वह १९०६ में यवतमाल जाकर विद्यागृह में भरती हुआ। ऐसे संकटों के बीच भी तरुण केशव राष्ट्रोद्धार के अनेक कार्यों में सक्रिय रहे। लोकमान्य तिलक की स्मृति में चलाये गये "पैसा फंड" में, डॉ. खानखोजे द्वारा स्थापित क्रांतिकारी गुट के "चर्चा मंडल" में डॉ. मुंजे के घर बम बनाने का तरीका सीखने में, "स्वदेश बांधव" संगठन के माध्यम से स्वदेशी के प्रचार आदि अनेक कार्यों में केशवराव बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेते रहे। इस प्रकार संकटों से जूझते समय किसी बड़े नेता या गुरु का मार्गदर्शन उन्हें मिला हो, सो बात नहीं। घर में बड़े भाई महादेव शास्त्री जरूर उन्हें रोज झिड़की देते थे कि– "केशव, तू इन व्यर्थ के झंझटों में क्यों पड़ता है?"

जन्मजात गुण

इसलिए यही कहना होगा कि डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार का मन ही उनका गुरु था। राष्ट्र की दुर्दशा देखकर उनका मन द्रवित हुआ। राष्ट्र–प्रेम उनका जन्मजात गुण था। राष्ट्र ही उनका आराध्य देव रहा। इस राष्ट्र का उद्धार करने का संकल्प उन्होंने किन्हीं बाह्य कारणों या प्रतिक्रियाओं वश नहीं लिया। राष्ट्रसेवा उनके लिए आन्तरिक विषय था। हाँ यह सही है कि उन्होंने देशकाल परिस्थिति का बारीकी से अध्ययन किया। राष्ट्रोत्थान के लिए उस समय चलने वाले सभी आन्दोलनों में सक्रिय रहकर उन्होंने प्रत्येक हलचल को परखा। राष्ट्रजीवन में घुस आयी बुराइयों और कमजोरियों को पहचाना और राष्ट्रोद्धार के लिए व्यक्ति–निर्माण का अचूक मार्ग खोज निकाला।

उनके द्वारा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की यही पार्श्वभूमि थी। राष्ट्रोद्धार के लिए व्यक्ति निर्माण के कार्य में डाक्टरजी ने सबसे महत्त्वपूर्ण सूत्र दिया– "एक दीप से दूजा जलायें।" डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार जी ऐसा पहला 'दीप' स्वयं बने। गुण संवर्धन की कठोर साधना के पथ पर वे स्वयं अग्रसर हुए। राष्ट्रोद्धार के लिए व्यक्ति निर्माण के कार्य की नींव में इसीलिए स्वयं अवस्थित हैं– परम पूजनीय डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार।

□

संघ गङ्गा

केशव के आजीवन तप की यह पवित्रतम धारा।
साठ सहस्त्र ही नहीं, तरेगा इससे भारत सारा।।
सन् पच्चीस का वर्ष! पंथ पर
राही एक चला था।
अन्धकार का वक्ष चीर कर
दीपक एक जला था।
दैन्य–दास्य का पंक दबाकर
शतदल कमल खिला था।
कालरात्रि को भरे ज्योति का
प्रखरपुंज निकला था।
पथ पर चलते–चलते ही वह राह बन गया।
तिल–तिल कर जलते–जलते ही राह बन गया।
वह कैसा था भक्त, स्वयं भगवान बन गया।
कुम्भकार की कृति होकर, निर्माण बन गया।
आज नहीं वह, किन्तु पंथ पर
चरण–चिह्न अंकित हैं।
मनु के वंशज प्रलयकाल से क्यों शंकित हैं?
राम–कृष्ण यदि गए विवेकानन्द शेष हैं।
आओ! युग के सपनों को साकार करें हम।
मृतकों में भी जीवन की हुंकार भरें हम।
सबल भुजाओं में रक्षित है नौका की पतवार।
चीर चले सागर की छाती, पार करें मंझधार।
ज्ञान–केतु लेकर निकला है विजयी शंकर।
अब न चलेगा ढोंग, दम्भ, मिथ्या आडम्बर।
अब न चलेगा, राष्ट्र–प्रेम का गर्हित सौदा।
यह अभिनव चाणक्य न फलने देगा
विष का पौधा।
तन की शक्ति, हृदय की श्रद्धा,
आत्मतेज की धारा।
आज जगेगा जग–जननी का
सोया भाग्य सितारा।
कोटि पुष्प चढ़ रहे देव के शुभ चरणों पर।
कोटि चरण बढ़ रहे ध्येय की ओर निरन्तर।

□ अटलबिहारी वाजपेयी

लोक शिक्षण का अभिनव विश्वविद्यालय

□ लज्जा राम तोमर

विद्या भारती का जन्म संघ की प्रेरणा से हुआ है, यह सत्य सर्वविदित है। विद्या भारती के कार्यकर्ता भी इसीलिए प्रायः कहा करते हैं कि विद्या भारती और संघ का सम्बन्ध देह और आत्मा के समान है। संघ को न समझने वाले भी यह कहते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में विद्या भारती के नाम से संघ ने प्रवेश कर लिया है। इस कथन के साथ वे अनेक प्रकार के विशेषण भी लगाते हैं। वास्तव में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एक दल अथवा पार्टी नहीं है। यह एक अभिनव शिक्षा तंत्र है। संघ का उद्देश्य हिन्दू धर्म, संस्कृति एवं राष्ट्रीयता के अधिष्ठान पर मनुष्य निर्माण करना है। इस पुनीत उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु उसने अपनी सफल मनोवैज्ञानिक कार्यपद्धति विकसित की है जो शिक्षा–प्रक्रिया का ही शुद्ध रूप है। शिक्षा का उद्देश्य भी मनुष्य निर्माण करना है। स्वामी विवेकानन्द जी ने भी क्लर्क निर्माण करने वाली अंग्रेजी शिक्षापद्धति की आलोचना करते हुए कहा था "(We want man-making education)" हमें मनुष्य निर्माण करने वाली शिक्षा की आवश्यकता है।" संघ ने विवेकानन्द जी के उसी स्वप्न को साकार करने हेतु शिक्षा एवं संस्कार पद्धति का विकास किया है। इस पद्धति के माध्यम से ही संघ ने अपने ७५ वर्ष के जीवन काल में लाखों निःस्वार्थी राष्ट्रभक्त स्वयंसेवकों का निर्माण किया है जो आज समाज जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को प्रभावित कर रहे हैं। विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की स्थापना भी शिक्षा क्षेत्र में संघ की इसी प्रेरणा को लेकर हुई है। विद्या भारती से सम्बद्ध सहस्रों शिक्षण संस्थाएँ सम्पूर्ण देश में इसी मनुष्य निर्माण करने वाली शिक्षा पद्धति को अपनाकर क्रियाशील हैं।

शिक्षा अक्षर ज्ञान तक सीमित नहीं

साधारणतः 'अक्षर ज्ञान' या पाठ्य पुस्तक विभिन्न विषयों में पाठ्यक्रम के अध्ययन को ही शिक्षा समझा जाता है। किन्तु वास्तव में शिक्षा का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। कभी–कभी हम विद्यालयों में औपचारिक शिक्षा प्राप्त न करने वाले अथवा असाक्षर व्यक्ति को अशिक्षित समझते हैं, जो कि अनुचित है। प्रायः देखा जाता है कि औपचारिक शिक्षा प्राप्त व्यक्ति अमानवीय व्यवहार करता है और निरक्षर व्यक्ति भावना एवं ज्ञान में उससे कहीं अधिक श्रेष्ठ होता है। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा अक्षर ज्ञान तक सीमित नहीं है। शिक्षा का अर्थ है मनुष्य के व्यवहार का परिष्कार एवं चरित्र निर्माण। शिक्षण के अन्तर्गत वे सभी क्रियायें आती हैं जिनके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार का परिष्कार एवं चरित्र का निर्माण होता है। यह कार्य घर, पाठशालाओं एवं विद्यालयों में ही नहीं, अपितु खेत–खलिहानों, कारखानों, दुकानों कला भवनों, खेल के मैदानों और मल्लशालाओं में चलता रहता है। प्राचीन काल में कथा–कीर्तन एवं आधुनिक काल में रेडियो, दूरदर्शन, सिनेमाघर, समाचार–पत्र आदि भी इस शिक्षण प्रक्रिया की सीमा में आते हैं। इसी प्रकार मनुष्य का शिक्षण केवल विद्यार्थी जीवनकाल तक ही सीमित नहीं होता, अपितु जीवन भर चलता है। वास्तव में "समस्त मानव जीवन शिक्षा है और शिक्षा ही जीवन है।" संघ ने भी शिक्षा का यही व्यापक स्वरूप अपनाया है। संघ के समस्त क्रिया–कलापों का केन्द्र बिन्दु व्यक्ति के व्यवहार का परिष्कार एवं चरित्र निर्माण करना है।

प्राचीन भारत में लोक शिक्षण

प्राचीन भारत में शिक्षा पुस्तकीय ज्ञान अथवा पढ़ने–लिखने का पर्याय कभी नहीं रहा। आदिकाल से ही शिक्षा का मौखिक स्वरूप ही प्रचलित रहा। विभिन्न विषयों की ज्ञान की तुलना में धर्माचरण पर अधिक बल रहता था। समाज में औपचारिक शिक्षा के स्थान पर अनौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था अधिक प्रभावी थी। इसी अनौपचारिक शिक्षा को लोक–शिक्षण की संज्ञा प्राप्त है। ग्रामों के मठ–मन्दिरों एवं पुरोहितों के द्वारा यह लोक–शिक्षण समाज को प्राप्त होता था। साधु–संन्यासी सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करते एवं उपदेशों के माध्यम से समाज को शिक्षित करते थे। इसके साथ ही तीर्थ यात्रायें, मेले एवं

पर्व लोक–शिक्षण के प्रभावी माध्यम थे। चारों धामों की यात्रा करने वाले लोगों को अपनी मातृभूमि भारत एवं सम्पूर्ण समाज के दर्शन से उसका ज्ञान सहज रूप से प्राप्त हो जाता था। राष्ट्रभक्ति एवं समाज में सांस्कृतिक एकता की अनुभूति होती थी। व्रतों एवं देव पूजन के माध्यम से संयम एवं साधना के संस्कार भी व्यक्ति–व्यक्ति को प्राप्त होते थे।

वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत एवं पुराणों की कथाओं के आयोजन की परम्परा प्रायः सम्पूर्ण भारत में ग्राम–ग्राम में प्रचलित थी। आज भी कुछ मात्रा में देखने को मिलती है। इन कथाओं के माध्यम से अपने धर्म एवं संस्कृति का ज्ञान तो होता ही था, साथ ही आदर्श महापुरुषों के जीवन–चरित्रों को सुनने से अपने पूर्वजों का ज्ञान, उनके प्रति स्वाभिमान की भावना एवं अपने जीवन में उनके आदर्शों को अपनाने की प्रेरणा जन–जन को प्राप्त होती थी। इसी के परिणामस्वरूप जन सामान्य में धर्माचरण एवं नैतिक चरित्र का स्तर उच्च था।

संघ द्वारा लोक शिक्षण

वर्तमान भारत में संघ लोक शिक्षण के सशक्त एवं प्रभावी माध्यम के रूप में कार्यरत है। संघ की ढाँचागत व्यवस्था भी शिक्षा तन्त्र के समान ही है। दैनिक एक घण्टे की शाखा विद्यालय के समान ही निश्चित समय पर लगती है। शाखा में मुख्य शिक्षक एवं शिक्षकों की व्यवस्था रहती है। स्वप्रेरणा से उपस्थित होने वाले स्वयंसेवकों के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं भावनात्मक विकास के लिए निर्धारित कार्यक्रम नियमित चलते हैं। स्वयंसेवकों के शारीरिक विकास की ओर प्रथमतः ध्यान दिया जाता है। इसके पीछे यही दृष्टि है कि स्वस्थ एवं सबल शरीर होने पर ही नागरिक अपने समाज एवं देश की सेवा एवं रक्षा भली प्रकार कर सकते है। इसके लिए खेल, शारीरिक व्यायाम, योगासन, दण्ड, नियुद्ध (कराटे) एवं सैनिक संचलन आदि के कार्यक्रमों के निर्धारित पाठ्यक्रमानुसार आयोजित होते हैं। इन कार्यक्रमों के द्वारा स्वयंसेवकों का शरीर स्वस्थ एवं सबल तो बनता ही है, साथ ही उनमें अनुशासन, सामूहिकता (टीम स्प्रिट), साहस एवं वीरता आदि जीवनोपयोगी गुणों का विकास भी होता है।

स्वयंसेवकों के मानसिक एवं बौद्धिक विकास के लिए संघ स्थान पर देशभक्ति के गीत, महापुरुषों के जीवन चरित्र एवं ऐतिहासिक घटनाओं का ज्ञान कथा–कथन के माध्यम से कराया जाता है। प्रेरक प्रसंग, सुभाषित, अमृतवचन आदि के कथन भी स्वयंसेवकों के लिए संस्कारप्रद एवं प्रेरणादायी होते हैं। बौद्धिक विकास की दृष्टि से चर्चा एवं भाषण आदि के कार्यक्रम समय–समय पर आयोजित किये जाते हैं। इनके माध्यम से अपने धर्म, संस्कृति, इतिहास, वर्तमान राष्ट्रीय समस्याओं एवं उनके समाधान के उपाय आदि विषयों का ज्ञान कराने के साथ स्वयं के दायित्व बोध का जागरण भी किया जाता है।

दैनिक शाखा के अतिरिक्त कई शाखाओं के मिलकर एकत्रीकरण, दिन भर के वन विहार, दो अथवा तीन दिनों के सम्मेलन आदि के आयोजन समय–समय पर होते रहते हैं। इन कार्यक्रमों में भी स्वयंसेवक शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास के साथ देश सेदा के योग्य बनने के संस्कार ग्रहण करते हैं। इन गुणों के सघन प्रशिक्षण के लिए आठ–दस दिनों के प्राथमिक शिक्षा वर्ग, बीस दिनों के "संघ शिक्षा वर्ग" प्रतिवर्ष प्रान्तशः आयोजित किये जाते हैं। तीस दिन का एक अखिल भारतीय "संघ शिक्षा वर्ग" का आयोजन सम्पन्न होता है। इन प्रशिक्षण वर्गों के माध्यम से प्रतिवर्ष सहस्त्रों स्वयंसेवक सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में विकसित होते हैं। ये कार्यकर्त्ता व्यक्तिगत सम्पर्क से समाज के अन्य व्यक्तियों को शाखा में लाकर स्वयंसेवक बनाते हैं। स्वयंसेवक का अर्थ है स्वार्थ, लोभ एवं भय से दूर रहकर स्वयं की प्रेरणा से राष्ट्र की सेवा करने वाला सतत जागरूक व सजग कार्यकर्त्ता।

इस प्रकार संघ की लोक शिक्षण की अभिनव कार्य पद्धति (या शिक्षण पद्धति) के द्वारा व्यक्ति निर्माण का अखण्ड यज्ञ सम्पूर्ण देश में चल रहा है।

शिक्षण पद्धति का आधार

संघ की शिक्षण पद्धति का आधार आदेश अथवा उपदेश नहीं है, अपितु परस्पर प्रेम एवं आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करना तथा स्वयं के जीवन का उदाहरण प्रस्तुत करना है। प्रेम एवं आत्मीयता दीप का स्नेह (तेल अथवा घृत) है, बाती स्वयंसेवक का जीवन और उसका आदर्श व्यवहार दीप का प्रकाश है। इस प्रकार के आज असंख्य दीप जल रहे हैं। "एक दीप से जले दूसरा" इस पद्धति से समाज जीवन को आलोकित

करने का पुनीत आध्यात्मिक शिक्षण–कार्य संघ के द्वारा सतत चल रहा है।

संघ के संगठन का तन्त्र भी अभिनव है। शाखाओं में गण शिक्षक, मुख्य शिक्षक एवं कार्यवाह पदाधिकारी होते हैं। कई शाखाओं का एक मण्डल होता है। उसका कार्य देखने वाला मण्डल कार्यवाह कहलाता है। कई मण्डलों को मिलाकर खण्ड (नगरों में भाग) होता है। फिर नगर, महानगर, (ग्रामों में तहसील), जिला, विभाग, सम्भाग, प्रान्त की इकाइयाँ होती हैं। कुछ प्रान्तों को मिलाकर क्षेत्र की इकाई होती है। इन सभी इकाइयों के कार्यवाह (सचिव) एवं संघचालक (अध्यक्ष) पदाधिकारी होते हैं। इन पदाधिकारियों में अधिकारी (बॉस) भाव नहीं होता। सभी आत्मीयतापूर्ण व्यवहार एवं व्यक्तिगत अथवा सामूहिक सम्पर्क के द्वारा शिक्षण कार्य ही करते हैं। जिनका जीवन देश एवं समाज सेवा की निःस्वार्थ भावना से प्रेरित होकर संघ कार्य के लिए जितना अधिक समर्पित एवं त्यागपूर्ण होता है वह उतना श्रेष्ठ अधिकारी कहलाता है। अधिकारी अर्थात् अधिक कार्य करने वाला होता है। ये सभी अपने परिवार एवं व्यवसाय का दायित्व संभालते हुए संघ कार्य के लिए अधिक से अधिक समय देते हैं। उनका जीवन देशभक्ति, समाजप्रेम, सेवा प्रामाणिकता, अनुशासनयुक्त, कर्त्तव्य–परायण, परिश्रमशील, त्याग एवं निष्ठा आदि गुणों से परिपूर्ण हो, यह अपेक्षा की जाती है। इस प्रकार के गुणों से युक्त उनके जीवन के सम्पर्क में जो भी व्यक्ति आता है उसे इसी प्रकार का अपना जीवन बनाने की प्रेरणा एवं संस्कार प्राप्त होते हैं। संघ के स्वयंसेवकों एवं कार्यकर्ताओं में परस्पर प्रेम एवं स्नेहपूर्ण सम्बन्ध होता है। एक दूसरे के सुख–दुःख में अपने स्वजनों की भाँति ही सहभागी होते हैं। इसी आत्मीयतापूर्ण व्यवहार के कारण स्वयंसेवक अपने वरिष्ठ कार्यकर्ताओं के प्रति श्रद्धा का भाव रखते हैं और उनके निर्देशों का पालन सहजरूप से करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं।

संघ में अनेक प्रचारक कार्यकर्ता भी होते हैं। ये प्रचारक कार्यकर्त्ता वे होते हैं जो गृहस्थ जीवन में पदार्पण नहीं करते और न कोई अपना व्यवसाय ही करते हैं। विद्यार्थी जीवन समाप्त कर अपना सम्पूर्ण जीवन देश सेवा करने हेतु संघ को समर्पित कर देते हैं। उन्हें कोई वेतन अथवा मानधन नहीं मिलता। उनके पहनने–ओढ़ने–बिछाने के लिए वस्त्रों एवं भोजन की व्यवस्था सब स्वयंसेवक मिलकर ही करते हैं। ऐसे प्रचारक कार्यकर्त्ता भी देशभर में हजारों की संख्या में हैं जो संघ के मनुष्य निर्माण के पुनीत कार्य में साधनारत हैं। इनका त्याग, संयम एवं साधनायुक्त जीवन आदर्श शिक्षक के रूप में सभी के लिए प्रेरणादायक होता है।

अखिल भारतीय स्तपर पर भी अधिकतर वरिष्ठ कार्यकर्त्ता प्रचारक ही होते हैं। सरकार्यवाह संघ रूपी विश्वविद्यालय के कुलसचिव एवं सरसंघचालक कुलपति के समान अधिष्ठित होते हैं। इनका जीवन त्याग, संयम एवं तपोपूत होता है। अहोरात्रि राष्ट्र की सेवा में अपने जीवन को तपाते हुए विश्व के सबसे बड़े स्वयंसेवी संगठन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का मार्गदर्शन करते हैं एवं इस अभिनव विश्वविद्यालय का संचालन करते हैं।

प्रार्थना एवं उसके दर्शन का मंत्र

संघ के सभी छोटे–बड़े कार्यक्रम प्रार्थना से सम्पन्न होते हैं। तीन श्लोकों एवं बीस पंक्तियों की संस्कृत की इस प्रार्थना में गागर में सागर के समान संघ का सम्पूर्ण दर्शन समाहित है। जिस प्रकार घर में शिशु अपने मन की बात सर्वप्रथम अपनी प्रिय माता से ही कहता है। उसी प्रकार स्वयंसेवक प्रार्थना में अपनी मातृभूमि को सर्वप्रथम नमन करते हैं। जिस मातृभूमि के द्वारा पालन–पोषण हुआ है उस महामंगलमयी पुण्य भूमि के लिए मेरी यह काया (शरीर) काम आये, इस प्रकार की कामना करते हुए बारम्बार नमस्कार करते हैं। द्वितीय पंक्ति में अपनी मातृभूमि को 'हिन्दुभूमे' शब्द से सम्बोधित किया है। इससे यह भाव प्रगट होता है कि विश्व में हिन्दुओं के लिए एक मात्र देश भारत ही है। देश को अपनी माता एवं अपने को उसका पुत्र मानते हुए उसके लिए सर्वस्व बलिदान करने के लिए तत्पर रहना, यही राष्ट्रीयता एवं राष्ट्रप्रेम का सही भाव है।

तत्पश्चात् परमेश्वर को हिन्दू राष्ट्र के अंगभूत के रूप में सादर नमन करते हैं। यहाँ स्पष्ट किया है कि भारत हिन्दू राष्ट्र है। साथ ही यह भाव प्रगट किया है कि संघ कार्य ईश्वरीय कार्य है उसके लिए हम कटिबद्ध हैं। उसकी पूर्ति के लिए परमेश्वर से शुभाशीर्वाद देने हेतु याचना करते हैं। आगे भगवान से प्रार्थना की है कि हमें ऐसी शक्ति दे जिसे कोई जीत न सके। साथ ही

सुशील भी दे जिससे विश्व भारत के सम्मुख स्वयं विनम्र हो जाये। हमें ज्ञान दे जिससे हमारे द्वारा (मनुष्य निर्माण का) स्वेच्छा से स्वीकार किया हुआ संघ कार्य का कण्टकाकीर्ण मार्ग सुगम हो सके। समुत्कर्ष एवं निश्रेयस अर्थात् इहलोक एवं पारलौकिक उन्नति करने का एक मात्र साधन 'उग्र वीरव्रत' (दृढ़ संकल्प) हमें दे। साथ ही ऐसी तीव्र ध्येयनिष्ठा दे जो हमारे अन्तःकरण में अहोरात्रि जागृत रहे। हमारी संगठित कार्यशक्ति विजयशालिनी हो जिससे धर्म का संरक्षण हो सके। हे प्रभो! हमें अपना आशीर्वाद दे जिससे हम अपने राष्ट्र को परमवैभव के शिखर पर ले जाने में समर्थ हो सके और हमारी भारतामाता विजयशालिनी बन सके।

इस प्रकार प्रार्थना में संघ का ध्येय, उसकी पूर्ति हेतु स्वयंसेवकों में आवश्यक गुणों की आवश्यकता एवं संघकार्य ईश्वरीय कार्य है यह भाव प्रार्थना में अत्यन्त ही संक्षेप में प्रगट हुए हैं। वास्तव में प्रार्थना संघ दर्शन का प्रभावी मंत्र है।

गुरुदक्षिणा पद्धति

प्राचीन भारत में शिक्षा निःशुल्क दी जाती थी। यही नहीं, अपितु आश्रमों में शिक्षार्थियों के भोजन–वस्त्र आदि की व्यवस्था आचार्य की ओर से की जाती थी। किन्तु शिष्य का यह कर्त्तव्य था कि अपने अध्ययन की समाप्ति पर वह अपने गुरु के चरणों में उचित दक्षिणा अर्पित करे। यह परम्परा बहुत दिनों तक शिक्षा क्षेत्र में प्रचलित रही। आज भी समाज में अपने कुलगुरु का गुरु पूर्णिमा के दिन पूजन करने एवं उन्हें गुरु दक्षिणा अर्पित करने की प्रथा प्रचलित है। यह गुरु दक्षिणा अपनी श्रद्धा–भक्ति के अनुरूप दी जाती है। इसमें किसी प्रकार की बाध्यता नहीं होती।

संघ में भी इसी प्रकार की गुरुदक्षिणा अर्पित करने की परम्परा है। अन्तर केवल यही है कि संघ ने किसी व्यक्ति विशेष को गुरु न मानकर भारतीय जीवन आदर्शों के प्रतीक भगवा ध्वज को गुरु स्थान पर प्रतिष्ठित किया है। प्रतिवर्ष गुरु पूर्णिमा उत्सव का आयोजन होता है। गुरु पूजन के साथ स्वयंसेवक अपनी श्रद्धा के अनुसार ध्वज के सम्मुख लिफाफे के अन्दर राशि रखकर गुरुदक्षिणा अर्पित करते हैं। प्रमुख कार्यकर्त्ता जो लेखा–जोखा रखते हैं, उनके अतिरिक्त अन्य किसी स्वयंसेवक को एक–दूसरे के द्वारा अर्पित राशि की जानकारी नहीं होती। राशि की मात्रा के स्थान पर स्वयंसेवक की श्रद्धा एवं समर्पण का भाव इस अर्पण में महत्त्वपूर्ण होता है। संघ का सम्पूर्ण कार्य इसी गुरुदक्षिणा से चलता है। संघ अपने लिए समाज से अन्य किसी प्रकार की आर्थिक सहायता अथवा दान स्वीकार नहीं करता। स्वयंसेवक गुरुदक्षिणा अर्पित करते समय किसी प्रकार की अपेक्षा नहीं रखता। अपने नाम, यश एवं प्रसिद्धि की आकांक्षा मन में नहीं होती। अहंकार शून्यता एवं विनम्रता का भाव ही होता है। उसके अन्दर यही भाव रहता है कि समाज से मुझे अपने जीवन के लिए सब कुछ मिलता है किन्तु उसकी तुलना में मैं जो अर्पित कर रहा हूँ, वह तो अल्प ही है। वास्तव में गुरुदक्षिणा पद्धति व्यक्ति में गुणों के विकास का एक प्रभावी माध्यम है।

समाज परिवर्तन का प्रभावी माध्यम

सभी विचारकों ने शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन के प्रभावी माध्यम के रूप में स्वीकार किया है। कोठारी शिक्षाआयोग की संस्तुति में भी कहा गया है– "शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का प्रभावी माध्यम है।" संघ भी शिक्षा के समान ही व्यक्ति निर्माण का कार्य कर रहा है। स्वस्थ समाज जीवन के लिए व्यक्तियों में जिस प्रकार के गुणों की आवश्यकता है उन गुणों का विकास संघ शाखा में संस्कार पद्धति से स्वयंसेवकों में होता है। सर्वप्रथम हिन्दू समाज में संगठन एवं एकता की आवश्यकता सभी अनुभव करते हैं। ऐतिहासिक कारणों से हिन्दू समाज में अनेक प्रकार की विकृतियाँ एवं भेद–भाव उत्पन्न हो गये हैं। प्रान्त, भाषा, मत–पन्थ, जाति आदि के भेद–भाव एवं छुआ–छूत जैसी अनेक विकृतियों से हिन्दू समाज ग्रसित है। इन सबको दूर कर हम सब भारतमाता के पुत्र भाई–भाई हैं इस भाव जागरण में संघ ने अपनी अभिनव कार्य पद्धति के माध्यम से पर्याप्त मात्रा में सफलता अर्जित की है। संघ के स्वयंसेवकों में इन भेद–भावों के स्थान पर सामाजिक समरसता एवं परिवार के समान एकता का भाव होता है। महात्मा गान्धी एवं डा० अम्बेडकर ने स्वयं संघ के कार्यक्रमों में सम्मिलित होकर इसकी अनुभूति की और इसके लिए संघ की प्रशंसा भी की है। जो हिन्दू समाज पहले पूर्णतः विश्रृंखल हो चुका था, उसमें संघ के कारण एकता एवं संगठित शक्ति का उदय हुआ है। समाज पर जब भी कोई विपदा अथवा

संकट आता है, आसेतु हिमाचल सम्पूर्ण हिन्दू समाज उसके निवारण हेतु एक–जुट होकर खड़ा हो जाता है। संघ स्थापना से पूर्व हिन्दू हित की अथवा हिन्दुत्व की बात करना किसी घोर अपराध के समान समझा जाता था। आज हिन्दुत्व एवं हिन्दू विचारों को बहुसंख्यक समाज की स्वीकार्यता मिली है। केवल अपने को सेक्यूलर कहने वाले कुछ राजनीतिक दल स्वार्थवश विरोध प्रगट करते हैं।

संघ के स्वयंसेवक आज राष्ट्र जीवन के सभी क्षेत्रों में प्रभावी ढंग से कार्यरत हैं एवं हिन्दू विचारों के आधार पर उन क्षेत्रों के पुनर्निर्माण करने में सफलता अर्जित कर रहे हैं। विश्वास है कि निकट भविष्य में हिन्दुत्व के अधिष्ठान पर भारत स्वाभिमानी एवं शक्तिसम्पन्न राष्ट्र के रूप में खड़ा होकर विश्व का नेतृत्व करने में सक्षम होगा।

संघ कार्य का मूल्यांकन

शिक्षा प्रक्रिया में मूल्यांकन शिक्षण का अभिन्न अंग होता है। शिक्षा के उद्देश्य की संप्राप्ति शिक्षण के माध्यम से हो रही है अथवा उसमें कुछ न्यूनता है इस आधार पर शिक्षार्थी, शिक्षक एवं उसकी शिक्षण पद्धति का मूल्यांकन विभिन्न ढंग से सतत किया जाता है। उसके निष्कर्षों के आधार पर उसमें आवश्यक सुधार अथवा परिवर्तन किया जाता है। संघ कार्य का मूल्यांकन भी इसी दृष्टि से सभी स्तरों पर होता रहता है। संघ कार्य का सही मूल्यांकन उन परिस्थितियों में अधिक सटीक होता है, जब देश एवं समाज पर कोई संकट अथवा प्राकृतिक आपदा आती है उसी समय संघ के स्वयंसेवक का व्यवहार किस प्रकार का रहता है। समाज स्वयं उसे देखकर संघ कार्य का मूल्यांकन करता है। सबसे कठिन परीक्षा उन स्वयंसेवकों की होती है जो सार्वजनिक क्षेत्रों में विशेषरूप से राजनीतिक क्षेत्र में कार्य करते हैं। उस क्षेत्र में धन, पद, नाम, यश, प्रचार आदि के आकर्षण अत्यधिक होते हैं। ऐसी स्थिति में स्वयंसेवक को अपने चरित्र को बनाये रखना एक कठोर तपस्या होती है।

संघ के संस्थापक पूजनीय डा० हेडगेवार ने एक बार अपने अनौपचारिक वार्तालाप में कहा था कि देश में नगरों में तीन प्रतिशत और ग्रामीण क्षेत्र में एक प्रतिशत संख्या में संघ के अच्छे स्वयंसेवक बन जाते हैं तो हिन्दू समाज शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में खड़ा हो जावेगा। संघ कार्य के मूल्यांकन का प्रथम बिन्दु यही उभर कर आता है कि इस मात्रा में संघ का विस्तार हुआ है अथवा नहीं। यदि नहीं हुआ है तो कार्य विस्तार की गति बढ़ानी होगी। गुणात्मक दृष्टि से मूल्यांकन करने के लिए स्वयंसेवक का समाज में व्यवहार देखना होता है। तीसरी बात समाज पर कोई आपदा आती है अथवा समाज में कोई समस्या उत्पन्न होती है तो पूरा समाज संगठित होकर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है अथवा नहीं। इन तीनों बातों की दृष्टि से जब हम संघ कार्य का मूल्यांकन करते हैं तो सन्तोषजनक समाधान होता है। संघ एक प्रभावी संगठन के रूप में खड़ा हुआ है। उसके परिणामस्वरूप देश में आज हिन्दू हित की उपेक्षा करके कोई कार्य नहीं हो सकता। दक्षिण भारत में एक कोने में स्थित मीनाक्षीपुरम ग्राम में कुछ हिन्दू परिवारों का धर्मान्तरण कर मुसलमान बना लिया था। इसकी प्रतिक्रिया में सम्पूर्ण भारत में एक स्वर से विरोध प्रगट हुआ था। आज ईसाई मिशनरी भी राष्ट्रीय चर्चा के विषय बने हुए हैं। हिन्दू समाज ने उसे चुनौती के रूप में स्वीकार किया है। समाज पर किसी भी कोने में कोई प्राकृतिक आपदा आती है तो संघ के स्वयंसेवक सर्वप्रथम सेवा के लिए खड़े दिखाई पड़ते हैं। फिर वह चाहे आन्ध्र का तूफान हो, लातूर या उत्तरकाशी में आया भूकम्प हो अथवा उड़ीसा में आया भीषण चक्रवात हो। सभी अवसरों एवं स्थानों पर स्वयंसेवकों ने स्वयं प्रेरणा से सर्वप्रथम पहुँचकर उस विपदा में सहायता की। सड़ते हुए शवों को उठाकर अन्तिम संस्कार करने का दुष्कर कार्य संघ के स्वयंसेवकों ने करके दिखाया। जबकि सेना के जवान भी उस कार्य को करने में हिचक रहे थे। दादरी में विमान दुर्घटना में सभी मृत यात्री मुसलमान थे। किन्तु संघ के स्वयंसेवक सबसे पहले पहुँचकर उनकी सेवा में जुट गये। कफन की व्यवस्था कर शवों को व्यवस्थित ढंग से रखा। उनके स्वजनों की भोजन एवं ठहरने की व्यवस्था की। इसी प्रकार १९४७ में पाकिस्तान ने जब कश्मीर पर आक्रमण किया था, उस समय संघ के स्वयंसेवकों ने भारतीय सेना की सहायता की। अपनी सेना के वायुयान उतरने के लिये हवाई पट्टी बनाई। भारतीय सेना ने शस्त्र की पेटियाँ नीचे गिरायी, वे भूल से पाकिस्तानी क्षेत्र में गिर गईं। अपनी सेना उस क्षेत्र में प्रवेश नहीं कर सकती थी। अतः स्वयंसेवक अपने प्राणों की बाजी लगाकर गोलियों की बौछारों

के बीच जमीन पर लेटते हुए जाकर शस्त्रों की पेटियाँ उठाकर लाये। इसी प्रकार १६६२ में चीन के आक्रमण के समय, १६६५ एवं १६७१ के पाकिस्तानी आक्रमण के दौरान स्वयंसेवकों ने सेना की पूरी सहायता की एवं आन्तरिक सुरक्षा का दायित्व संभाला। १६६३ में पं० नेहरू ने प्रसन्न होकर २६ जनवरी की परेड में स्वयंसेवकों को भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया था।

संघ के स्वयंसेवक देशभर में २५ हजार सेवा प्रकल्प चला रहे हैं। ये सेवा प्रकल्प अधिकांशतः वनवासी क्षेत्र में, छोटे ग्रामों एवं नगरों की मलिन बस्तियों में चलते हैं।

इस प्रकार सभी दृष्टियों से संघ कार्य का मूल्यांकन करने का जब प्रयास किया जाता है तो पर्याप्त समाधानकारक परिणाम देखने को मिलते हैं। फिर भी अभी बहुत कुछ करने की आवश्यकता है।

सही अर्थ में विश्वविद्यालय है

आज संघ का व्यक्ति निर्माण का कार्य भारत में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में फैला हुआ है। विश्व के सौ से अधिक देशों में विभिन्न नामों से स्वयंसेवक हिन्दू समाज को संगठित एवं संस्कारित करने में जुटे हैं। इनमें हिन्दू स्वयंसेवक संघ, भारतीय स्वयंसेवक संघ, हिन्दू कौंसिल, हिन्दू महासंघ, सनातन धर्म स्वयंसेवक संघ, विश्व हिन्दू परिषद्, फ्रेण्डस आफ इण्डिया सोसायटी इण्टरनेशनल, आदि प्रमुख हैं। भारत में भी संघ का कार्य सभी प्रदेशों में, जिलों में ५० हजार शाखाओं के माध्यम से चलता है। आज संतप्त विश्व मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए भारत की ओर आशाभरी दृष्टि से निहार रहा है। विश्व में सुख और शान्ति का सन्देश देने के लिए हिन्दू विचारों के आधार पर व्यक्ति निर्माण के पुनीत कार्य में संघ पूरी तरह जुटा हुआ है।

वास्तव में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ सही अर्थ में लोक शिक्षण का अभिनव विश्वविद्यालय है। □

चुनौती व्यर्थ हुई

बीदर जिले की बसव कल्याण तहसील में राजेश्वर नामक एक पुरवा है। स्वयंसेवकों के स्नेहपूर्ण तथा सतत सम्पर्क से धीरे-धीरे उपेक्षित बंधुओं के प्रारंभिक सन्देह तथा टालमटोल की भावनाएँ मिट गयीं। उनके कुछ नवयुवक शाखा में आने लगे। किन्तु दलित संघर्ष समिति के कार्यकर्ताओं ने इसे अपने लिए चुनौती समझा। उन्होंने स्वयंसेवकों पर लांछन लगाते हुए अपने जाति-भाइयों से कहा कि स्वयंसेवक समता का कोरा स्वांग करते हैं। उनका वास्तविक उद्देश्य तो हरिजनों का शोषण करना है, आदि-आदि। और अपनी बात को सिद्ध करने के लिए उन्होंने उस स्थान के एक प्रमुख संघ-कार्यकर्ता को, जो हाई स्कूल का शिक्षक तथा उनकी दृष्टि में सवर्ण था, अपने घर में नामकरण-समारोह में आमंत्रित किया।

जब कार्यकर्ता मुहूर्त के लिए घर पर पहुँचा और उसने बच्चों को उपहार दिये तथा शेष लोगों के साथ बैठकर भोजन ग्रहण किया तो एकत्रित नर-नारी सभी आश्चर्य तथा उल्लास से गदगद हो गये। बच्चे की माता ने, आशीर्वाद के लिए बच्चे को कार्यकर्ता की गोद मे डाल दिया और स्वयं उसके चरण छूने के लिए आगे झुकी (पर कार्यकर्ता ने उसे रोक दिया) और कहा, "वास्तव में हम कदापि यह आशा नहीं करते थे कि आप हम दलितों के घर को पवित्र करेंगे। आप तो हमारे लिए देवता के समान हैं।" इस पर कार्यकर्ता ने उत्तर दिया, "मेरे माता-पिता तथा संघ ने मुझे सिखाया है कि मैं मुक्तभाव से समाज के सभी भले व्यक्तियों से मिलूँ और जाति के कारण किसी को ऊँचा या नीचा न समझूँ। मैं जानता हूँ कि हमारे गाँव में आप सब लोग भले तथा कर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। इसी कारण मैं आया हूँ।" केवल कई सप्ताह बाद ही कार्यकर्ता को आमंत्रण के पीछे दलित संघर्ष समिति की कूट योजना का पता चला। इसे बताने की आवश्यकता नहीं कि तब से संघ-विरोधी प्रचार की साख गिर गयी है और नवयुवक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के और निकट आते जा रहे हैं।

क्रान्ति-पथिक डा० हेडगेवार

□ वचनेश त्रिपाठी

बंगाल में बंग-भंग के विरुद्ध चलाये गये आन्दोलन की जो आग महाराष्ट्र-मध्य प्रदेश पहुँची, उसमें जहाँ लोकमान्य तिलक, खापर्डे, परांजपे प्रमुख नेता थे, वहीं तरुणों में केशवराव हेडगेवार और नारायणराव सावरकर अग्रणी थी। नागपुर में तथा आस-पास के गाँवों में प्रचारित स्वदेशी-आन्दोलन में भी केशवराव हेडगेवार तन-मन से लगे थे, यद्यपि उस समय वहाँ के 'नीलसिटी हाईस्कूल' में वे दसवीं कक्षा के छात्र थे।

वन्देमातरम का उद्घोष

केशव हेडगेवार का ही यह कर्तृत्व था कि इंस्पेक्टर के उस स्कूल में कदम रखते ही पूरी इमारत "वन्देमातरम्" के जयघोष से गूँज उठी, जबकि अंग्रेजों ने स्कूलों में "वन्दे मातरम्" बोलने-गाने पर प्रतिबंध लगा रखा था। उस प्रतिबन्ध को हेडगेवार जी कब मान सकते थे, जबकि सन् १६०५-६ से ही नागपुर के क्रांतिकारी दल से उनका सम्बन्ध जुड़ चुका था। जैसे ही लार्ड कर्जन ने बंगाल के विभाजन का एलान किया, अगले दिन नागपुर में वहाँ के तरुण क्रान्तिकारियों की एक गुप्त बैठक हुई, जिसमें अंग्रेजों की बंग-भंग घोषणा के विरुद्ध विप्लवी योजना को क्रियान्वित करने पर विचार-विमर्श हुआ। इसी बैठक में प्रथम बार नागपुर के इस दल को बम बनाने की विधि भी सिखाई गई। केशवराव हेडगेवार इस बैठक में शामिल थे। यह कार्यवाही बंग-भंग आन्दोलन से ही सम्बद्ध थी। किन्तु चूँकि विपल्वी कार्य बिना बखान किये, यों ही बिना लिखा-पढ़ी किये अत्यन्त गुप्त तरीके से चलते थे, इसलिए इस बैठक की पूर्ण कार्यवाही, उसके निर्णय तथा बैठक के आयोजक-संचालक या नेता आदि के बारे में आगे कभी किसी को कोई जानकारी संभव नहीं हो सकी।

यह निश्चित है कि यह बैठक उस बंग-भंग आन्दोलन से जुड़ी थी, जिसके तहत लाखों लोग बंगाल में विरोध प्रदर्शन कर रहे थे। सभाओं, जुलूस की धूम मची थी। गिरफ्तारियों का ताँता लगा था। "वंदे मातरम्" की गूँज बंगाल से उठी, तो पूरे देश में व्याप्त हो गई। केशवराव हेडगेवार की उठती तरुणाई में "वन्दे मातरम्" का बीज-मंत्र गहरे पैठ गया। सन् १६०६ के दिसम्बर में तिलक जी कलकत्ता कांग्रेस से लौटे, तो नागपुर में हुए उनके आग्नेय भाषण को केशवराव ने पूर्ण मनोयोग से हृदयंगम कर लिया। वे रात-दिन स्वदेशी-प्रचार और "वन्दे मातरम्" किंवा बंग-भंग आन्दोलन में तल्लीन रहने लगे। सन् १६०७ की विजयादशमी आई, तो केशवराव ने रामपायली में अपने साथी तरुणों के साथ जुलूस में जाकर "वन्दे मातरम्" का गीत गुँजाया और अंग्रेजों को "रावण" बताकर बड़ा ही ओजस्वी भाषण दिया। यह सीमोल्लंघन का जुलूस था।

बम विस्फोट

आगे सन् १६०८ में "वन्दे मातरम्" आन्दोलन के सिलसिले में केशवराव और उनके एक साथी को स्कूल से निकाल दिया गया, यद्यपि वहाँ के बाकी १४०० छात्रों पर कोई भी आँच न आयी। इन्हीं दिनों विप्लवी केशवराव ने एक बम बनाया और रातों-रात रामपायली के थाने के करीब उसका विस्फोट कर दिया। यह ब्रिटिश दमन को उस एक तरुण छात्र की चुनौती थी, एक ऐसे छात्र की, जो ब्रिटिश दमन का शिकार बन चुका था। अब केशवराव यवतमाल पहुँचे। वहाँ बंग-भंग आन्दोलन का बहुत जोर था। सरकारी स्कूल-कालेजों के बहिष्कार स्वरूप वहाँ एक राष्ट्रीय विद्यालय अभी-अभी खोला गया था। स्कूल क्या, यह देशभक्तों की एक खासी जमात थी। सन् १६०६ चल रहा था। केशवराव भी इस विद्यालय में भर्ती हो गये। यों, यहाँ हर किसी को प्रवेश नहीं मिल पाता था। ऐसा ही एक विद्यापीठ अरविन्द घोष, सुरेन्द्र बनर्जी आदि ने कलकत्ते में भी खोल रखा था, क्योंकि सरकारी स्कूलों के छात्र और अध्यापक तो बंग-भंग आंदोलन में कोई भी हिस्सा नहीं ले सकते थे। पंजाब में लाला लाजपतराय तथा दिल्ली में लाला हनुमंतसहाय ने इसी तरह के राष्ट्रीय विद्यालय चलाये, जिनमें आगे चलकर सरदार भगतसिंह, सुखदेव सरीखे क्रान्तिकारी छात्र तथा मास्टर अमीर-चन्द, अवध बिहारी और भाई बालमुकुन्द सरीखे अध्यापक महान हुतात्माओं की पंक्ति में दीप्तमान हो सके। कलकत्ते के छात्रों द्वारा चलाई गई "मुष्टि-भिक्षा" (एक-एक मुट्ठी अनाज) पद्धति से

केशवराव भी अपने विद्यालय के लिए अन्न इकट्ठा करने में हाथ बँटाते, भले ही खुद भूखे सो जाते। भूखे रहकर पढ़ने तथा राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने की उनकी प्रवृत्ति एक सप्रमाण सत्य है, अत्युक्ति नहीं।

१६ अगस्त १६३१ को डॉ. हेडगेवार पर राजद्रोह का मुकदमा चला

क्रान्ति केन्द्र बंगाल में

सन् १६०६ में अमरावती के स्कूल की तरह यवतमाल का यह विद्यालय भी अंग्रेजों की दमन–नीति की बलि चढ़ गया, बंद करा दिया गया। पर केशवराव निराश नहीं हुए, वरन् दो महीने पूना में पढ़ते रहकर अमरावती में कलकत्ता के राष्ट्रीय विद्यालय की 'प्रवेशिका परीक्षा' दी ताकि कलकत्ता में भर्ती हो सकें। फिर वे नागपुर लौट कर आन्दोलन तथा विप्लवी कार्यों में व्यस्त हो गये। इन्हीं दिनों कलकत्ते में एक युवा संन्यासी क्रान्तिकारी नागपुर भेजा गया, जिसे जापान पहुँचना था। यह घटना सिद्ध करती है, कि नागपुर का यह दल जिसमें केशवराव और वीर सावरकर के अनुज नारायणराव सावरकर शामिल थे, कलकत्ते की अनुशीलन–समिति से सीधे संबद्ध था और बंग–भंग–आन्दोलन की उग्रता के कारण समिति इन दिनों सरकार द्वारा गैर–कानूनी घोषित की जा चुकी थी। केशवराव ने बंगाल के उस विप्लवी संन्यासी को सब प्रकार की सहायता दी और छह महीने बाद उसे जापान जाने के सब साधन जुटाये। इन दिनों केशवराव "अलीपुर–बम–केस" के अभियुक्तों के मुकदमे के लिए नागपुर तथा आसपास के क्षेत्र में पैसा इकट्ठा करने में भी लगे थे, साथ ही कलकत्ता पहुँचने को भी व्यग्र थे। दिसम्बर, १६०६ को प्रवेशिका–परीक्षा का प्रमाण–पत्र उन्हें मिल गया। विप्लवी नेता पुलिनबिहारी दास का दल कलकत्ते में केशवराव की प्रतीक्षा कर रहा था। केशवराव हेडगेवार के पास कोई साधन नहीं, कैसे कलकत्ता में रहेंगे, कहाँ रहेंगे ? खर्च कैसे चलेगा ? सभी प्रश्न थे। परन्तु जो खुद रास्ता बनाते–बनाते एक दिन राह बन गया, उसे कौन विघ्न–बाधा एक जगह बाँधकर रोक सकती थी ? ७०० मील दूर कलकत्ता है, लेकिन उसे वे दूर नहीं मान सके, क्योंकि अन्तरंग मन से उनका रिश्ता पहले ही बंग–भंग आंदोलन तथा वहाँ की "अनुशीलन–समिति" से जुड़ चुका था। वे बोरिया–बिस्तर और कुछ किताबें लेकर कलकत्ता आ गए। यह सन् १६१० की बात है।

नलिनी किशोर गुह की साक्ष्य

उन दिनों की बातें याद करके कलकत्ता के प्रसिद्ध विप्लवी श्री नलिनीकिशोर गुह ने मुझे बताया था कि "७०, बऊ बाजार स्ट्रीट" पर जो "मराठा–लॉज" था, उसमें मेरे विप्लवी सहयोगी और अन्तरंग मित्र डा० केशवराव हेडगेवार अपने साथी डा० नारायणराव सावरकर और डा० आठवले के साथ आकर रहे थे। बाद में फिर "कन्हाईलाल धर लेन" वाले छात्रावास में भी उनसे मेरी भेंट हुआ करती थी। डा० हेडगेवार बड़ी बलिष्ठ देह के थे। कितनी ही बार उनसे देश के बारे में तथा विप्लवी कार्यों के लिए एकान्त वार्ता हुई। मेरी उनसे मित्रता प्रगाढ़ होती गई। वे मुझे भाये। मैंने उन्हें पवित्र चित्त, अग्नि–शुद्ध–चरित्र और तेजस्वी स्वभाव का पाया, दल के जोखिम के कामों के लिए उन्हें सदैव सन्नद्ध-तत्पर देखा। हमारे लोक-संग्रह के काम के लिए भी वे प्रस्तुत रहते थे। केशव हमारे दल के थे। मेरे ही द्वारा वे भर्ती हुए थे तथा दल की अंतिम प्रतिज्ञा में भी वे दीक्षित थे। यह प्रतिज्ञा सब सदस्यों को नहीं दी जाती थी।"

चिट्ठियों की यह साक्षी

नलिनीदा की बहुत–सी चिट्ठियाँ बंगला भाषा में हैं तथा उनकी वह हस्तलिखित साक्षी मेरे पास है, जिसमें उन्होंने बताया है कि "उन दिनों अरविन्द घोष 'अलीपुर–बम–केस' से रिहा होकर आ गए थे और मेरे साथ डा० केशवराव हेडगेवार उनको देखने 'कालेज स्क्वायर' गये थे, क्योंकि अरविन्द घोष तब वहीं कृष्णकुमार मित्र के घर रह रहे थे। मित्र महामना 'संजीवनी' के सम्पादक थे। एक दिन प्रसिद्ध विप्लवी नेता रासबिहारी बोस जो बाद को फरार होकर जापान चले गये– को लेकर मैं, डा० केशवराव के छात्रावास पर गया था और उन्हें मिलाया था, क्योंकि केशवराव अब हमारे परम

विश्वस्त सहकर्मी बन चुके थे। रासू बाबू जब केशवराव से मिलकर लौटे तो कहने लगे, "मुझे तो ये बहुत अच्छे मालूम पड़े। जैसी आस्था, वैसी ही दृढ़ता और वैसा ही स्वभाव। अच्छे विप्लवी संगठक में यही सब सद्गुण अपरिहार्य हैं।" आज सोचकर आश्चर्य होता है कि एक ही नजर में कैसे रासू बाबू केशवराव को पहचान गए थे? यह मुलाकात केशवराव से "कन्हाईलाल धर लेन" में हुई थी। मैं एक बन्द घोड़ागाड़ी में बिठाकर रासबिहारी बोस को वहाँ ले गया था। केशवराव से उनकी वार्ता होते समय मैं वहाँ से हट आया था, जैसा कि हमारे दल का नियम था। बाद में इस भेंट से केशवराव को बहुत प्रसन्न पाया। वे बोले थे– "ही इज ए वन्डरफुल मैन" (वे एक आश्चर्यजनक व्यक्ति हैं) दरअसल रासू बाबू उन दिनों एक बड़ी रहस्यमय योजना के सूत्रधार बनकर कलकत्ता आये थे। दिल्ली में लार्ड हार्डिंज के स्वागत में आयोजित होने वाले समारोह की खबर लग चुकी थी और रासूदा ने तभी तय कर लिया था कि क्रांतिकारी बन्धु उस समारोह की धूमधाम को मिट्टी में मिलाकर रहेंगे तथा इस दारुण अपमान व लज्जा को चुपचाप नहीं सह लेंगे। लार्ड हार्डिंज पर बम फेंकने की योजना बनाकर ही शायद रासूदा कलकत्ता आये थे। उस योजना को उन्होंने राष्ट्रीय आवश्यकता और राष्ट्रीय नवचेतना जगाने वाली ही समझा होगा। ऐसे अवसर पर वे केशवराव हेडगेवार से भी मिले, यह कम महत्व की बात नहीं। उन्होंने केशवराव से क्या परामर्श किया– मैं नहीं जान सका और न उसे जान सकने की बात ही हम लोग तब सोचते थे। दल में परास्पर ऐसी जिज्ञासा करने की सख्त मनाही थी। उन दिनों रासू बाबू कलकत्ता बहुत गोपनीय रूप से आते थे तथा पुलिस की नजर बचाकर ही किसी विप्लवी से मिलते थे।"

नलिनीदा ने मुझे बताया कि "एक और दिन की भी याद आती है, गहरी काली रात थी कि उसी समय बंगाल के सुप्रसिद्ध क्रांतिकारी नेता प्रतुलदास (प्रतुलचन्द्र गांगुली) ने आकर द्वार खटखटाया। मैंने कमरा खोला, तो वे अन्दर आ गये। उनका एक साथी एक भारी बकुचा लिए अन्यत्र ठहर गयाथा। आते ही उसे बकुचे की बात बताकर कहने लगे, "नलिनी! वह कुछ जरूरी सामान है, जोखिम का है और उसे अभी ही कहीं भरोसे की जगह रखवाना होगा। कौन है ऐसा तुम्हारा मित्र जो अपने दल का भी हो?"

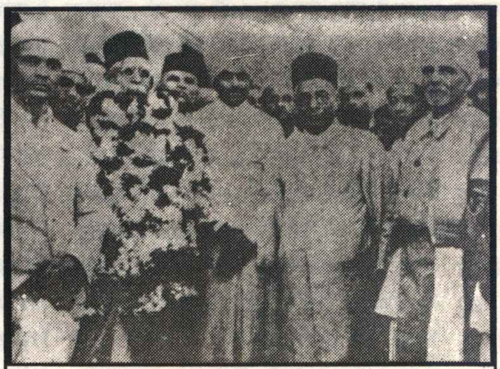

सत्याग्रह–आन्दोलन में जेल की सजा काटकर रिहा होने पर डॉ. हेडगेवार का स्वागत किया गया

'एनाटामी की नोटबुक'

मैंने तत्काल डा० हेडगेवार का नाम बताया। वे जानते थे उन्हें। सन्तुष्ट–आश्वस्त होकर बोले, "वे ठीक हैं। उन्हीं को सौंप दें चलकर।"

प्रतुल दा तुरन्त वापस गये। साथ मैं भी चला। प्रतीक्षारत साथी को पीछे–पीछे आने के लिए कहकर हम तीनों उसी रात "कन्हाईलाल धर लेन" स्थित "मराठी छात्रावास" पहुँचे। डा० हेडगेवार के कमरे पर दस्तक दी। पुकारा। पुकार सुनते ही केशवराव ने जवाब दिया। तुरन्त बाहर आ गए। प्रश्नसूचक दृष्टि से हमें देखते–देखते बोले, "अन्दर आइए न"। भीतर जाने पर प्रतुल दा ने उनसे कहा, "यह सामान सहेज कर रख दें। सावधान रहें। कलदिन के तीन बजे हमारा आदमी आकर ले जायेगा।" फिर कहा– "वह व्यक्ति आपको चिट्ठी देगा, जिसमें लिखा मिलेगा "एनाटॉमी की जो नोटबुक वहाँ है, इसे दे दें।" तब आप यह सामान उसी के हवाले कर दें।

"वह दृढ़ता केशव में प्रत्यक्ष देखी"

"केशवराव ने केवल यह कहा– "बेफिक्र होकर जाइये। अब उसकी जिम्मेदारी हमारी है।" उनकी आवाज में जो विश्वास एवं दृढ़ता थी, उसमें प्रतुलदा ने ऐसा कुछ अनुभव किया कि फिर कुछ कहा नहीं। बकुचे में सब रिवाल्वर आदि उन्हें देकर वापस गये।

"इस प्रकार का विश्वास सामान्य बात नहीं। केशवराव पर हमारा सबका ऐसा ही कुछ भरोसा था, विश्वास और श्रद्धा थी। उनकी कथनी–करनी में कभी भेद सम्भव नहीं था। यही तो वस्तुतः विप्लवी चरित्र की नींव है और वह हमने केशव में प्रत्यक्ष देखी है। कितनी ही बार वे मुझसे बंगला गीत सुनते थे, केशवराव रुचि रखते थे देशात्म–बोधक गीतों में। मैं वही सुनाता था और वे तन्मय होकर सुनते रहते थे।"

नलिनीदा डा० हेडगेवार की स्मृति भूल नहीं पाते। बताने लगे– "एक और दिन की बात याद आती है। मैं रहता था 'सर्कुलर रोड वाले छात्रावास' में। अंग्रेजों को इसी छात्रावास में एक दिन बम बनाने का कारखाना मिल गया और यही छात्रावास तब 'राजाबाजार बम केस' के नाम से जुड़कर मशहूर हो गया था, तो यहीं एक बार केशवराव आकर मेरे पास बैठे। बोले, 'वही गीत सुनाओ, "हउक भगन जलधि मग्न...' –याद आता है, मेरे मित्र केशव ने यह गीत उस दिन कई बार आग्रहपूर्वक सुना और अन्त में भावमग्न हो मेरे हाथ पकड़कर बेठे रहे..... मौन, आत्मलीन–से। उनकी वह भावपूर्ण मुद्रा आज भी मुझे भूलती नहीं। आज भी उनका पता मेरी जबान पर है, 'इतवारी दरवाजा, नं०– ११, नागपुर'। बंग–भंग के उन दिनों में केशवराव ने तन–मन–धन सब कुछ लगाकर विप्लवी कार्यों में आगे आकर भाग लिया। बाद में जब वे वापस गए और हमें भी आगे 'नागपुर–कांग्रेस' में जाना पड़ा, वहाँ भी केशवराव को मैंने और मेरे विप्लवी मित्रों ने उसी क्रांतिकारी रूप में सक्रिय पाया। 'नागपुर–कांग्रेस' में जितने भी सेवा–दल के स्वयंसेवक थे– उनके संगठन, मार्गदर्शक के रूप में केशव में हमने वही निरन्तर कर्म–तत्परता, लोक–संग्रही शक्ति प्रत्यक्ष देखी। मेरे साथ वे वहाँ कितने ही कैम्पों में गये थे। आत्म–विसर्जन की उनकी वह व्याकुलता तथा अदम्य उत्साह किसी को भी उन दिनों प्रेरणा देती थी। नागपुर से भी वे मुझे पत्र लिखते रहे थे।"

विप्लवी जीवन के प्रमाण

यहाँ यह बता दूँ कि डा० हेडगेवार के परम् मित्र ये नलिनीदा कौन हैं ? वे 'बांगलाय विप्लववाद' नामक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी इतिहास के यशस्वी लेखक हैं। इस ग्रन्थ के उद्धरण बाद के सभी लेखकों ने अपनी पुस्तकों में दिये हैं। 'बन्दी जीवन' में शचीन्द्रनाथ सान्याल ने और अपने विप्लव–इतिहास–ग्रन्थ में मन्मथदास गुप्त ने भी। सन् १६१०–११ में ही नलिनीदा को 'ढाका–षड्यंत्र–केस' में गिरफ्तार किया गया तथा कुल दस वर्ष जेल में ही रहे। बंगला की प्रसिद्ध 'बरहा–डकैती' में भी नलिनीदा शामिल थे। इस रईस नवाब के यहाँ यह बड़ी डकैती क्रान्तिकारियों ने बंग–भंग के ही दिनों में डाली थी– नदी के रास्ते वे दो नावों में गये थे और इसमें कोई भी उस समय पकड़ा नहीं गया था। यद्यपि पुलिस दूर तक स्टीमर से क्रान्तिकारियों का पीछा करती रही थी परन्तु उस आँधी–पानी वाली तूफानी रात में क्रान्तिकारी साफ निकल गए। रवि ठाकुर और शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय ने भी नलिनीदा के लेखन को सराहा है। डा० केशवराव के पुराने विप्लवी साथी डा० नारायणराव सावरकर भी जब सन् १६१० में महाराष्ट्र लौटे तो वे गिरफ्तार हो गए और उन पर 'सतारा–षड्यन्त्र–केस' चला, जिसमें उन्हें लम्बी सजा दी गई। वे वीर सावरकर के छोटे भाई थे। जिन्हें डा० हेडगेवार के विप्लवी जीवन के बारे में ये बातें शंकित करें वे अभी भी विप्लवी नेता त्रैलोक्यनाथ चक्रवर्ती (त्रैलोक्य महाराज) की प्रसिद्ध पुस्तक 'जेल में ३० वर्ष' पढ़कर देख सकते हैं। इसमें डा० हेडगेवार को उस जमाने का फोटो देकर उनके विप्लवी जीवन की साक्षी संजोई गई है और त्रैलोक्य महाराज बंगाल के सर्वप्रसिद्ध विप्लवी नेता रहे हैं। जीवन के ३० वर्ष उनके जेल में ही बीते। पूर्वी पाकिस्तान बन जाने पर भी त्रैलोक्यदा वहीं डटे रहे और उस वक्त भी वे जेल काटते रहे। बंगलादेश बनने पर वे भारत आये थे। प्रधानमन्त्री इन्दिरा गान्धी ने उनका सत्कार किया था और दुर्भाग्य से उसी समय दिल्ली में ही उनका निधन हो गया। ऐसा जाना–माना क्रांतिकारी जब डा० हेडगेवार को अपने ग्रन्थ में विप्लवी के रूप में उद्धृत कर गया उसके फोटो सहित– फिर भी यदि स्वतन्त्र हिन्दुस्तान के नेता कहें, पूछें कि "संघ के लोगों ने आजादी के लिए क्या किया ?" तो यह विडम्बना नहीं तो और क्या है ?

बाद में सन् १६४० में महायुद्ध के समय एक बार त्रैलोक्य महाराज (त्रैकाल्यनाथ चक्रवर्ती) तथा उन दिनों उत्तर प्रदेश में कार्यरत क्रांतिकारी नेता योगेशचन्द्र चटर्जी नागपुर जाकर डा० हेडगेवार से मिले थे और उन्हीं दिनों सुभाषचन्द्र बोस भी डा० केशवराव से भेंट करने नागपुर पहुँचे थे। यह बात किसी से छिपी नहीं है। योगेशचन्द्र चटर्जी ने अपनी क्रांति–पुस्तक में डा० हेडगेवार से अपनी भेंट का जिक्र किया है और लिखा है कि "मेरे साथ त्रैलोक्यानाथ चक्रवर्ती को देखते ही डा० हेडगेवार ने उन्हें पहचान लिया, लेकिन डा० हेडगेवार ने उनके उस क्रांति–काल के नाम (काली बाबू) से ही संबोधित किया था।"

खुफिया पुलिस की निगरानी

जिन दिनों डा० हेडगेवार कलकत्ता के 'नेशनल मेडिकल कालेज' में पढ़ते थे, रात के १२ बजे तक रोज खुफिया पुलिस का आदमी उनकी निगरानी करता रहता था। यहाँ तक कि कभी–कभी वह वहीं जीने के पास सो भी जाता था, क्योंकि डा० हेडगेवार रात में कब कहाँ जायेंगे; कितनी देर रात में लौटेंगे– कुछ ठीक नहीं रहता था। वे अपने कार्यों का ब्यौरा किसी को

भी बताते नहीं थे। क्रांतिकारियों का ऐसा नियम भी नहीं था कि वे क्रांतिकारी गतिविधियों की चर्चा दूसरों से करें। इस कारण कलकत्ते एवं बाद में मध्य प्रदेश व महाराष्ट्र में डा० हेडगेवार की विप्लवी गतिविधियों को जान सकने का कोई उपाय नहीं रह गया। बाद में भी वे इस विषय पर जिज्ञासा किए जाने पर मौन ही रहते थे तथा ऐंसे प्रश्नों को टाल दिया करते थे। कोई काम किया देश की खातिर, तो उसे बताते फिरना उनके स्वभाव में नहीं था। जैसे कि सैनिक शस्त्रास्त्रों की कई पेटियाँ स्टेशन से एक बार क्रान्तिकारियों ने दल के लिए अपने कब्जे में कर लीं। उस काम में डा० हेडगेवार का ही प्रमुख योगदान था, परन्तु वे कभी भी इसकी चर्चा नहीं करते थे। जेल से रिहा होने पर वे 'मध्य प्रदेश–कांग्रेस' के सहमन्त्री बनाये गए और काम करते रहे। लेकिन बाद में कभी भी इसका बखान करते उन्हें नहीं पाया गया कि 'मैं कांग्रेस का प्रान्तीय सेक्रेटरी था।' उस वक्त भी नहीं, जब वर्धा में गान्धी जी उनके कैम्प में गए और अपने कमरे पर बुलाकर बात की। प्रतुलदा, नलिनीदा व त्रैलोक्य महाराज सरीखे विप्लवी नेता ही नहीं, उस जमाने के बहुचर्चित विद्वान् तथा देशभक्त श्यामसुन्दर चक्रवर्ती का भी कलकत्ते में डा० हेडगेवार से बहुत विश्वास और निकट का सम्बन्ध रहा। एक उदाहरण देता हूँ। कलकत्ते में जिन दिनों 'बंग–भंग आंदोलन' चरम सीमा पर था तथा उसके समर्थन में स्वदेशी आन्दोलन की धूम मची थी, एक रात श्यामसुन्दर चक्रवर्ती कई विप्लवी जनों के साथ डा० हेडगेवार के कमरे पर गए, उन्होंने तुरन्त केशवराव को अपने साथ चलने को कहा। वे चल पड़े। चलते–चलते एक गाँव आया। उस अन्धकारमयी रजनी में केशवराव ने देखा, वहाँ एक लाश पड़ी है। पता चला, वह विप्लवी युवक था। फरार था। रहने वाला था रत्नागिरी का। बम बनाने में पारंगत था। बंगाल के विप्लवी जनों को भी वह बम बनाने की विधि बताता था। उन दिनों तभी सख्त बीमार पड़ा और कलकत्ते के निकटवर्ती उस नितांत अपरिचित गाँव में फरार हालत में ही उसका निधन हो गया। केशवराव और उनके विप्लवी साथियों ने वहीं रातोंरात उसकी अन्त्येष्टि की। तो कहना यह है कि श्यामसुन्दर चक्रवर्ती जिन केशवराव को उस भयावनी रात में लाश ठिकाने लगाने के लिए ले गए, वह क्या बिना अन्तरंगता के कभी सम्भव है? यह विश्वास केशवराव ने कलकत्ता रहकर अपने छात्र जीवन में उन दिनों अर्जित किया, यह क्या सामान्य बात है? जीवन में देश–दुःख की ज्वाला दहके बिना यह प्रतीति साध्य नहीं होती, और ये वे श्यामसुन्दर चक्रवर्ती थे, अरविन्द घोष के "वन्दे मातरम्" में जिनके लिखे सम्पादकीय लेख की प्रशंसा अरविन्द घोष से एक दिन स्वयं लोकमान्य तिलक ने की थी, क्योंकि तिलक जी ने समझा था कि वह संपादकीय अरविन्द का लिखा है। अतः तिलक उन्हें उनके ठिकाने पर बधाई देने पहुँचे थे, तब अरविन्द ने कहा– "इसे तो श्यामसुन्दर चक्रवर्ती ने लिखा था, वही बधाई के पात्र हैं।" ऐसे मनीषी थे श्यामदा। इन श्याम बाबू की बेटी के ब्याह में भी डा० हेडगेवार ने प्रभूत मदद की। धन जुटाया, क्योंकि इतने विद्वान् श्याम बाबू का हाल क्या था– नंगे पाँवों में घूमते रहते। छोटा कद, श्यामल शरीर, क्षीणकाय। सन् १६१० में वे बर्मा की जलावतनी (देश–निकाले) की सजा भुगतकर वापस आये थे और आमदनी का कोई भी जरिया न था। तब देश के काम के लिए कहीं कोई पैसा ऊपर नहीं रखा रहता था। सर्वस्व होमने का नाम ही देशभक्ति था। देना ही देना, लेना कुछ नहीं।

ऐसे ही एक विप्लवी नेता थे राजस्थान के अध्यापक पं० अर्जुन लाल सेठी। ७ वर्ष की जेल से वे बहुत जर्जर, मृतप्राय होकर छूटे तो डा० हेडगेवार ने उन्हें नागपुर में रखकर सेवा की। उनकी बेटी का ब्याह भी कराया। स्पष्ट है कि न केवल बंगाल वरन् महाराष्ट्र, राजस्थान, पंजाब तक डा० हेडगेवार का क्रांतिकारियों से सक्रिय संपर्क था, परन्तु वह इतिहास उन्होंने लिखकर नहीं रखा, तो जाने भी कौन? वे आत्मकथा व आपबीती लिखने वाले थे नहीं। देश का कुछ काम बन पड़ा तो करके उसे भूल जाने वालों में से वे थे। यही विप्लवी परम्परा है। मरते समय भी कोई न जाने नाम–धाम और काम, यह प्रयास मौत के मुँह में बैठे विप्लवी का रहता था। कोई वक्तव्य नहीं, अन्तिम संदेश नहीं, आत्मप्रचार–परिचय भी नहीं। अब रत्नागिरी का जो उक्त विप्लवी कलकत्ता के पास के गाँव में नितांत अपरिचय और अज्ञातवास के बीच मर गया, आज भी तो कोई उसका नाम–पता नहीं जान पाया। आत्मगोपन और आत्म–विसर्जन की यह प्रक्रिया उस जमाने के विप्लवीजनों ने पदे–पदे चरितार्थ की। मैंने बहुत खोज करके जान पाया कि उस महाराष्ट्रीय बम–विशेषज्ञ विप्लवी का नाम था, डा० वी०वी आठले। एक इतिहास बनाया। उाकी ध्येय–निष्ठा

भी कैसी थी कि बंग–विभाजन समाप्त होने पर भी वे कभी शांत नहीं बैठे। हॉ, बाद में भीषण बाढ़ का प्रकोप हुआ तो उसमें भी वे सहायता के लिए आगे आये। केशवराव ने भी उस कार्य में हाथ बँटाया। कैसे थे वे सेवा–भावी तरुण कि गले में अंगोछे से बाँधकर हारमोनियम लटका रखा और पाँच–सात की टोली में गली–गली घूमकर बाढ़–पीड़ितों के लिए पैसा इकट्ठा कर रहे हैं। कोई लाज शर्म नहीं। परमार्थ में लाज कैसी ? ऐसे ही काम होता था। उस घोर पराधीनता काल में भी देश की अस्मिता का ऐसा प्रकाश था।

केशवराव के सहयोगी मौलवी

आज भी हिन्दू–मुस्लिम एकता के नारे आये दिन लगते हैं और लोग समझाते है कि इस एकता का ठेका सिर्फ आज की कांग्रेस या कम्युनिस्ट दल ने ही ले रखा है। लेकिन एक मिसाल डा० हेडगेवार के जीवन की है। कलकत्ते में एक मौलवी थे– लियाकत हुसैन। स्वदेशी आन्दोलन के कट्टर भागीदार। तुर्की टोपी तक भी छोड़ रखी थी। हमेशा देशी टोपी पहनते। पाजामा–अचकन में उनकी सादगी टपकी पड़ती। सरल चेहरा। ईमान का नूर आँखों में झलकता। डा० हेडगेवार से उनकी गहरी छनती थी। अक्सर जब डा० हेडगेवार कलकत्ते में स्वदेशी प्रचार के लिए प्रभात–फेरी निकालते तो उक्त मौलवी साहब सबसे आगे रहते, बल्कि झंडा उन्हीं के हाथ में नजर आता। फिर दिन में शाम को 'कालेज–स्क्वायर' और कभी 'बीडन स्क्वायर' आदि में सार्वजनिक सभाएँ होतीं तो डाक्टर हेडगेवार वक्ताओं में होते और सदारत (अध्यक्षता) करते मौलवी लियाकत हुसैन। तिलक जी के वे बड़े प्रशंसक थे। सेवा–प्रवण थे। गरीब छात्रों की फीस चंदा करके भरा करते। सेवा–कार्यों के लिए और संकटग्रस्त आदमी के लिए मौलवी एक–एक पैसा माँग कर धन इकट्ठा करते, लेकिन खुद अपने लिए दो आने से चार आने तक का खर्च महीने भर के लिए काफी समझते। जो छात्र किताबें न जुटा पाते, उन्हें वे किताबें खरीद देते, जबकि वे सब हिन्दू छात्र ही होते थे। डा. हेडगेवार उन्हें बहुत मानते थे। मौलवी बूढ़े थे। दौड़–धूप में बीमार हो गये। खाट पकड़ ली। पता चला तो केशवराव दोड़े आये– दो महीने मौलवी साहब की तीमारदारी की। मौलवी साहब ने स्वदेशी प्रचार का ही उद्देश्य अपनी दुकानदारी में भी रखा था। दुकान का नाम था 'कुबेर–वस्तु–भंडार'। बिक्री की सब चीजें स्वदेशी। ऐसे इन्सान, वतन की सेवा के ऐसे शैदाई (दीवाने) कम ही मिलते हैं।

संघ–स्थापना

बंग–भंग के समय कलकत्ता में जब एक सभा की सदारत (अध्यक्षता) मौलवी लियाकत हुसेन कर रहे थे तो किसी ने तिलक जी को कुछ बुरा–भला कह दिया। डा० हेडगेवार ने उठकर उसे पीट दिया। उनकी बलिष्ठ देह से पेश पाना गुण्डों के वश का न था। डा० हेडगेवार जिस सभा में हों, वहाँ कभी गड़बड़ी हो नही सकती थी। गुण्डे उनसे डरते थे। देश का ही दुःख–दर्द उन्हें जीवन भर अपनी हड्डियाँ गलाने के लिए बाध्य करता रहा– उत्प्रेरित। और वे इस कार्य को किसी पर एहसान नहीं मानते थे। देशभक्ति उनकी नजर में नागरिक का एक सामान्य और अपरिहार्य कर्त्तव्य था। इसी भावना से उन्होंने, सन् १९२५ के दशहरे पर 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' की नींव डाली। समाज में एकता हो, भाषा–प्रान्तीयता–जातीयता–ऊँच–नीच के भेद खत्म होकर हिन्दुस्थान एक शक्ति–सम्पन्न, संगठित, स्वावलम्बी और स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में उभरे, इसी ध्येय को सामने रखकर उन्होंने पुनर्जागरण की भेरी बजाई। वह समय ऐसा था कि इस कार्य को तब समझने वाले कम थे, शंका और विवाद खड़ा करके दुरदुराने वाले अधिक। जो समझते भी थे, वे साथ आने में झिझकते थे। सुबह–शाम एक राह से सिर झुकाकर अपने पेशे पर आना और उसी भाव से वापस आकर घर में सो जाना, यही सद्गृहस्थ की, एक 'शरीफ' आदमी की पहचान मानी जाती थी। अंग्रेज राज करें तो करें, तुम्हें क्या ? तुम क्या खुदा हो ? अपना काम देखो। बाकी पचड़े किसी और के लिए हैं तो इस फिजा में अगर डा० हेडगेवार और उनके द्वारा चलाये गए संघ–कार्य को लोगों ने 'सिरफिरों का काम' समझा तो क्या आश्चर्य ! आज भी इस देश में ऐसे लोग कम नहीं। परन्तु डा० हेडगेवार ने कभी इस बात की परवाह न की कि लोग उन्हें प्रशंसते हैं या निन्दा करते हैं, वरन् उनका कहना था, जीवन–मन्त्र था कि "अपने विरोधी को भी खूब प्रेम करो। यही उपाय है और श्रेयस्कर।" प्रायः लोग उनका यह जवाब सुनकर अचरज करते थे। अपने विचारों से विरोध रखने वाले के यहाँ भी डा० हेडगेवार जाते और उसे वे 'देव–दर्शन' कहते थे। एक विप्लवी की संघ के आद्य–सरसंघचालक के रूप में यही चरम आस्था थी, इसे कितने लोग समझते हैं ? □

–केशवभवन, माडल हाउस, लखनऊ

संघ की ७५वीं वर्षगांठ पर

देवदुर्लभ नेतृत्व

□ विजय कुमार

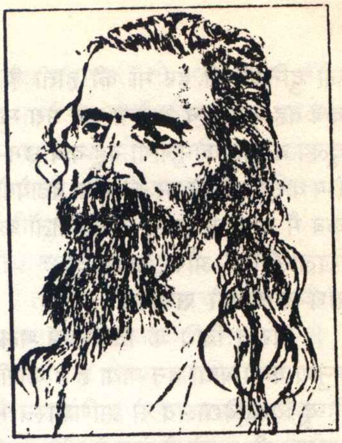

राष्ट्रभक्त मनुष्यों के निर्माण की सफलतम प्रयोगशाला राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का प्रारम्भ से ही यह सौभाग्य रहा है कि उसे ऐसे देवदुर्लभ कार्यकर्ताओं का नेतृत्व प्राप्त हुआ जो संघ–गंगा के प्रवाह को अनेक बाधाओं तथा विपत्तियों में से सफलतापूर्वक निकाल ले गये। यह प्रवाह आज भी भारत के सभी जनपद एवं दुनिया के उन सभी देशों में अविरल, अविराम रूप से बह रहा है, जहाँ–जहाँ हिन्दू निवास करते हैं।

संघगंगा के भगीरथ

संघ गंगा के भगीरथ डॉ० केशव बलिराम हेगडेवार का नाम आज विश्व के लिए अनजाना नहीं है। यद्यपि आज से ६० वर्ष पूर्व २१ जून, १६४० को जब उनका देहावसान हुआ, तो उन्हें जानने वाले लोग भारत में बहुत कम थे। संघ के वरिष्ठ प्रचारक श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी ने एक बार कहा था कि किसी व्यक्ति की महानता का मूल्यांकन इस बात से होता है कि आगे आने वाले इतिहास पर उसकी छाया कितनी दूर तक जाती है। इस दृष्टि से देखें तो डॉ० हेडगेवार के समकालीन अनेक सामाजिक, राजनीतिक नेताओं को समय ने इतिहास के कूड़ेदान में फेंक दिया है। उनके विचार, संगठन तथा कर्तृत्व को लोग आज भूल चुके हैं– परन्तु डॉक्टर जी के विचारों तथा उनकी एकमात्र कृति संघ का प्रचार–प्रसार तथा प्रभाव दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। १६८६ में डॉ० हेडगेवार तथा पं० जवाहरलाल नेहरू दोनों की जन्म शताब्दी थी। तमाम सरकारी प्रयासों तथा करोड़ों रुपये के बजट के बावजूद लोग नेहरू जी को स्मरण नहीं कर सके जबकि जन सहयोग तथा कार्यकर्ताओं के योजनाबद्ध प्रयास के कारण डॉ० हेडगेवार का नाम गाँव–गाँव में पहुँच गया। **नर सेवा–नारायण सेवा** के उद्‌घोष को सार्थक करते हुए स्वयंसेवकों ने हजारों सेवा के प्रकल्प प्रारम्भ किये जिनकी संख्या आज ४०,००० तक जा पहुँची है।

डॉक्टर जी द्वारा संघ की स्थापना तथा अंतिम श्वांस तक एकमात्र उसी के चिन्तन में व्यस्त रहकर संघ को भारत के सभी प्रान्तों में पहुँचा देना– यह सब दैवी योजना नहीं तो और क्या है ? अन्यथा कलकत्ता से चिकित्सा–शास्त्र की उपाधि लेने के बाद ब्रह्मा (वर्तमान म्यांमार) में ३०००/– रुपये मासिक की सरकारी नौकरी का आकर्षण भला किसे रोक सकता था ? कल्पना कीजिये १६२० में ३०००/– रुपये की कीमत क्या होगी ? पर विधि को तो डॉक्टर जी के हाथों से कुछ और ही कार्य कराना था। इसलिए डॉक्टर जी ने यह प्रस्ताव विनयपूर्वक अस्वीकार कर दिया और नागपुर लौट आये।

द्वितीय सरसंघचालक

सामान्य अनुभव यही है कि व्यक्ति के जाने के बाद उनके द्वारा स्थापित संस्थाएँ भी धीरे–धीरे अपना अस्तित्व खो बैठती हैं परन्तु संघ के साथ ऐसा नहीं हुआ। उसका कारण था कि डॉक्टर जी ने अपने जीवनकाल में ही उसको एक मजबूत वैचारिक एवं भौगोलिक आधार प्रदान कर दिया था। साथ ही अगले सरसंघचालक के लिए उन्होंने **माधव सदाशिव गोलवलकर** नामक जिस संन्यासी स्वभाव वाले प्राध्यापक का चयन किया– वह हर कसौटी पर खरा सिद्ध हुआ। संघ तथा देश का आगामी इतिहास इस तथ्य का जीवन्त प्रमाण है।

जिस दम्पत्ति की नौ में से आठ संतानें असमय काल–कवलित हो गई हों, वे अपने एकमात्र बचे पुत्र से कैसी–कैसी आशाएँ–अपेक्षाएँ रखते होंगे– इसका उत्तर ढूँढ़ने के लिए तो हमें सौ साल पीछे जाकर श्री सदाशिव राव तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मीबाई के मन से ही पूछना होगा। और वे अपेक्षाएँ हर वर्ष क्रमशः बढ़ती जाती थीं जब वे सुनते थे कि उनके दुलारे मधु ने परीक्षा में सर्वोच्च स्थान पाया है। विद्यालय के अध्यापकों तथा प्रधानाचार्यों के मुख से मधु की प्रशंसा सुनकर उनका सीना फूल जाता था। पिता श्री सदाशिव राव सोचते थे कि माधव शीघ्र ही किसी अच्छी सरकारी नौकरी में लग कर मेरा नाम ऊँचा करेगा और माँ की आकांक्षा तो वही थी

जो दुनिया की हर माँ की होती है– कब वह शुभ दिन आयेगा जब मेरा मधु दूल्हा बनेगा, कोमलांगी बहू कब छम–छम करती हुई मेरे घर की शोभा बढ़ायेगी, कब मैं गोदी में अपने नाती–पोतों को खिलाऊँगी ? और.... और.... ।

संघ कार्य को समर्पित

परन्तु विधि के विधान में भला मनुष्य कभी बाधा बन पाया है ? काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राणिशास्त्र में एम.एस.सी. करने के बाद वे शोध कार्य हेतु मद्रास गये। पर वहाँ का मौसम उन्हें अनुकूल नहीं आया। अतः वे फिर से काशी आये तथा विश्वविद्यालय में ही अध्यापन कार्य करने लगे। छात्रों के बीच अत्यधिक लोकप्रियता के कारण उन्हें सब 'गुरुजी' कहने लगे। आगे उनका यही नाम प्रचलित हो गया। काशी के इस दूसरे प्रवास में उनका सम्पर्क नागपुर के एक अन्य छात्र प्रभाकर बलवंत दाणी से हुआ जो वहाँ बी.ए. कर रहे थे तथा संघ की शाखा भी लगाते थे। इस छात्र ने उनका परिचय शाखा से कराया और फिर धीरे–धीरे माधव और संघ एकरूप होते चले गये। माधव के जीवन में वह दिन बड़ा महत्वपूर्ण था जब काशी की शाखा पर संघ संस्थापक डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार पधारे। आँखों ही आँखों में दोनों ने एक दूसरे को देखा, परखा, जाँचा और फिर माधव संघ के साथ–साथ डॉक्टर हेडगेवार के प्रति भी समर्पित होते चले गए।

परन्तु अभी माधव को संघ के नेतृत्व संभालने से पूर्व अनेक सीढ़ियाँ और पार करनी थीं। माता–पिता के आग्रह पर उन्होंने नागपुर आकर वकालत की परीक्षा पास की, पर झूठ और धोखाधड़ी पर आधारित यह व्यवसाय उन्हें नहीं भाया। इसी दौरान उनका सम्पर्क रामकृष्ण मिशन से हुआ तथा उस ओर भी उनका आकर्षण क्रमशः बढ़ता ही गया। १६३६ की दीपावली से पूर्व माधव ने नागपुर छोड़ दिया और सारगाछी आश्रम (बंगाल) जाकर विवेकानन्द के गुरुभाई स्वामी **अखण्डानंद** की चरणसेवा में रहने का निश्चय किया।

स्वामी अखंडानंद भी डॉ० हेडगेवार की भाँति मनुष्यों के बड़े पारखी थे। वे जानते थे कि जगतनियंता परमेश्वर ने माधव को किसी बड़े काम हेतु इस धरा पर भेजा है। इसलिए माधव के बार–बार संन्यास लेने के आग्रह को वे टालते रहे। मकर संक्रांति (१३जनवरी, १६३७) को उन्होंने माधव को अपने शिष्य के नाते दीक्षा तो प्रदान की पर यह निर्देश दिया कि तुम्हें संन्यास लेकर हिमालय की गिरि–कन्दराओं में तप नहीं अपितु समाज के बीच रहकर समाज सेवा का बड़ा दायित्व निभाना है। माधव ने पूज्य स्वामीजी के आदेश को शिरोधार्य किया और यहीं से दैवनिर्मित विधान पर उनका जीवन–रथ तेजी से दौड़ने लगा।

७ फरवरी, १६३७ को स्वामी अखंडानन्द जी के स्वर्गवास के पश्चात् माधव नागपुर लौट आये तथा उन्होंने स्वयं को संघ कार्य हेतु समर्पित कर दिया। घरवालों के विवाह–प्रस्तावों को उन्होंने यह कहकर ठुकरा दिया कि "विवाह की मेरी जरा भी इच्छा नहीं है, उससे मुझे कुछ भी सुख प्राप्त नहीं होगा। जहाँ तक वंश चलाने का प्रश्न है तो देश एवं समाज की रक्षा हेतु न जाने कितने वंश समाप्त हो गये और अभी भी होंगे।" तब कौन जानता था कि डॉ० हेडगेवार और माधवराव सरीखे महा मनीषियों के विचार–वंश को आगे बढ़ाने वाले लाखों लोग भारत ही नहीं तो दुनिया के कोने–कोने में कुछ वर्षों में ही खड़े हो जायेंगे।

पूज्य डाक्टर हेडगेवार अपनी क्षीण होती काया तथा विश्वपटल पर होने वाले परिवर्तनों से काफी चिन्तित थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के बादल विश्वाकाश पर मंडरा रहे थे। उनकी एकमात्र अभिलाषा थी कि संघ–कार्य तब तक इतनी प्रगति कर ले जिससे भारत की स्वतंत्रता के लिए होने वाले निर्णायक संघर्ष में वह प्रभावी भूमिका निभा सके। परन्तु उनका शरीर उन्हें प्रवास और परिश्रम की अनुमति नहीं दे रहा था। संघ का कार्य वे किसके हाथों में सौंपे– यह चिन्ता भी उन्हें खाये जा रही थी। उनकी आशाएँ धीरे–धीरे माधव पर केन्द्रित होने लगीं। उन्होंने अपने सभी वरिष्ठ सहयोगियों से इस बारे में परामर्श किया और २० जून, १६४० को अपनी शल्य चिकित्सा से पूर्व सबके सम्मुख अपना मंतव्य घोषित भी कर दिया। २१ जून, १६४० को पूज्य डॉ० हेडगेवार के देहावसान के बाद सरसंचालक का गुरुतर दायित्व माधवराव के कंधों पर आ गया।

अहर्निश राष्ट्र सेवा

१६४० से १६७३ तक, ३३ वर्षों के कार्यकाल में संघ तथा श्री गुरुजी के जीवन में कई निर्णायक तथा महत्वपूर्ण मोड़ आये, पर हर घटना–दुर्घटना को उन्होंने सहज भाव से लिया तथा डाक्टर जी द्वारा सौंपे गये संघरूपी ईश्वरीय कार्य को वे अबाध गति से आगे बढ़ाते गये। चाहे वह १६४७ का देशविभाजन हो या पू० गांधी जी की हत्या के बाद १६४८ में संघ पर प्रतिबंध या फिर १६६५ तथा १६७१ के भारत–पाक युद्ध में स्वयंसेवकों की प्रशंसनीय भूमिका।

भारतीय मजदूर संघ, भारतीय किसान संघ, वनवासी कल्याण आश्रम, अ०भा० विद्यार्थी परिषद, विवेकानन्द शिला स्मारक, विश्व हिन्दू परिषद... आदि कितने ही संगठनों को उन्होंने दृढ़ वैचारिक आधार प्रदान किया। शाखा कार्य भी देश के ७०–८० प्रतिशत जिलों तक पहुँच गया। संघ विचार को उपेक्षा की निगाह से देखने वाले लोग भी अब उसे अपने–अपने चश्मे के अनुसार प्रशंसा या विरोध की निगाह से देखने लगे।

अपने शारीरिक–मानसिक सभी प्रकार के कष्टों एवं पीड़ाओं को भुलाकर श्री गुरुजी इन ३३ वर्षों में संघ कार्य हेतु सतत देश–भ्रमण करते रहे। सम्पूर्ण देश की ६०–७० बार परिक्रमा करने वाले शायद वे एकमात्र नेता रहे होंगे। पत्राचार का भी उनका दायरा बड़ा व्यापक था। प्रतिदिन ५–७ पत्र तो वे लिखते ही थे। सम्पूर्ण जीवन में शायद ५०,००० से ज्यादा पत्र उन्होंने लिखे होंगे। १९६९–७० में उनके सीने में उभरी कैंसर की गाँठ तथा उसके निदान हेतु की गई शल्य–क्रिया भी उनके मार्ग में व्यवधान नहीं बनी। पर उन्हें यह अनुभव होने लगा कि परमेश्वर द्वारा निर्धारित कार्य में उनकी भूमिका अब धीरे–धीरे समाप्ति की ओर अग्रसर है।

महाप्रयाण

५ जून, १९७३ को उन्हें अपने महाप्रयाण का पूर्वाभास हो गया था। गत ३० वर्षों से उनके साथ छाया की तरह रहने वाले डॉ० आबाजी थत्ते को उन्होंने कहा– "आबा– आज घंटी बज रही है, लगता है बुलावा आने वाला है।" दिन में चिकित्सकों ने कुछ औषधि देनी चाही तो उन्होंने विनम्रतापूर्वक मना कर दिया। विधि के निर्धारित विधान में शायद वे बाधा बनना नहीं चाहते थे। सायंकालीन प्रार्थना उन्होंने कुर्सी पर बैठकर की और फिर रात्रि ९.०५ पर मन ही मन अपने गुरु श्री स्वामी अखंडानंद तथा पूज्य डॉक्टर जी का स्मरण करते हुए देह त्याग दी।

'मैं नहीं तू ही'

संन्यासी न होते हुए भी श्री गुरुजी ने संन्यस्त स्वभाव ही पाया था। एक बार साप्ताहिक धर्मयुग ने देश के प्रख्यात लोगों से उनके जीवन का ध्येयवाक्य माँगा– तो श्री गुरुजी ने लिखा– **'मैं नहीं, तू ही।'** पाँच अक्षरों के इस छोटे से सन्देश में उनका पूरा जीवन–दर्शन ही मानो झलक गया था। उनके देहावसान के बाद अनेक तथ्य प्रकाश में आये तो पता लगा कि पुरी पीठ के शंकराचार्य पद के लिए सर्वसम्मति से उनके नाम का अनुमोदन किया गया था, पर उन्होंने मठाधीश बनकर स्वर्ण–सिंहासनों पर बैठना स्वीकार नहीं किया। उनका लक्ष्य तो भारत के कोटि–कोटि हिन्दू बंधुओं तक पहुँचना था, जो गाँव की गलियों और झोंपड़ियों में रहते थे। छत्र–चंवर जैसे बाह्य आडम्बरों के साथ वे वहाँ तक कैसे पहुँच सकते थे? एक बार कांची पीठ के परमाचार्य **श्री चन्द्रशेखरेन्द्र सरस्वती** से मिलने जब श्री गुरुजी पहुँचे तो वे गर्भगृह में पूजा में व्यस्त थे, पर सूचना मिलने पर उन्होंने श्री गुरुजी को वहीं बुला लिया। उनके सब शिष्य आश्चर्यचकित रह गये। गर्भगृह में जाने का अधिकार तो बहुत कम लोगों को था और वह भी स्नान के गीले वस्त्र पहनकर ही। परन्तु परमाचार्य ने सबकी शंका का समाधान करते हुए कहा– अरे, गर्भगृह में जिस चन्द्रमौलि की हम पूजा करते हैं– ये उसी का साक्षात स्वरूप हैं। पूज्य **स्वामी प्रभुदत्त ब्रह्मचारी** तो उन्हें देखते ही दौड़ पड़ते थे। दोनों महापुरुषों में पहले एक–दूसरे के पाँव छू लेने की होड़ लग जाती थी– ऐसा महान् व्यक्तित्व था श्री गुरुजी का।

तृतीय सरसंघचालक

तृतीय सरसंघचालक **श्री बालासाहब देवरस** का नाम १९७३ से पूर्व अल्पज्ञात ही था, यद्यपि वे संघ के सरकार्यवाह थे, पर स्वास्थ्य बहुत अच्छा न होने के कारण प्रवास कम ही करते थे। परन्तु वे डॉक्टर जी की प्रथम शाखा के स्वयंसेवक थे तथा गटनायक, गणशिक्षक जैसे दायित्वों से क्रमशः आगे बढ़ते हुए सरसंघचालक जैसे बड़े दायित्व पर पहुँचे थे। पर इस दायित्व को संभालने के बाद उनका देशव्यापी प्रवास शुरू हुआ तो उनके पैने विचार, जमीनी सच्चाइयों की अद्यतन जानकारी, उस पर संघ का स्पष्ट दृष्टिकोण तथा उसके निदान हेतु दूरगामी योजनाबद्ध

प्रयास– इस सबसे काम पर उनकी मजबूत पकड़ का सबको अनुभव हुआ। १९४८ के प्रतिबंध के समय श्री गुरुजी तो जेल में थे पर बाहर रहकर संपूर्ण सत्याग्रह का संचालन तथा फिर प्रतिबंध हटाने हेतु हुए पत्राचार एवं वार्तालाप में उनकी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका थी।

पर १९७५ में संघ को एक और प्रतिबंध का सामना करना पड़ा। इस काल में वे पूरे समय पूना की यरवदा जेल में रहे, पर उनसे भेंट के लिए जाने वाले कार्यकर्ता उनसे योग्य निर्देश एवं मार्गदर्शन लेकर आते थे। उसी का परिणाम था १९७७ में क्रूर तानाशाह इंदिरा गांधी की पराजय, जनता पार्टी का निर्माण, लोकतंत्र की पुनर्स्थापना तथा प्रतिबंध की समाप्ति। जनता पार्टी के शासनकाल में संघ को राजनीति में आकर सत्तासुख भोगने का खुला निमंत्रण सबने दिया। पर पू० बालासाहब ने सबको अस्वीकार कर दिया। संघ के लक्ष्य तथा कार्यपद्धति से अनजान लोग भला इन सब बातों को कैसे समझ सकते हैं ? बालासाहब ने अपना पूरा ध्यान शाखा–विस्तार तथा संघ विचार के विविध संगठनों के राष्ट्रव्यापी प्रसार पर केन्द्रित कर लिया। संस्कृति रक्षा योजना एवं निधि एकत्रीकरण, १९८३ के मीनाक्षीपुरम धर्मान्तरण कांड के बाद एकात्मता रथ यात्रा, राममंदिर हेतु व्यापक आन्दोलन आदि से हिन्दुत्व का विचार गाँव–गाँव और घर–घर तक पहुँच गया।

अस्पृश्यता पाप है

पू० बालासाहब अस्पृश्यता, ऊँच–नीच, जाति भेद जैसी कालबाह्य हो चुकी रूढ़ियों के प्रबल विरोधी थे। पूना की प्रसिद्ध **वसंत व्याख्यामाला** में ८ मई, १९७४ को उनका अस्पृश्यता के विरुद्ध दिया गया वक्तव्य– "यदि अस्पृश्यता पाप नहीं तो कुछ भी पाप नहीं है', सर्वत्र चर्चा का विषय बन गया था। संघ की अ०भा० प्रतिनिधि सभा में आरक्षण के पक्ष–विपक्ष में तेज बहस हो जाने के बाद उन्होंने प्रेम से सबको समझा कर उसके समर्थन का प्रस्ताव पारित कराया। पू० डॉ. हेडगेवार जी की जन्म शताब्दी (१९८८–८९) के अवसर पर हुए धन संग्रह के माध्यम से निर्धन एवं उपेक्षित बस्तियों में सेवा कार्यों की एक विशाल श्रृंखला उन्होंने खड़ी कराई। सेवा के माध्यम से सामाजिक समरसता की दिशा में संघ को बढ़ाने का बहुत कुछ श्रेय उन्हें ही है। स्वयंसेवकों द्वारा जनसहयोग से चलाये जा रहे ये सेवा प्रकल्प, स्वदेशी और विदेशी सरकारों द्वारा वित्त पोषित ईसाई संस्थाओं के सेवा के एकाधिकार को आज तोड़ते दिखाई दे रहे हैं।

जस की तस रख दीनी चदरिया

बालासाहब सदैव एक सामान्य व्यक्ति बनकर रहना पसंद करते थे। सरसंघचालक बनंने के बाद जब पू० डॉक्टर जी एवं श्री गुरुजी के चित्रों के साथ कार्यक्रमों में लोग उनके चित्र भी लगाने लगे तो उन्होंने सख्ती से यह प्रथा बंद करा दी। उन्होंने अपने देहावसान से काफी समय पूर्व ही बता दिया था कि मेरा अंतिम संस्कार रेशमबाग पर नहीं अपितु नागपुर के सार्वजनिक श्मशान घाट पर करना। इतना ही नहीं, तो जब उन्होंने देखा कि स्वास्थ्य संबंधी कठिनाई के कारण अब उनका प्रवास करना संभव नहीं है तो उन्होंने परम्परा तोड़ते हुए, सब प्रमुख कार्य–कर्ताओं से परामर्श कर अ.भा. प्रतिनिधि सभा की वार्षिक बैठक में ११ मई, १९९४ को प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया) को सरसंघचालक घोषित कर दिया।

लंबी बीमारी के बाद १७ जून, १९९६ को बालासाहब ने अपनी नश्वर देह त्याग दी। काफी समय पूर्व ही उन्होंने अपने नेत्रदान का संकल्प पत्र भी भर दिया था। उनकी प्रेरणा से नागपुर की **माधव नेत्र पेढ़ी** आज भी नेत्र–सेवा के क्षेत्र में उल्लेखीनय कार्य कर रही है।

चतुर्थ सरसंघचालक

२९ जनवरी, १९२२ को बुलंदशहर (उ०प्र०) के बनैल ग्राम में जन्मा राजेन्द्र नामक बालक, गाँव के बड़े–बूढ़ों तथा रिश्तेदारों में रज्जू और संघ में रज्जू भैया के नाम से कब लोकप्रिय हो गया, पता ही नहीं लगा। प्रयाग विश्वविद्यालय में पढ़ते समय वे संघ के सम्पर्क में आये और यह सम्पर्क धीरे–धीरे समर्पण में परिवर्तित होता चला गया। उनकी एम.एस.सी. (अंतिम वर्ष) की परीक्षा लेने नोबुल पुरस्कार विजेता डॉ०

चन्द्रशेखर बेंकटरमण आये थे। राजेन्द्र की प्रतिभा से प्रभावित होकर उन्होंने उसे अपने साथ काम करने का प्रस्ताव रखा– पर राजेन्द्र सिंह ने तो अपने लिए कुछ और ही काम निर्धारित कर लिया था।

सादगीपूर्ण जीवन

प्रयाग विश्वविद्यालय में प्राध्यापक रहते हुए भी उनका अधिकांश समय संघ कार्य में ही व्यतीत होता था। अपना अधिकांश वेतन भी वे निर्धन छात्रों की फीस आदि में खर्च कर देते थे। संघ के तत्कालीन सरसंघचालक

श्री गुरुजी से वे बहुत प्रभावित थे। १९४३ से १९७३ तक, लगातार ३० वर्ष वे उनके प्रभावी सम्पर्क में रहे। १९४३ के संघ शिक्षा वर्ग में श्री गुरुजी ने– शिवाजी का जयसिंह के नाम पत्र इस विषय पर पौने दो घंटे का भाषण दिया। उस भाषण ने रज्जू भैया के जीवन की भावी दिशा निर्धारित कर दी। उनकी सादगी के किस्से पुराने स्वयंसेवक आज भी बड़े श्रद्धाभाव से सुनाते हैं। सदैव रेल की तृतीय श्रेणी में सफर, सस्ते ढाबे पर भोजन, रिक्शा का बहुत कम प्रयोग, साइकिल से १२–१५ मील प्रायः चले जाना... आदि उनके लिए सामान्य सी बात थी। १९६६ में उन्होंने विश्वविद्यालय से त्यागपत्र दे दिया तथा पूरी तरह संघ कार्य में लग गए।

अब उन पर काम का दायित्व क्रमशः बढ़ने लगा। उ०प्र० के साथ–साथ बिहार का काम भी उनकी ओर आ गया। १९७५–७७ के आपात्काल के समय पू० बालासाहब तो जेल में थे पर बाहर का सारा कार्य मुख्यतः रज्जू भैय्या ने ही संभाला। **प्रो० गौरव कुमार** के नाम से उनका प्रवास सतत जारी रहा। १९७७ में उन पर **सह सरकार्यवाह** तथा १९७८ में **सरकार्यवाह** का महत्वपूर्ण दायित्व आया। नौ वर्ष तक इस दायित्व को निभाने के बाद उन्होंने श्री हो.वे. शेषाद्रि को यह दायित्व सौंप दिया तथा स्वयं सह सरकार्यवाह के नाते उनका सहयोग करने लगे।

११ मार्च, १९९४ को उन्हें सरसंघचालक जैसा महत्वपूर्ण दायित्व सौंपा गया। स्वास्थ्य ठीक न होते हुए भी उन्होंने अनिच्छापूर्वक सबके आदेश को शिरोधार्य किया तथा फिर से प्रवास में जुट गये। दो वर्ष पूर्व कमजोरी के कारण वे स्नानगृह में गिर गये जिससे उनकी कूल्हे एवं कोहनी की हड्डी टूट गई। चिकित्सकों के प्रयास से स्थिति में काफी सुधार हुआ, फिर भी आयु की अधिकता का प्रभाव तो शरीर पर होता ही है। अतः चलने, देखने और बोलने में कठिनाई बनी ही रही। पिछली अ०भा० प्रतिनिधि सभा में १० मार्च, २००० को उन्होंने सबके परामर्श से **श्री कुप्.सी. सुदर्शन** को पाँचवे सरसंघचालक का कार्यभार सौंपा।

दायित्व मुक्ति के बाद भी विचार–विमर्श तथा परामर्श हेतु वे सदैव उपलब्ध रहते हैं तथा जितना बन पड़ता है, उतना प्रवास भी करते हैं। परमपिता परमेश्वर के श्रीचरणों में प्रार्थना है कि वह उन्हें उत्तम स्वास्थ्य वाली दीर्घायु प्रदान करे जिससे संगठन उनके अनुभव एवं परामर्श का लाभ लम्बे समय तक उठा सके।

पाँचवे सरसंघचालक

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को प्राप्त इस देव दुर्लभ नेतृत्व की नूतन कड़ी के नायक अपने पाँचवें सरसंघचालक

मा० कुप्. सी. सुदर्शन मूलतः तामिलनाडु और कर्नाटक की सीमा पर बसे कुप्पहल्ली (मैसूर) ग्राम के निवासी हैं। यद्यपि पिता श्री सीतारमय्या अपनी वन विभाग की नौकरी के कारण ज्यादातर म.प्र. में ही रहे और वहीं रायपुर में १८ जून, १९३१ को श्री सुदर्शन जी का जन्म हुआ। रायपुर, दमोह, मंडला तथा चन्द्रपुर में प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करने के बाद उन्होंने जबलपुर (सागर वि.वि.) से १९५४ में दूरसंचार विषय में बी.ई. की उपाधि ली तथा तब से ही संघ–प्रचारक के नाते राष्ट्रहित में जीवन समर्पित कर दिया। श्री सुदर्शन जी ज्ञान के भंडार तथा अद्भुत वक्तृत्व कला के धनी हैं। किसी भी समस्या की गहराई तक जाकर, उसके बारे में मूलगामी चिंतन कर उसका वास्तविक समाधान ढूँढ़ निकालना– उनकी विशेषता है। चाहे पंजाब की खालिस्तान समस्या हो या असम का घुसपैठ विरोधी आन्दोलन, अपने गहन अध्ययन तथा चिंतन की स्पष्ट दिशा के कारण आपने इनके निदान हेतु ठोस सुझाव ही नहीं दिये अपितु संघ के कार्यकर्ताओं को उस दिशा में सक्रिय कर आन्दोलन को गलत दिशा में जाने से रोका। पंजाब के बारे में उनकी सोच कि प्रत्येक केशधारी हिन्दू है तथा प्रत्येक हिन्दू दसों गुरुओं तथा उनकी पवित्र वाणी के प्रति आस्था रखने के कारण सिख है। इसी प्रकार बंगला देश से असम में आने वाला मुसलमान षड्यंत्रकारी घुसपैठिया है, जिसे वापस भेजना ही चाहिये। जबकि वहाँ से लुट–पिट कर आने वाला हिन्दू शरणार्थी है– अतः उनको सहानुभूतिपूर्वक शरण देनी चाहिये। ऐसे ही पूरे देश से नौकरी अथवा व्यवसाय के नाते पूर्वांचल में गये हिन्दुओं को घुसपैठिया कहकर उनका तिरस्कार नहीं किया जा सकता। यह कहना गलत नहीं होगा कि श्री सुदर्शन जी के चिन्तन एवं अध्ययन के

इन निष्कर्षों को जब सब स्वयंसेवकों तथा देशभक्त नागरिकों ने बोलना शुरू किया, तो पंजाब तथा असम आंदोलन की दिशा ही बदल गई। आज ये दोनों प्रान्त लोकतांत्रिक भारत में अपनी प्रभावी भूमिका के साथ कार्यरत हैं। खालिस्तान आन्दोलन के दिनों में **राष्ट्रीय सिख संगत** नामक संगठन की नींव रखी गई जो आज भारत ही नहीं तो सम्पूर्ण विश्व में केश धारी हिन्दू बन्धुओं का एक सशक्त संगठन बन चुका है।

नवीन सोच

सुदर्शन जी को संघ क्षेत्र. में जो भी दायित्व दिया गया, उसमें अपनी नव–नवीन सोच के आधार पर उन्होंने नये–नये प्रयोग किये। १९६९ से १९७९ तक उन पर **अ.भा. शारीरिक प्रमुख का दायित्व** था। इस दौरान ही खड्ग, शूल, छुरिका... आदि प्राचीन शस्त्रों के **स्थान** पर नियुद्ध, आसन, खेल... आदि को संघ शिक्षा वर्गों के पाठ्यक्रम में स्थान मिला। आज तो प्रातःकालीन शाखाओं पर आसन तथा विद्यार्थी शाखाओं पर नियुद्ध एवं खेल का अभ्यास होना एक सामान्य बात हो गई है। आपात्काल के अपने बन्दीवास में उन्होंने योगचाप (लेज़म) पर नये प्रयोग किये तथा उसके स्वरूप को बिलकुल बदल डाला। योगचाप की लय और ताल के साथ होने वाले संगीतमय व्यायाम से १५ मिनट में ही शरीर का प्रत्येक जोड़ आनन्द एवं नव–स्फूर्ति का अनुभव करता है।

१९७९ में उन्हें **अ०भा० बौद्धिक प्रमुख** का दायित्व मिला। आज शाखाओं पर बौद्धिक विभाग की ओर से होने वाले दैनिक कार्यक्रम, (गीत, सुभाषित, अमृतवचन), साप्ताहिक कार्यक्रम (चर्चा, कथा–कथन, प्रार्थना अभ्यास), मासिक कार्यक्म (बौद्धिक वर्ग, समाचार–समीक्षा, जिज्ञासा–समाधान, गीत–सुभाषित एकात्मता स्तोत्र... आदि की व्याख्या) तथा शाखा के अतिरिक्त समय में होने वाली मासिक श्रेणी बैठक– इन सबको एक सुव्यवस्थित रचना–क्रम १९७९ से १९९० के कालखण्ड में ही मिला। इतना ही नहीं तो शाखाओं पर होने वाले प्रातःस्मरण के स्थान पर नये **एकात्मता–स्तोत्र** एवं **एकात्मता–मंत्र** की रचना करवा कर उसे आग्रहपूर्वक प्रचलित भी कराया। देश का बुद्धिजीवी समाज जो कम्युनिस्ट आन्दोलन की विफलता के कारण वैचारिक संभ्रम में डूबता–उतराता दिखता है उसकी सोच एवं प्रतिभा को राष्ट्रवाद के प्रवाह की ओर मोड़ने हेतु **प्रज्ञा–प्रवाह** नामक वैचारिक संगठन भी आज देश के बुद्धिजीवियों में लोकप्रिय हो रहा है।

भावी संकेत

परन्तु ये तो कुछ नमूने मात्र हैं। सरसंघचालक जैसे महत्वपूर्ण दायित्व को संभालने के बाद उनके जीवन–दृश्य के अनेक नये आयाम अभी खुलने बाकी हैं। २१वीं सदी का विश्व विचारधारा और सभ्यताओं के संघर्ष की असीम संभावनाएँ समेटे है। निश्चित रूप से उसमें घृणा, हिंसा और असहिष्णुता पर आधारित विचारों की पराजय तथा प्रेम, सहिष्णुता एवं सबके हित की कामना करने वाली हिन्दू विचाराधारा की विजय ही होनी है। यह कहना शायद अतिशयोक्ति न होगी कि इस वैचारिक संघर्ष में निर्णायक भूमिका **रा०स्व० संघ** को ही निभानी है। विश्व–प्रसिद्ध फ्रांसीसी ज्योतिषी **नास्त्रेदेमस** ने चार–पाँच सौ वर्ष पूर्व ही हिन्दुत्व तथा भारत की जय–जयकार तथा इसके माध्यम से विश्व में होने वाले सुखद परिवर्तनों का संकेत कर दिया था। उसने कहा है– "जहाँ तीन समुद्र मिलते हैं, वहाँ के **चेरियन** नामक व्यक्ति के नेतृत्व में वे लोग इस अभियान को आगे बढ़ायेंगे जो प्रकृति के पुजारी हैं।" जरा उसके शब्दों की भावनाओं पर ध्यान दें। कर्नाटक और तमिलनाडु की दक्षिणी सीमाएँ तीन समुद्रों के मिलन स्थल के काफी निकट हैं। रा०स्व० संघ, हिन्दुत्व का पुजारी है और हिन्दू समाज तुलसी–पीपल, गाय–सर्प, नदी–पर्वत, सूर्य–चन्द्रमा आदि के रूप में प्रकृति की ही उपासना करता है। और अपने वर्तमान परम पूज्य सरसंघचालक श्री सुदर्शन जी का नाम भी चेरियन से कितना साम्य रखता है। शायद भविष्य कुछ निश्चित संकेतों की ओर हमारा ध्यान दिलाना चाहता है।

परन्तु इतना सब कुछ पढ़ लेने के बाद हमें यह बात एक क्षण को भी नहीं भूलनी होगी कि रा.स्व. संघ कोई व्यक्तिवादी संगठन नहीं है। यहाँ प्रत्येक निर्णय सामूहिक रूप से लिया जाता है। छोटे से गाँव में लगने वाली सामान्य सी दिखने वाली शाखा के गटनायक, गणशिक्षक, मुख्य शिक्षक से लेकर सरसंघचालक तक विचारों तथा सूचनाओं के आदान–प्रदान का इतना सुव्यवस्थित तंत्र संघ ने विकसित किया है कि एक ओर सरसंघचालक की वाणी में प्रत्येक स्वयंसेवक–कार्यकर्ता का हृदय बोलता है तो दूसरी ओर अपने क्षेत्र में प्रत्येक स्वयंसेवक स्वयं को सर–संघचालक का प्रतिनिधि ही समझता है।

और, सच पूछो तो यही वह रहस्य है जिसके कारण संघ को सदैव **देवदुर्लभ नेतृत्व** की प्राप्ति हुई है तथा आगे भी होती रहेगी। □

– 'राष्ट्रधर्म', राजेन्द्र नगर, लखनऊ

संघ और न्यायपालिका

□ डा० गौरीनाथ रस्तोगी

कुछ मास पूर्व गुजरात की लोकप्रिय सरकार द्वारा सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों के राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में प्रवेश की अनुमति देने के मामले पर देश के तथाकथित सेकुलर राजनीतिक दलों एवं नेताओं ने जो हो–हल्ला मचाया था, उसकी गूँज राष्ट्रीय वायुमंडल में आज तक सुनायी देती रही है। लेकिन अपने इस सनातन राष्ट्र के प्रति अव्यभिचारी निष्ठा रखने वाले सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के प्रवक्ता राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रति इस राष्ट्र की न्यायपालिका का क्या दृष्टिकोण रहा है, इसे जानने और समझने का कोई प्रयास इन छद्म सेकुलरवादियों द्वारा आज तक नहीं किया गया है। अथवा यदि यह कहा जाए कि ये तथाकथित राजनीतिक दल एवं उनके राजनेता दलगत राजनीति के अत्यन्त संकुचित एवं संकीर्ण चश्मे से रा० स्व० संघ के विरुद्ध मिथ्या दोषारोपण जान–बूझकर करते रहे हैं,तो यह गलत न होगा। यही कारण है एक समय इस राष्ट्रवादी संगठन की भूरि–भूरि प्रशंसा करने वाले श्री एच० डी० देवगौड़ा कालान्तर में रा० स्व० संघ के विरुद्ध विषवमन करने लगते हैं तथा जब उनसे उनके पहले के कथन के संबंध में स्पष्टीकरण माँगा जाता है, तब वे बगलें झाँकते हैं। सर्वाधिक आश्चर्य का विषय तो यह है कि जो कम्युनिष्ट आंदोलन अपने जन्म–काल से ही इस राष्ट्र के बाहर अपनी निष्ठा की खुली उद्घोषणा निर्विवाद एवं अबाध रूप से आज तक करता चला आ रहा है, उसका परोक्ष अथवा अपरोक्ष समर्थन करने से तो इन सेकुलरवादियों को कोई परहेज नहीं है, लेकिन विशुद्ध राष्ट्रवाद का शंखनाद करने वाला रा० स्व० संघ उनके लिए अस्पृश्य है। सन् १९२० में उस समय के सोवियत संघ तथा आज के उजबेकिस्तान राज्य के ताशकंद नगर में प्रस्थापित 'भारत की कम्युनिस्ट पार्टी' वाक्यांश से अन्ततः क्या अर्थ निकलता है ? क्या उसका आशय यह नहीं है कि भारत की मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी सहित भारत में क्रियाशल सभी कम्युनिस्ट पार्टियाँ भारतीय कम्युनिस्ट पार्टियाँ न होकर भारत की कम्युनिस्ट पार्टियाँ हैं। इसका आशय यह है कि वे विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन का अभिन्न अंग हैं और इसलिए उनकी निष्ठा भारत से अधिक विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन के उस केन्द्र के प्रति है जो इस राष्ट्र की पावन धरती की भौगोलिक सीमाओं से बहुत दूर है।

१४ वाद या मुकदमे

२६ जनवरी, १९५० को भारतीय संविधान के लागू होने के समय से लेकर आज तक रा० स्व० संघ में सरकारी कर्मचारियों एवं अधिकारियों के भागीदार बनने से संबंधित विभिन्न १४ न्यायिक वाद देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों एवं उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत हो चुके हैं। इस सभी वादों में उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय ने एक स्वर से रा० स्व० संघ के कार्यक्रमों में सरकारी कर्मचारियों एवं अधिकारियों के भाग लेने को औचित्पूर्ण मान कर संबंधित राज्य सरकारों की कड़ी भर्त्सना की है तथा उनके आदेशों को अवैध घोषित कर दिया है। यहाँ तक कि 'अवैध गतिविधि (निवारण) न्यायाधिकरण' ने दिसम्बर, १९९२ में अयोध्या में राम मंदिर से संबंधित ढाँचे के गिराए जाने की घटना के उपरान्त जब रा०स्व०संघ पर प्रतिबंध लगाया तब उसे चुनौती दी जाने वाली याचिका से संबंधित 'केन्द्रीय सरकार बनाम रा०स्व०संघ' वाद में केन्द्र सरकार की कार्रवाई को उसने अवैध घोषित करके संघ पर लगाए गए अनुचित एवं निराधार प्रतिबन्ध को निरस्त कर दिया था।

सरकार को जबर्दस्त तमाचा

इन समस्त न्यायिक निर्णयों में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य ये हैं कि इन १४ वादों या मुकदमों में से किसी एक भी वाद में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों एवं उच्चतम न्यायालय ने संबंधित राज्य सरकारों के आदेशों को वैध नहीं ठहराया है। दूसरे, उन न्यायिक निर्णयों में से केवल एक वाद को छोड़कर शेष सभी के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील करने का साहस संबंधित राज्य सरकारों में से किसी एक भी राज्य सरकार को नहीं हो सका था। ये सभी वाद तत्कालीन मध्य भारत के इंदौर स्थित उच्च न्यायालय, पटना उच्च न्यायालय, मुम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर पीठ, इलाहाबाद उच्च न्यायालय, जोधपुर

स्थित राजस्थान उच्च न्यायालय, दिल्ली स्थित पंजाब उच्च न्यायालय की सर्किट पीठ, बंगलौर स्थित मैसूर अथवा कर्नाटक उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ स्थित पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय, जबलपुर स्थित मध्य–प्रदेश उच्च न्यायालय, अहमदाबाद के गुजरात उच्च न्यायालय, अर्नाकुलम स्थित केरल उच्च न्यायालय से संबंधित रहे हैं। इलाहाबाद एवं अर्नाकुलम स्थित उच्च न्यायालयों के समक्ष तो ऐसे दो–दो वाद क्रमशः १९६३ और १९७१ तथा १९८१ एवं १९८२ में निर्णीत हुए हैं। इसी भाँति दो वाद क्रमशः पंजाब उच्च न्यायालय की दिल्ली स्थित सर्किट पीठ और चंड़ीगढ़ स्थित पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत हुए थे। दूसरे शब्दों में ये १४ वाद मध्य भारत, बिहार, महाराष्ट्र, उत्तर–प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, गुजरात तथा केरल राज्यों से संबंधित रहे हैं। इससे यह स्पष्ट है कि देश की न्यायपालिका को रा०स्व० संघ के राष्ट्रवादी एवं देशहितैषी स्वरूप के विषय में कोई संदेह नहीं है। तीसरे, मध्य–प्रदेश द्वारा १९८३ में अपील के रूप में प्रस्तुत वाद में तो उच्चतम ने प्रदेश के उच्च न्यायालय के न्यायिक निर्णय के विरुद्ध की गई अपील पर अपनी अत्यन्त तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी तथा विद्वान् न्यायमूर्ति श्री एस० मुर्तजा फजल अली ने उस पर अपनी न्यायिक टिप्पणी अभिव्यक्त करते हुए स्पष्टतम शब्दों में घोषित किया था कि "हमारा यह स्पष्ट मत है कि विशेष अनुमति याचिका को गुणावगुण के आधार पर आरम्भ में ही खारिज कर दिया जाना चाहिए था। मैं इस मामले के तथ्यात्मक ब्यौरों में और आगे नहीं जाना चाहूँगा।"

इसी भाँति 'अवैध गतिविधि (निवारण) न्यायाधिकरण' ने केन्द्र सरकार द्वारा रा०स्व०संघ को प्रतिबंधित करने के आदेश को १९९३ में रद्द करते हुए उक्त हिटलरी आदेश को निरस्त कर दिया था। विषय की स्पष्टता के उद्देश्य से इन न्यायिक निर्णयों के महत्वपूर्ण उद्धरणों का अध्ययन–विश्लेषण करना प्रासंगिक एवं समीचीन होगा।

मध्य भारत उच्च न्यायालय

तत्कालीन मध्य भारत के कृष्ण लाल नामक भारतीय नागरिक को उप निदेशक कृषि, दक्षिण प्रभाग, इन्दौर के द्वारा ३१ मार्च, १९५२ के आदेश सं. ५९७१/५५/५२ के अधीन कृषि निरीक्षक मन्दसौर के कार्यालय में लिपिक के रूप में नियुक्त किया गया था। कृष्णलाल की यह नियुक्ति पूर्णतया अस्थायी एवं अनन्तिम अथवा अन्तरिम (Temporary and Provisional) रूप से की गई थी। किन्तु उसे दिनांक १२ जून, १९५२ को आदेश सं. ४८६–सी/५२ द्वारा यह कह कर उसके पद से हटा दिया गया कि वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का सदस्य है।

अपनी सेवाएँ इस प्रकार हिटलरी आदेश से समाप्त किए जाने को कृष्णलाल ने इंदौर स्थित मध्यभारत उच्च न्यायालय में भारतीय संविधान के अनुच्छेद २२६ एवं ३११ के अन्तर्गत एक चायिका के माध्यम से चुनौती दी। याचिकादाता की ओर से अधिवक्ता खानविलकर ने उसका पक्ष रखते हुए इस आदेश को संविधान का खुला उल्लंघन बताया और अनेक दृष्टान्तों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि रा० स्व० संघ का सदस्य होना कोई अपराध नहीं है।अतः उसके मुवक्किल अथवा याचिकादाता को उसके पद से हटाया नहीं जा सकता, भले ही उसकी नियुक्ति अस्थायी एवं अनन्तिम अथवा अन्तरिम रूप से की गई हो और उसे सेवा से हटाए जाने के लिए एक मास का पूर्व नोटिस दिया गया हो। सरकार की ओर से राज्य के महाधिवक्ता के०ए० चितले ने कृष्णलाल की बर्खास्तगी को उचित ठहराया। दोनों पक्षों को सुनने के उपरान्त विद्वान् न्यायमूर्ति श्री वी०आर० नेवस्कर तथा विद्वान् न्यायाधीश श्री एस०एम० संवत्सर की खंडपीठ ने एकमत से कृषि निरीक्षक मन्दसौर कार्यालय के माध्यम से कृष्णलाल को दिए गये १२ जून, १९५२ के आदेश सं. ४८६–सी/५२ को भारत के संविधान के अनुच्छेद ३११ (२) के प्रतिकूल पाकर अवैध घोषित कर दिया। इसके साथ ही न्यायालय ने कृष्णलाल को उसके पद पर बहाल करते हुए उसे राज्य सरकार द्वारा याचिका संबंधी व्यय दिलाने के आदेश भी जारी कर दिए।

उच्च न्यायालय मुम्बई

सर्वश्री चिन्तामणि एवं काशीनाथ नामक डाक विभाग के दो कर्मचारियों को पोस्टमास्टर जनरल, केन्द्रीय परिमंडल, नागपुर द्वारा दिनांक १७–५–१९६१ को पहले नोटिस और फिर दिनांक ३ जून, १९६१ को एक आदेश जारी कर इसलिए निलम्बित कर दिया गया कि वे रा०स्व०संघ के स्वयंसेवक हैं तथा विध्वसंकारी गतिविधियों में संलग्न हैं। उन्हें निलम्बित करते समय विध्वंसकारी गतिविधियों में उनकी लिप्तता बनाते हुए कहा गया था कि :

१. चिंतामणि पुरुषोत्तम नुरगाँवकर तथा काशीनाथ देवीदास दिदोल्कर

रा०स्व०संघ की गतिविधियों से जुड़े हुए हैं तथा उनमें सक्रिय रूप से भाग लेते रहे हैं।

२. वे दिनांक १७ नवम्बर, १९५७ को स्टारकी प्वाइंट पर रा०स्व०संघ के भ्रमण–कार्यक्रम (Picnic) में उपस्थित थे।

३. चिन्तामणि ने १४ जनवरी, १९६० को मोहिते मैदान, नागपुर में रा० स्व० संघ के मकर संक्रान्ति महोत्सव में भाग लिया था।

४. श्री चिन्तामणि दि. २३ जनवरी, १९६० को नागपुर स्थित रा०स्व०संघ के कार्यालय में गए थे।

५. श्री काशीनाथ दि. १३ जुलाई, १९५९, दि. १५ जुलाई, १९५९ तथा दि. ८ जनवरी, १९६० को नागपुर में संघ–कार्यालय में गए थे।

६. श्री काशीनाथ दि. १४ जुलाई, १९५९ को नागपुर में हुई रा०स्व०संघ की एक बैठक में उपस्थित थे।

इन दोनों याचिकाओं की सुनवाई मुम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर पीठ में विद्वान् न्यायमूर्ति द्वय श्री अभ्यंकर तथा श्री पालेकर द्वारा की गई। विद्वान् न्यायाधीशों ने अपना निर्णय घोषित करते हुए कहा कि "हमारे समक्ष प्रस्तुत दोनों ही वादों में याचिकादाताओं पर आरोपित कोई भी गतिविधि विध्वंसक नहीं है। अतः जब तक कोई व्यक्ति विध्वंसक गतिविधियों में निरत नहीं है या उसके विषय में युक्तियुक्त रूप से यह संवेदन न हो कि वह विध्वंसक गतिविधियों में संलिप्त है, तब तक उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती। याचिकादाताओं को केन्द्रीय सिविल सेवा (राष्ट्रीय सुरक्षा निरापदता) नियमावली के नियम ४ के अधीन दिए गए नोटिस के निरस्त होने के रूप में वे राहत पाने के हकदार हैं।... तदनुसार हम याचिकादाताओं को १७ मई, १९६१ को जारी किए गए नोटिस को रद्द करते हैं तथा यह घोषित करते हैं कि इन नोटिसों के आधार पर याचिका–दाताओं के विरुद्ध कोई विधिक कार्यवाही नहीं की जा सकती। याचिकायें व्यय–सहित स्वीकार की जाती हैं।"

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

महालेखाकार कार्यालय उत्तर प्रदेश में कार्यरत जयप्रकाश मेहरोत्रा को ऊपर वर्णित चिन्तामणि एवं काशीनाथ संबंधी वाद की ही तरह रा०स्व०संघ की गतिविधियों में भाग लेने के आधार पर विध्वंसक गतिविधियों में संलिप्त होने का नोटिस देकर संबंधित अधिकारियों ने उसे सूचित किया कि क्यों न उसके विरुद्ध जाँच बैठाकर कानूनी कार्यवाही की जाए? अतः उसने १९६२ में इलाहाबाद उच्च न्यायालय में सिविल विविध याचिका सं. १३६८ प्रस्तुत की। याचिका की सुनवाई विद्वान् न्यायमूर्ति श्री एस.एन. द्विवेदी ने की। उन्होंने उक्त नोटिस और तत्संबंधी जाँच को निरर्थक पाया और अपने महत्वपूर्ण निर्णय में घोषणा की कि "याचिकादाता के विरुद्ध एकमात्र आरोप यह है कि उसने १९५७ से १९६१ के मध्य रा०स्व०संघ की बैठकों में भाग लिया।... संपूर्ण आरोप में कहीं भी यह नहीं कहा गया है कि रा०स्व०संघ एक ऐसी संस्था है जो विध्वंसक गतिविधियों में संलग्न है अथवा उसके संबंध में यह संदेह करने का आधार है कि वह ऐसी गतिविधियों में लिप्त है। यह सर्व–स्वीकृत है कि संघ एक गैरकानूनी संस्था नहीं है।.. चूँकि नोटिस में दिए गये ब्यौरे पूर्णतः अस्पष्ट और अनिश्चित हैं। अतः मेरी सम्मति में अपने संबंध में प्रस्तावित कार्यवाही के विरुद्ध जोकि नियम ३ में विर्निदिष्ट कारणों से उसकी अनिवार्य सेवा–निवृत्ति है, कोई प्रत्यावेदन देना नितान्त असंभव है; सार्थक प्रत्यावेदन देना तो और भी संभव नहीं। मेरी समझ में आदेश नियम ४ की अपेक्षाओं का पालन नहीं करता।... नियम ४ के लिए किए गए उपबंध आज्ञापक हैं। तथापि नियम ४ के अधीन औपचारिक तथा निस्सार जाँच विवक्षित नहीं है। प्रत्यर्थी (सरकार) के विद्वान् अधिवक्ता मुझे इस विषय में संतुष्ट करने में नितान्त असफल रहे हैं कि क्यों ऐसी जाँच को आगे चलने दिया जाए?"

"विद्वान् (सरकारी) अधिवक्ता के प्रथम तर्क के संबंध में मेरी राय को देखते हुए यह आवश्यक नहीं जान पड़ता कि मैं उनके दूसरे तर्क पर विचार करूँ। याचिका खर्च सहित स्वीकार की जाती है तथा प्रत्यर्थी (सरकार) द्वारा याचिकादाता को दिया गया आदेश रद्द किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्यर्थी (सरकार) को यह निर्देश भी दिया जाता है कि वह उपर्युक्त आदेश के आधार पर याचिकादाता के विरुद्ध कोई जाँच न बैठाए।"

राजस्थान उच्च न्यायालय

उपर्युक्त वादों की भाँति ही सन् १९६४ में जोधपुर स्थित राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष सिविल विविध रिट याचिका सं. ७०३ प्रस्तुत हुई थी। याचिकादाता केदारनाथ अग्रवाल का

कहना था कि रजिस्ट्रार, सहकारी समितियाँ राजस्थान, जयपुर के द्वारा उसकी सेवा बर्खास्तगी का आदेश संविधान के प्रावधानों का खुला उल्लंघन है क्योंकि उसे शासकीय सेवा से यह आरोप लगाकर बर्खास्त किया गया है कि वह रा०स्व०संघ नामक राजनीतिक संगठन की गतिविधियों में भाग लेता रहा है। याचिकादाता का तर्क था कि संघ एक राजनीतिक दल न होकर सामाजिक–सांस्कृतिक संगठन है। अतः उसकी गतिविधियों में भाग लेने को सेवा बर्खास्तगी तथा विद्वान् न्यायमूर्ति कानसिंह की खंड पीठ के समक्ष श्री राधाकृष्ण रस्तोगी एवं श्री गुमानलाल लोढ़ा अभिवक्ताओं ने याचिकादाता का पक्ष अत्यन्त तर्कपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया जबकि सरकारी पक्ष की ओर से अधिवक्ता श्री एम०एम० व्यास ने पैरवी की।

दोनों पक्षों को सुनने के उपरान्त विद्वान् न्यायाधीशों ने एकमत से निर्णय देते हुए श्री केदारनाथ अग्रवाल की बर्खास्तगी को संविधान के अनुच्छेद ३११ (१) का खुला उल्लंघन बताया तथा उसे गैरकानूनी घोषित करके उसे रद्द कर दिया। याचिकादाता की उसके पद पर बहाली के साथ–साथ न्यायालय ने उसे वाद संबंधी व्यय भी दिलवाया।

पंजाब उच्च न्यायालय

सन् १९६२ में मनोहर नारायण अम्बोकर ने सिविल रिट याचिका सं. ९७६ डी के माध्यम से डाक–तार विभाग में अपनी सेवाओं की बर्खास्तगी को चुनौती देते हुए उसे संविधान का खुला उल्लंघन बताया और उसे अवैध घोषित करके सरकारी सेवा में अपनी पुनर्बहाली की माँग की। यह वाद दिल्ली स्थित पंजाब उच्च न्यायालय की सर्किट पीठ में विद्वान् न्यायमूर्ति श्री हंसराज खन्ना के न्यायालय में प्रस्तुत हुआ जोकि ऊपर उल्लिखित चिन्तामणि एवं काशीनाथ द्वारा मुम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर पीठ के समक्ष प्रस्तुत वाद की भाँति था। विद्वान न्यायमूर्ति श्री हंसराज खन्ना ने दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं को सुनने के बाद उक्त वाद के दृष्टान्त के आधार पर ही मनोहर नारायण अम्बोकर की डाक–तार विभाग से बर्खास्तगी को अवैध घोषित किया और कहा कि "याचिकादाता के रा०स्व०संघ की गतिविधियों में भाग लेने पर भी उसके विरुद्ध विध्वंसक गतिविधियों में भाग लेने का कोई स्पष्ट अथवा अस्पष्ट आरोप नहीं लगाया गया है। अतः उसकी बर्खास्तगी से संबंधित सरकारी आदेश पूर्णतया अवैध है। अतः उसे निरस्त करके याचिकादाता को उसके पद पर बहाल किया जाता है।"

मैसूर उच्च न्यायालय

५ जुलाई, १९६६ को बंगलौर स्थित तत्कालीन मैसूर उच्च न्यायालय के अंदर रंगनाथाचार अग्निहोत्री ने रिट याचिका ५९८८ प्रस्तुत की। याचिका में यह अनुरोध किया गया था कि मुंसिफ के पद पर उसकी नियुक्ति इसलिए राज्य सरकार द्वारा नहीं की गई क्योंकि वह रा०स्व०संघ के कार्यक्रमों में भाग लेता रहा है। राज्य सरकार का यह व्यवहार भारतीय संविधान में वर्णित समानता के मौलिक अधिकार एवं अन्य संवैधानिक प्रावधानों का खुला उल्लंघन है। अतः उसे रद्द करते हुए उसे मुंसिफ के पद पर नियुक्त किया जाए तथा उसका वरिष्ठता–क्रम बनाए रखा जाए। विद्वान् न्यायाधीश श्री एम० सदाशिवय्या एवं विद्वान् नयायमूर्ति श्री टी०के० तुकोल की खंड पीठ ने याचिकादाता के आवेदन का औचित्य स्वीकार किया तथा अपने महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णय में घोषणा की कि "सरकार की यह राय कि याचिकादाता मुंसिफ के पद पर नियुक्ति के लिए अनुपयुक्त है, याचिकादाता के रा०स्व०संघ का सदस्य होने तथा उसके द्वारा अपने नगर में शाखा की स्थापना में भाग लिए जाने के असंगत तथ्य पर आधारित है। अतः वह न्यायालय को अस्वीकार्य है। इसलिए याचिकादाता नियमावली के नियम ४ (२) के अधीन अपनी अनुपयुक्तता के आधार पर नियुक्ति के लिए अनर्ह अथवा अयोग्य नहीं है। नियमावली के अन्तर्गत कोई भी बात याचिकादाता के प्रदर्श (ख) के अनुसार सूची में अपने स्थान पर नियुक्ति के मार्ग में बाधक नहीं है। शपथ–पत्र में याचिकादाता के कथन से यह स्पष्ट नहीं है कि क्या मेडिकल बोर्ड ने उसे संबंधित पद पर नियुक्ति के लिए शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ पाया।"

"अन्त में एतद् द्वारा हम यह निर्देश देते हैं कि मेडिकल बोर्ड द्वारा याचिकादाता के स्वस्थ पाए जाने पर प्रत्यर्थी–१ अर्थात राज्य याचिकादाता को मुंसिफ के पद पर नियुक्त कर उसे वरिष्ठता–क्रम में २–८ संख्या तक के प्रत्यर्थियों के ऊपर रखे। याचिकादाता को याचिका का व्यय प्रत्यर्थी सं० १ (राज्य) से मिलेगा।"

इतना ही नहीं, उच्च न्यायालय के इस निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील करने से संबंधित राज्य सरकार द्वारा माँगा गया प्रमाण–पत्र भी खंडपीठ द्वारा रद्द कर दिया गया।

पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय

श्री रामफल ने १९६६ में अपनी सिविल रिट याचिका सं. २३०८ के

द्वारा हरियाणा सरकार के अन्तर्गत लिपिक के पद पर से अपनी बर्खास्तगी को चुनौती देते हुए चंडीगढ़ स्थित पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय से अपनी बहाली की माँग की थी। याचिकादाता को उसके पद से इसलिए बर्खास्त किया गया था क्योंकि उसने रा०स्व०संघ के एक शिविर में भाग लिया था।

विद्वान् न्यायाधीश श्री पी०डी० शर्मा ने ऊपर उल्लिखित केदारनाथ अग्रवाल बनाम राजस्थान राज्य तथा रंगनाथाचार अग्निहोत्री बनाम मैसूर राज्य में दिए गए संबंधित उच्च न्यायालयों के निर्णयों को दृष्टान्त रूप में स्वीकार करके श्री रामफल की बर्खास्तगी से संबंधित हरियाणा राज्य के सरकारी आदेश को अवैध घोषित करके उसे रद्द कर दिया तथा श्री रामफल की रिट याचिका को व्यय सहित स्वीकार कर उन्हें उनके पद पर बहाल कर दिया।

उच्च न्यायालय जबलपुर

इसी प्रकार का एक वाद २० अगस्त, १९७३ को जबलपुर स्थित मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में श्री भारत प्रसाद त्रिपाठी द्वारा प्रस्तुत किया गया था क्योंकि रा०स्व०संघ के एक कार्यक्रम में सम्मिलित होने के आधार पर उसे राज्य सरकार द्वारा संस्कृत प्राध्यापक के पद से बर्खास्त कर दिया गया था। मुख्य न्यायाधीश विद्वान् न्यायमूर्ति श्री पी०के० तारे तथा विद्वान् न्यायमूर्ति श्री एस०एम०एन० रत्न की खंडपीठ ने वाद की सुनवाई की तथा घोषित किया कि "हमें पूरी तरह यह विश्वास हो गया है कि आपेक्षाधीन आदेश... अंतरस्थ प्रयोजन से दिया गया असद्भावनापूर्ण आदेश है।... यह म०प्र० सिविल सेवा (आचरण) नियमावली, १९६६ के नाम पर किया जा रहा कपट है।.... उक्त आदेश दंड के रूप में दिया गया था। अतः हम इसे मंसूख या रद्द करते हैं। तदनुसार हम रिट याचिका को स्वीकार करते हैं.... तथा अधिनिर्णीत करते हैं. .. कि याचिकादाता सेवा में बरकरार है तथा वह सेवा में तब तक बना रहेगा, जब तक कि उसे भारत के संविधान के अनुच्छेद ३११ (२) के अन्तर्गत उसके पद से हटाया नहीं जाता। याचिकादाता वर्तमान कार्यवाही पर हुए व्यय का हकदार है।"

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

शिक्षा निदेशक उत्तर प्रदेश द्वारा १९ जनवरी, १९७१ को विद्वान् न्यायाधीश श्री सतीशचन्द्र के निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका (अपील) सं. ८६४ इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई थी। याचिका का संबंध श्री रेवतप्रकाश पांडे से था जो १९६३ से अस्थायी रूप से सह-अध्यापक के रूप में कार्यरत थे तथा जिनकी सेवायें १ जुलाई, १९६८ को एक मास का नोटिस देकर हिटलरी अंदाज में इसलिए समाप्त कर दी गई थीं क्योंकि वे रा०स्व०संघ के कार्यक्रमों में भाग लेते रहे थे। विद्वान् न्यायाधोशद्वय श्री एस०एन०पी० द्विवेदी तथा श्री एच०सी० त्रिपाठी ने मामले की सुनवाई करके विशेष अपील याचिका रद्द कर दी और अपने निर्णय में घोषित किया कि रा० स्व० संघ के कार्यक्रमों में भाग लेने के आधार पर किसी को सरकारी सेवा से बर्खास्त नहीं किया जा सकता।

गुजरात उच्च न्यायालय

गुजरात के भावनगर जिले में तलजा नामक स्थान पर सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) तथा प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट के कार्यालय में लिपिक के पद पर कार्यरत श्री डी०बी० गोहल को जिला न्यायाधीश श्री जे०एम० कमौडिया ने ८ दिसम्बर, १९६७ के आदेश सं. बी-५ (३)-१४३/६७ के द्वारा इस आरोप के साथ बर्खास्त कर दिया कि वह रा०स्व०संघ नामक राजनीतिक संगठन का सदस्य है। डी०बी० गोहल ने इस अन्यायपूर्ण आदेश को भारतीय संविधान के अनुच्छेद २२६ के अन्तर्गत विशेष सिविल आवेदन सं. ३५७ के द्वारा १९६८ में अहमदाबाद स्थित गुजरात उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी। विद्वान् न्यायमूर्ति द्वय श्री ए०डी० देसाई तथा श्री एस०एच० सेठ की खंडपीठ ने वाद की सुनवाई की तथा इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि प्रत्यर्थी अथवा जिला न्यायाधीश भावनगर द्वारा अपने बर्खास्तगी आदेश और न्यायालय के समक्ष उनका पक्ष प्रस्तुत करने वाले अधिवक्ता श्री अम्बुभाई दिवान जी एवं राज्य के महाधिवक्ता रा०स्व०संघ को राजनीतिक दल या आन्दोलन सिद्ध नहीं कर सके हैं। इसके अतिरिक्त रंगनाथाचार अग्निहोत्री बनाम मैसूर राज्य वाद में संबंधित उच्च न्यायालय द्वारा संघ को एक विशुद्ध सामाजिक-सांस्कृतिक संगठन माना गया है, अतः 'मुम्बई सिविल सेवा आचरण, अनुशासन तथा अपील नियमावली' के नियम ३० का उल्लंघन न होने से "भावनगर के जिला न्यायाधीश द्वारा दिया गया आक्षेपाधीन आदेश विधि की दृष्टि से दोषपूर्ण एवं शून्य है और इसलिए सर्वथा रद्द किए जाने के योग्य हैं।.... अतः हम इस याचिका को स्वीकार करते हैं और उत्प्रेषण रिट जारी कर भावनगर के जिला न्यायाधीश द्वारा याचिकादाता

को राज्य सेवा से हटाने के आदेश को मंसूख करते हैं। यह आदेश अन्तिम और व्यय सहित है।"

केरल उच्च न्यायालय

सुदूर केरल राज्य के अर्नाकुलम नगर में स्थित केरल उच्च न्यायालय के समक्ष १९८१ में 'टी०बी० आनन्दन तथा अन्य बनाम केरल राज्य तथा अन्य, और १९८२ में 'श्रीमती थाट्टुमकर बनाम महाप्रबंधक टेलीकम्युनिकेशन्स, केरल मंडल' नामक दो वाद प्रस्तुत हुए। इनमें प्रथम वाद २०–२१ जनवरी, १९७९ को रा०स्व०संघ के स्वयंसेवकों को राजकीय हाईस्कूल, चिक्कारा के भवन में ठहरने से संबंधित था। उसकी अनुमति सक्षम अधिकारी द्वारा दी गई थी। लेकिन १५ जनवरी, १९७९ को प्रदत्त अनुमति बिना कोई कारण बताए रद्द कर दी गई। विद्वान् न्यायाधीश श्री के०के० नरेन्द्रन ने इस आदेश को संविधान के अनुच्छेद १४ का खुला उल्लंघन घोषित करते हुए समानता के मौलिक अधिकार पर कुठाराघात बताया तथा टी०बी० आनन्दन तथा अन्य की याचिका स्वीकार कर ली।

इसी भाँति श्रीमती पी० प्रेमकुमार थाट्टुमकर की याचिका को स्वीकार करते हुए केरल उच्च न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री टी० चन्द्रशेखर मेनन ने २७ जुलाई, १९८२ को अपना महत्वपूर्ण निर्णय सुनाते हुए घोषणा की कि "रा०स्व०संघ का सदस्य होने के आधार पर किसी व्यक्ति को सरकारी सेवा में नियुक्त करने से वंचित नहीं किया जा सकता। अतः चयन सूची में से याचिकादाता का नाम काटने को मंसूख किया जाता है। तदर्थ परमादेश याचिका जारी की जाती है।"

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय

रामशंकर रघुवंशी मध्यप्रदेश के एक नगरपालिका विद्यालय में अध्यापक थे। जून, १९७१ में राज्य सरकार ने विद्यालय का नियंत्रण अपने हाथ में लेकर २८ फरवरी, १९७२ को रामशंकर रघुवंशी को सरकारी सेवा में आत्मसात् कर लिया। लेकिन ५ नवम्बर, १९७४ को उनकी सेवायें इस आरोप के साथ समाप्त कर दी गईं कि श्री रघुवंशी ने रा०स्व०संघ और भारतीय जनसंघ की गतिविधियों में भाग लिया है। श्री रघुवंशी ने उच्च न्यायालय में याचिका दायर की। मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने उसे स्वीकार करते हुए उक्त आदेश को संविधान के अनुच्छेद ३११ के प्रावधानों का खुला उल्लंघन बताकर रद्द कर दिया। इस पर राज्य सरकार ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद १३६ के अन्तर्गत विशेष अपील की अनुमति माँगी। विद्वान् न्यायमूर्ति श्री एस० मुर्तजा फजल अली तथा विद्वान न्यायाधीश श्री चिन्नप्पा रेड्डी की खंडपीठ ने उसे अस्वीकृत कर दिया। विद्वान् न्यायमूर्ति श्री फजल अली ने तो यहाँ तक कहा कि "विशेष अनुमति याचिका को गुणावगुण के आधार पर आरम्भ में ही खारिज कर दिया जाना चाहिए था।" दूसरे विद्वान् न्यायाधीश श्री चिन्नप्पा रेड्डी ने अपने निर्णय में घोषणा की कि "यह विशेष अनुमति याचिका अस्वीकार्य है। इसमें कोई दम नहीं है।... जो कुछ यहाँ कहा गया वह यही कि सरकारी सेवा में आत्मसात् होने से पूर्व श्री रघुवंशी ने रा०स्व०संघ और जनसंघ की गतिविधियों में भाग लिया था। वे गतिविधियाँ क्या थीं, यह कभी नहीं बताया गया ? न तो संघ और न जनसंघ पर विद्रोही अथवा अवैधानिक गतिविधियों में संलिप्त होने का आरोप है, न ही ये संगठन प्रतिबंधित हैं।... वस्तुतः इन संगठनों के सदस्य संसद और विधानमंडलों के सदस्य रहते चले आ रहे हैं। संसद में उनको बहुधा आदर के साथ सुना जाता है।"

अवैध गतिविधियाँ (निवारण) अधिकरण

६ दिसम्बर, १९९२ को अयोध्या में राम जन्मभूमि से संबंधित ढाँचा गिराए जाने के आधार पर केन्द्र सरकार ने १० दिसम्बर, १९९२ को जारी की गई अधिसूचना के अन्तर्गत रा०स्व०संघ पर प्रतिबंध लगाकर उसे एक अवैध संगठन घोषित कर दिया। संघ ने संसद द्वारा पारित 'अवैध गतिविधियाँ (निवारण) अधिकरण' के समक्ष इस फासिस्टवादी अधिसूचना को चुनौती दी। वाद की सुनवाई अधिकरण के अध्यक्ष विद्वान् न्यायमूर्ति श्री पी०के० बाहरी ने की। उन्होंने अपना ऐतिहासिक निर्णय ४ जून, १९९३ को घोषित करते हुए कहा कि "रा०स्व०संघ को अवैध घोषित करने के पर्याप्त कारण नहीं हैं। तदनुसार मैं पूर्वोक्त अधिसूचना में की गई उक्त घोषणा को निरस्त करता हूँ।" इसके साथ ही न्यायाधिकरण ने विश्व हिन्दू परिषद् और बजरंग दल पर लगाए गए प्रतिबंधों को भी अवैध घोषित कर निरस्त कर दिया।

इस संपूर्ण विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत की न्यायपालिका को रा०स्व०संघ के राष्ट्रभक्ति पूर्ण कार्यों एवं रिकार्ड के प्रति किसी प्रकार का कोई संदेह नहीं है और विभिन्न दलों के राजनीतिक नेता अपने संकुचित स्वार्थों की पूर्ति हेतु उसके विरुद्ध विषवमन करते रहे हैं जो निन्दनीय है। □

था एक बूँद पर बह निकला

(संघ सरिता के मूल स्रोत परमपूजनीय सरसंघचालक डा० केशव बलिराम हेडगेवार जी की पावन स्मृति में)

□ रामशंकर अग्निहोत्री

था एक बूँद पर बह निकला
यह जन्मभूमि यह भरतभूमि
यह मातृभूमि हो हरी–भरी
बचपन में उभरी टीस यही
यौवन में शोधा ज्ञान यही (कि–)
इसकी महिमा का गुंजन हो
इसकी गोदी में प्यार पले
इसकी गरिमा का कण–कण में
वैभव गूँजे जीवन सरसे
बस ऐसी तड़पन में एकाकी
संघावतरण का निश्चय ले
स्वयं भगीरथ बनने को
अपनी सब शक्ति समेट चला
था एक बूँद पर बह निकला

जब चल निकला
तो, चलने वालों का साथ मिला
जिस नाग भूमि से निकला था
उसका अनुपम समुहार मिला
इन काली पीली चट्टानों में
चलने भर का पाथेय मिला
रास्ते में जितने तृषित मिले
वे झाड़ और झंकारू भी
जिन–जिन ने माँगा, भर पाया
ऐसा अजीब वह दाता था
कि कब पाया, कब लुटा दिया
इसका भी ध्यान नहीं आया
ऊपर समीर के झोंके जब
कानों में आ–आकर कहते
सदि सूख गये तो क्या होगा
वह हँस देता
मस्ती अपनी बिखरा देता
धीरे–धीरे मर–मर स्वर में
जीवन का गीत सुना देता–
"है आज मिला कल नहीं मिला
इसलिए लुटाने में सुख है।
फिर देने में क्या कुछ न मिला?"
इस तरह लुटाता मुस्काता वह चल निकला
था एक बूँद पर बह निकला

धीरे–धीरे लो धार बनी
बहते रहने की रीति बनी
अब तो पक्षी भी आते हैं
कुछ मीठा–मीठा गाते हैं
वह भी कुछ कल–कल करता है
स्वर को स्वर में बहलाता है
छोटी–छोटी चट्टानों पर
यह कूँद फाँद फिर रिपट सिपट
नन्हें शिशु सा वह खेल रहा
फिर कभी अचानक सिमिट गया
मानो कुछ थोड़ा ठहर गया
गंभीर हुआ
जग ने समझा लो नष्ट हुआ
चहुँ ओर खड़े दुर्गम पहाड़
ऊपर से दिनकर प्रखर ताप
उसकी शक्ति को नाप रहे
वह भी उर में विश्वास लिये
अपनी मस्ती में डोल रहा
किन्तु जब पर्वत सो जाते
दिनकर भी छिपता, ढल जाता
स्नेह भरे, उत्साह भरे नभ में
जब चाँद सितारे मुस्काते
तब शुभ्र चाँदनी में दो–क्षण
चिन्ता व भय से मुक्त हुआ
भावीपथ का वह मानचित्र
अपने ही हाथों
चुपके फैला लेता
फिर शक्ति संग्रहित वेला में
वह कर्मवीर का रूप धरे
नभ से, वृक्षों से, दुर्वा से
मोती सी बूँद मिला लेता
जीवन सामर्थ्य जुटा लेता

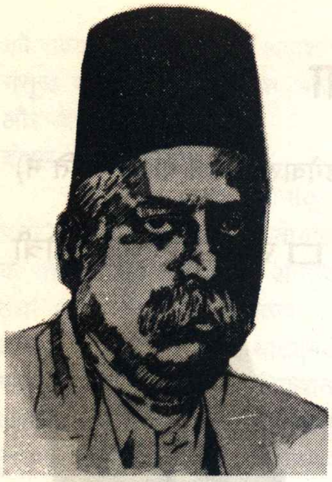

इस तरह मौन योगी सा वह
तप और तपस्या के बल पर
अद्भुत प्रचण्ड पर शान्त मौन
शक्ति का पुंज प्रकट निकला
था एक बूँद पर बह निकला

जिसको समझा एक झरना था–
उस धारा का मोहक नर्तन
निर्मल जल की
निश्छल छल–छल
दुःख दोष हरण की आतुरता
सबकी चिन्ता
सबका आदर
बड़्वानल की आग दबाये
मनमोहक दैवी शीतलता
निरख–परख
हो नतमस्तक
पर्वत भी मित्र बने उसके
वे पिघल पड़े
अन्तरतम के झरने फूटे
मिलने– निकले
झर–झरःझर–झर वे मचल पड़े
वह भी योगी सा मुस्काता
उर का स्नेह थिरक उठता
स्वागत करता
अपनी विशाल बाहों में भर
निज–पर का भाव दूर करता
कितना विशाल सागर सा उर !
सब आते और समा जाते
इस तरह जुटाता संबल को
वह ध्येय प्राप्ति की तड़पन में
गर्जन करता इठला–इठला
था एक बूँद पर बह निकला

फिर एक रोज गिरिराज स्वयं
उसके कानों में बोल उठे–
"हे, विश्व कल्याणक !
शक्ति शूल खड्ग सम
अभय प्रदायक !
प्रार्थना सुनो !
लो, दूर तराई में देखो
कितने आकुल शोषित पीड़ित
हैं राह तुम्हारी देख रहे
मैंने अपने आँगन में से
एक मार्ग प्रशस्त किया भारी
तुम चल निकलो"
उसको उत्तर का समय कहाँ
विश्राम नहीं क्षण भर का भी
झर–झर–झर अभिवादन कर
वह पूर्ण वेग से निकल पड़ा
ऊबड़ खाबड़ अनजान मार्ग में
जहाँ बढ़ा, पथ स्वयं बना
ऊपर समीर के झोंके जब
आकुल प्यासों की आह सुनाते, मनुवाते
वह गर्जन करता
तीव्रधार से चट्टानों को काट
बहाता वृक्ष, डुबाता मृतपिण्डों को
कल–कल–कल–कल
झर–झर–झर–झर
वह कभी उफनता, इठलाता
प्रबल वेग से कूद पड़ा
लो, गिरि गव्हर में
क्षण में भरता, उफनाता
फिर कभी गोल सा घूम
बनाता भँवर
खोजता डगर
बैठता तल में
पुनः लक्ष्य को चूम
उछलता ऊपर
मिला किनारों को
बढ़ जाता क्षण में
"क्रिया सिद्धिः सत्वे भवति महतां"
मंत्रघोष प्रकट निकला
था एक बूँद पर बह निकला

आत्मविलोपित, सर्वस्व समर्पित
जग ने देखा यह आदर्श रूप
विस्फारित नयनों से, हो नतमस्तक
अनन्त शक्ति, पुण्यधार
कलुष विनाशक, मोक्ष द्वार
चिर अभिलाषित, मूर्त प्यार
युग–युग का दृष्टा अपार
सदियों के कल्मष धोने को
संगठन जाह्नवी सा बनकर
उत्तर दक्षिण पूरब पश्चिम
घर–घर, गाँव–गाँव, नगरों में
बह निकला
जन जीवन का वरदान बना
युग–युग तक बहते रहने को
वह बह निकला

था एक बूँद पर बह निकला

(अनन्त चतुर्दशी, संवत् २०५७,
नयी दिल्ली)

महामना पंडित मदनमोहन मालवीय व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

□ डा० दीनानाथ सिंह
कार्यकारी अध्यक्ष, राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, उ०प्र०

अगस्त १६२३ में काशी में हिन्दू महासभा का सातवाँ साधारण अधिवेशन हुआ। उक्त अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में पं० मदनमोहन मालवीय ने हिन्दू जाति की प्राचीनता, विशिष्टता और गौरव की ओर प्रतिनिधियों का ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने कहा कि लोकमान्य तिलक की राय में आठ हजार वर्ष से यह जाति जीवित है। मालवीय जी हिन्दू जाति को ऋग्वेद के समय से जीवित जाति मानते हैं। अनेक वक्ताओं ने हिन्दू जाति की सामाजिकता का स्मरण दिलाते हुए हिन्दू संगठन की आवश्यकता पर बल दिया। हिन्दू विश्वविद्यालय के द्वारा हिन्दू धर्म, संस्कृति और साहित्य की रक्षा उनके कर्तव्य का प्रकट स्वरूप है। हिन्दू जाति की प्रतिष्ठा की स्थापना की उनकी चिंता १६३७ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को संगठन करने के निमित्त हिन्दू विश्वविद्यालय में विधि विद्यालय के प्रांगण में दो छोटे आकार के कमरा प्रदान करने के उनके कार्य से प्रकट होता है। कालान्तर में ये कमरे नव-निर्मित लॉ स्कूल में प्रमुख द्वार के सामने पूरब की ओर अपने पूर्व स्वरूप में हिन्दू चिंतन दर्शन के प्रतीक के रूप में मौजूद थे। १०फीट X १२फीट के दो कमरों को जोड़ने वाली करीब २५ फीट की चौड़ी पट्टी थी। कुम्भ तथा लगभग ६ एकड़ जमीन भी, जिसे आर०एस०एस० पवलियन के नाम से जाना जाता था, का विश्वविद्यालय प्रशासन के १६४१ के प्रस्ताव में यह उल्लेख मिलता है कि संघ भवन के इन कमरों का निर्माण स्वयंसेवकों के द्वारा एकत्रित १०६८ रुपये ६ पैसे में हुआ। ऐसा ही भवन मदन प्राचीन छात्र भवन के नाम से बना। उक्त भूखण्ड में लॉ स्कूल बनाने में किसी को कोई आपत्ति नहीं थी। संघ का कार्य शाखा के माध्यम से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में महामना की हिन्दू चिन्तन एवं राष्ट्रवादी दृष्टि की संकल्पना के अनुरूप कार्य करना था। जून १६७५ में आपात्काल की घोषणा होते ही महामना के समय से ही कभी हिन्दू विश्वविद्यालय से हिन्दू शब्द हटाने की माँग करने वाले कम्युनिस्ट और कांग्रेस (इ) के नेताओं ने सत्ता की सहायता से इन भवनों को हथियाने का कुचक्र प्रारम्भ कर दिया।

फावड़ा चल पड़ा

एक रात हिन्दू चिंतन के प्रतीक पर पुलिस के साये में तत्कालीन कुलपति डा० कालू लाल श्रीमाली की देख-रेख में फावड़ा चल पड़ा। प्रतीक भवन तो ढह गया, किन्तु आज वहाँ लॉन के रूप में प्रतीक विद्यमान है। डा० श्रीमाली कांग्रेस की सरकार में भारत के शिक्षा मंत्री थे किन्तु कुलपति बनने के बाद वे विश्वविद्यालय कम्युनिस्टों की राय से चलाते थे।

मालवीय जी की दृष्टि

मालवीय जी महाराज हिन्दू समाज, धर्म, संस्कृति की रक्षा के लिए सभी योग्य कार्य में न केवल सहायक थे अपितु उन्हें अपने सान्निध्य में कार्य करने का अवसर प्रदान किया करते थे। वे कट्टरपंथी मुस्लिम साम्प्रदायिकता से देश की रक्षा करना चाहते थे। इस कारण उन्होंने विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, महावीर संघ आदि जैसे संगठनों को कार्य करने का न्यौता दिया। विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा १६२६ में प्रारम्भ हो चुकी थी। शाखा की भावना के परिचय के बाद उसके सिद्धान्तकार और प्रवर्त्तकों को विश्वविद्यालय में लाने का प्रयत्न किया। उन दिनों राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शैशव अवस्था थी। संघ के संस्थापक आद्य सरसंघचालक प० पू० डा० केशव बलिराम हेडगेवार की योजना संघ की शाखा को नागपुर से बाहर ले जाने की थी। नागपुर से बाहर हिन्दू विश्वविद्यालय में शाखा के प्रारम्भ होने का दूसरा स्थान था। किन्तु कौन जानता था कि पं० मदनमोहन मालवीय जो विद्यानुरागी और विद्यासाधकों के पारखी थे, हिन्दू समाज की रक्षा और उत्थान के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कर्णधारों को काशी

हिन्दू विश्वविद्यालय में योजनाबद्ध ढंग से लायेंगे। उन दिनों उनका सान्निध्य श्री भैया जी दाणी से हुआ। उनके परामर्श के बाद मालवीय जी महाराज ने संघ के द्वितीय सरसंचालक प०पू० श्री माधव सदाशिव गोलवलकर उपाख्य श्री गुरुजी को मद्रास से शोधकार्य छुड़वाकर जीव विज्ञान विभाग में डिमांस्ट्रेटर के रूप में हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्त किया। बाद में वे उस विभाग में प्राध्यापक बन गये। संघ किस मार्ग का अनुसरण करे, इसका प्रबोधन प्रत्यक्षतः पं० मदनमोहन मालवीय ने तो नहीं किन्तु उन्होंने हिन्दू संगठन के दर्शन की परख श्री गुरुजी में की। २१ जून, १६४० को आद्य सरसंघचालक डाक्टर हेडगेवार का शरीर पंच तत्त्व में विलीन हुआ और श्री गुरुजी को अल्पायु में सरसंघचालक का गुरुत्तर दायित्व का भार मिला। यह ध्यान रखना उचित होगा कि उस समय तक संघ भी अल्पायु का ही संगठन था। उसे विचार दर्शन और संगठन जीवन का सिद्धान्त श्री गुरुजी ने प्रदान किया। पं० मदनमोहन मालवीय के अनुसार शूद्र और अन्त्यज हिन्दू हैं। तबलीग मुसलमानों के धर्म प्रचार से हिन्दू को मुसलमान बनाना तथा क्रिश्चियनों द्वारा प्रलोभन से हिन्दुओं को धर्मभ्रष्ट करने की असहाय वेदना संघ की कार्य प्रणाली के लिए मार्गदर्शन के रूप में आज भी प्रेरक है।

डॉ. राधाकृष्णन और संघ शाखा

संघ के लिए मार्गदर्शन का कार्य केवल मालवीय जी तक ही सीमित न था। उनके आग्रह पर सितम्बर १६३६ में कुलपति बन चुके डा० राधाकृष्णन भी संघ की शाखा पर जाते रहे। शाखा पर स्वयंसेवकों की संख्या घटने पर संख्या बढ़ाने का उत्साह देते रहे। उनकी दृष्टि में हिन्दू और हिन्दू धर्म स्थिति नहीं, गति है। हिन्दू और हिन्दू धर्म का परंपरागत विकास हुआ है तथा हमेशा क्रियाशील रहेगा आदि उनके सत्परामर्श स्वयंसेवकों के लिए मार्गदर्शक हैं। फलतः हिन्दू विश्वविद्यालय की कार्यसमिति के १६४१ के प्रस्ताव द्वारा निर्मित संघ भवन हटाये जाने की बात एक सुनियोजित षड्यन्त्र के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। लॉ स्कूल के निर्माण होने की योजना बनते समय विश्वविद्यलाय के कुलपति डा० त्रिगुण सेन के कार्यकाल में यह चर्चा चलती थी कि इस स्थान के बदले संघ के स्वयंसेवकों के लिए अन्यत्र स्थान दिया जाय। संघ भवन के हटाये जाने की बात १६६८ में श्री राजनारायण ने संसद में तथा गजेन्द्र–गडकर आयोग ने अपने प्रतिवेदन में सुझाव के तौर पर भी उठाया था। किन्तु ऐसा इसलिए नहीं हो सका कि पं० मदनमोहन मावलीय ने उस स्थान को स्वयंसेवकों के लिए दिया था। भवन को अलग करने का आग्रह छोड़ दिया गया। लॉ स्कूल के वास्तुकला के साथ संघ भवन के रूप में पूर्ववत रखने की योजना इस तरह से की गई है कि परस्पर दोनों भवन एक दूसरे के लिए आकर्षण लगें। उक्त भवन में स्वयंसेवक रहते थे। उसका स्वरूप कार्यालय का था। भवन में संघ साहित्य व अन्यं मार्गदर्शी साहित्य की पुस्तकें थी, जिन्हें पुस्तकालय का स्वरूप प्राप्त था। नित्य प्रति प्रातः की शाखा भवन के समीप मैदान में लगती थी। शाखा मालवीय शाखा के नाम से जानी जाती थी। १६६४ के आस–पास मालवीय शाखा की प्रातः और सायं उपशाखाओं का विस्तार हुआ। तकनीकी संस्थान, कृषि संस्थान और बिड़ला छात्रावास के मैदान में शाखायें लगनी प्रारम्भ हुईं जिनमें अध्यापक, छात्र कर्मचारी, निवासी, शाखा में आते थे। स्वयंसेवकों के शिष्ट व्यवहार एवं अनुशासन की प्रशंसा विश्वविद्यालय परिसर में बिना किसी विज्ञापन के थी। आज संघ कार्य की दृष्टि से विश्वविद्यालय एवं समीपवर्ती गाँवों के क्षेत्र मालवीय नगर के नाम से जाने जाते हैं।

मामला न्यायालय में

वस्तुतः विश्वविद्यालय परिषद द्वारा डा० श्रीमाली के कुलपति काल में संघ भवन गिराये जाने का कार्य कभी भी सर्वस्वीकृति से नहीं हुआ। न्यायालय की न्यायिक प्रत्याशा के पूर्व कुछ कहना उचित न होगा। किन्तु मालवीय जी के हिन्दुत्व चिंतन के मंच पर एक आघात के रूप में इस कार्य का मूल्यांकन करना उचित होगा। यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि देश की स्वाधीनता प्राप्ति के अंतिम दिनों में हिन्दुओं पर साम्प्रदायिक हिंसा और देश का विभाजन हम सबसे एक मार्गदर्शक मनीषी को छीन ले गया। मालवीय जी यदि जीवित होते तो विश्वविद्यालय के संघभवन के बारे में उनका मन्तव्य एक स्वयंसेवकं का होता तथा संघ भवन के नष्ट किये जाने को वे विधर्मी कुकृत्य मानते।

□

संघ की अभूतपूर्व कार्यपद्धति

□ नन्द किशोर

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ यदि अपनी स्थापना के कोई छह दशकों बाद ही 'विश्व का सबसे बड़ा स्वयंसेवी संगठन' बन गया और उसके पास 'देव दुर्लभ कार्यकर्त्ताओं की टोलियाँ' तैयार हो गईं तो इसका श्रेय संघ की उस कार्यपद्धति व रीति–नीति को ही जाता है जिसे संघ संस्थापक प०पू० डा० केशवराव बलिराम हेडगेवार ने गहन चिंतन–मनन, विचार मंथन और पूर्व के अनुभवों के आधर पर रचा था। भारत में जितने भी संगठन हैं वे अपनी बैठकें, सम्मेलन या अधिवेशन साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, षठमासिक या वार्षिक अवधि पर करते रहते हैं। परन्तु डा० हेडगेवार ने स्पष्ट रूप से यह चिंतन प्रस्तुत किया कि इस राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति करते हुए इसे परम वैभव के शिखर पर ले जाने के लिए कठोर तपस्या की आवश्यकता है और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए देश के सम्पूर्ण हिन्दू–समाज को संगठित करना अनिवार्य है। यह कार्य केवल दैनिक शाखा–दैनिक मिलन से ही संभव है। दैनिक शाखा पर शारीरिक–बौद्धिक के कार्यक्रमों की रचना हुई और नियमतः तथा नैमित्तिक कार्यक्रमों के द्वारा व्यक्ति–निर्माण का महान् यज्ञानुष्ठान शुरू किया गया। इसका ही सुफल है कि आज संघ की कार्यपद्धति तथा दैनिक शाखाओं के माध्यम से जिन कार्यकर्त्ताओं का निर्माण हुआ– अर्थात् उनमें 'स्वयंसेवकत्व' का प्रस्फुरण हुआ वे आज विभिन्न क्षेत्रों में जाकर सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं। संघ स्वयंसेवक की कल्पना ही यह है कि वह पवित्र हिन्दू धर्म, हिन्दू–संस्कृति तथा हिन्दू समाज के संरक्षण तथा उसकी सर्वांगीण उन्नति के लिए अन्तःकरण की स्वयंस्फूर्ति से प्रामाणिकता व निःस्वार्थ रूप से आजीवन सेवा रत रहे। शाखा में आने वाला स्वयंसेवक, समुचित परिपक्वता आने के बाद उपर्युक्त आशय की प्रतिज्ञा भी करता है। परन्तु यह समस्त कार्य इतना आसान नहीं है। अनेकानेक, कठिनाइयों, बाधाओं के बाद भी नित्यप्रति, एक निश्चित समय पर, निश्चित स्थान पर, निश्चित अवधि के लिए उपस्थित होना तथा अनुशासन में रहकर सारे कार्यक्रम करना आज किसी साधना या तप से कम नहीं है। इसी साधना से निरन्तर 'स्वयेसेवकों' का निर्माण हो रहा है। संघ के पास आज अनुशासित, परिश्रमी, संयमी, ध्येयनिष्ठ, कुशल, अनुभवी व समर्पित कार्यकर्त्ताओं की कमी नहीं है। ऐसे कार्यकर्त्ताओं के बल पर ही आज संघ का विराट रूप दिखाई देने लगा है जो 'सर्वव्यापक एवं स्वर्सपर्शी' बनता जा रहा है। विश्व के अनेकानेक देशों में भी संघ की उसकी योजना से चलने वाले संगठन न केवल प्रभावी ढंग से कार्यरत हैं बल्कि वहाँ के जन–जीवन को प्रभावित भी करने लगे हैं।

गण पद्धति

इन संघ–कार्यकर्त्ताओं के निर्माण हेतु ही दैनिक शाखा के लिए गटपद्धति और गणपद्धति अपनायी गई है। शाखा पर आने वाले स्वयंसेवकों का योग्य विकास करने, उनमें उत्तम गुण सम्पदा का स्फुरण पाने के लिए विविध कार्यक्रमों द्वारा योग्य प्रशिक्षण की रचना की गयी है। इनसे स्वयंसेवकों का शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक विकास होता है। संघ स्थान पर उपस्थित स्वयंसेवकों को उनकी स्थिति, अवस्था या श्रेणी के आधार पर अलग–अलग गणों में विभाजित किया जाता है और फिर हर गण के अनुरूप, पूर्व नियोजित व निर्धारित कार्यक्रम बनाए जाते हैं। इससे गण के शिक्षक व गण के स्वयंसेवकों के बीच गहरी आत्मीयता ही नहीं बढ़ती बल्कि इन कार्यक्रमों के माध्यम से उनमें नये उत्साह का भी जागरण होता है। गण में चलने वाले कार्यक्रम यथा– सूर्य नमस्कार, व्यायाम योग, आसन, पद–विन्यास, नियुद्ध, दण्ड, खेल, समता, संचलन आदि से शरीर सुदृढ़ता है, अनुशासन, शाहस, शौर्य के भाव जगते हैं तथा प्रार्थना, गीत–सुभाषित, अमृत वचन, चर्चा, बौद्धिक, समाचार–समीक्षा, बैठकों, संगोष्ठियों आदि से मानसिक व बौद्धिक विकास होता है। चिंतन की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। इन कार्यक्रमों के माध्यम से

यह भी प्रयास किया जाता है कि स्वयंसेवक में व्यक्ति निष्ठा नहीं, ध्येयनिष्ठा जाग्रत हो तभी उसमें देश, समाज के लिए पूर्ण समर्पण–भाव से सतत कार्य करने, अपने लिए कर्तव्यों को स्वयं निर्धारित करने, निःस्वार्थ भाव से कार्य करने व मन–वाणी–कर्म से सम्पूर्ण हिन्दू समाज को एक परिवार मानकर उसके हितों की रक्षा के लिए सतत कार्यरत रहने का संकल्प जाग्रत हो। संघ का विचार उनके व्यक्तिगत जीवन के आचार–विचार और व्यवहार में प्रकट हो जिसकी छाप समाज के अन्यान्य बंधुओं को भी प्रभावित करे। इस प्रकार 'व्यक्ति–रचना' की यह पद्धति (गण पद्धति) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और दैनिक शाखा पर इस पर सर्वाधिक जोर दिया जाता है। गण–शिक्षक का दायित्व होता है कि वह अपने गण के प्रत्येक स्वयंसेवक के समुचित विकास पर ध्यान दे और प्रत्येक से अपने गहरे सम्बन्ध कुछ इस प्रकार बनाये कि स्वयंसेवक एक ध्येयनिष्ठ स्वयंसेवक बन सके। इस कारण शिविरों में गणशः निवास की व्यवस्था की जाती है ताकि सबके बीच समुचित समन्वय, मित्रता, बंधुत्व, आत्मीयता तथा सांघिक जीवन का अभ्यास हो।

गट–पद्धति

व्यक्ति–निर्माण में संघ स्थान पर गण पद्धति का जितना महत्व है, संघ स्थान के बाहर–शाखा क्षेत्र में गट–पद्धति का भी उतना ही महत्व है। शाखा–क्षेत्र को सुविधा की दृष्टि से छोटे–छोटे क्षेत्रों में बाँटा जाता है और ऐसे हर क्षेत्र को एक गट कहते हैं। इस क्षेत्र का मुखिया 'गटनायक' कहलाता है। संगठन में गटनायक एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कड़ी है। संघ कार्य के जो चार अंग– लोक सम्पर्क, लोक संग्रह, लोक संस्कार तथा लोक व्यवस्था माने गये हैं उनमें लोक सम्पर्क तथा लोक संग्रह के लिए गटनायक का महत्व अत्यधिक होता है। अपने गट के क्षेत्र के प्रत्येक हिन्दू–परिवार से सम्पर्क करना, उसके साथ परिचय कर प्रगाढ़ सम्बन्ध बनाना गटनायक का दायित्व होता है। उसका यह प्रयास रहता है कि उसके क्षेत्र (गट) में जितने भी हिन्दू परिवार हैं उनमें से जो भी पुरुष शाखा जा सकते है उन्हें संघ स्थान पर उपस्थित किया जाए और जो शाखा नहीं जा सकते हैं उन्हें संघ के विचार से अवगत कराया जाए। शाखा में नयी भर्ती करने के लिए भी इस पद्धति का अत्यन्त महत्व रहता है। चूँकि गटनायक अपने सम्पूर्ण क्षेत्र यानी गट से सीधा सम्पर्क रखता है अतः उस क्षेत्र में चलने वाली हर गतिविधि का भी उसे पता रहता है। इसी गट पद्धति के कारण अनेक गंभीर–दुरभिसंधियों की समय से पूर्व सूचनाएँ मिल चुकी हैं और उसके द्वारा कई दुर्घटनाएँ टाली जा सकी हैं। गटनायक का प्रयास रहता है कि उसके अपने क्षेत्र के स्वयंसेवकों के साथ 'चूल्हे–चौके' तक सम्पर्क–संबंध रहे। इतने प्रगाढ़ संबंध बनने से गहरे पारिवारिक संबंध बनते है और इन्हीं सम्बन्धों के आधार पर गटनायक अपने क्षेत्र के स्वयंसेवकों को संघस्थान पर उपस्थित कर 'लोक संग्रह' का कार्य भी पूरा करता है। जिन–जिन क्षेत्रों में यह गट–व्यवस्था सुदृढ़, जीवंत, प्रभावी तथा सक्रिय रहती है वहाँ देश–हितों के विरुद्ध षड्यंत्रों पर भी कड़ी निगरानी सरलता से रखी जा सकती है और क्षेत्र के एक–एक व्यक्ति की सूचना एकत्र की जा सकती है। किसी के दुःख–सुख में सहभागिता बनाई जा सकती है जो सम्पूर्ण समाज के 'एक परिवार' होने की परिकल्पना को सफल बना सकता है। गटानुसार सहभोज, वनविहार, बैठकें करके पारस्परिक संबंधों को गहरे आत्मीयता के संबंधों में बदला जाता है और यह संबंध जितने मजबूत बनते है, संगठन की दृढ़ता भी उससे बढ़ती है। गट–पद्धति की योग्य रचना होने पर पूरे देश में कोई भी सूचना कश्मीर से कन्याकुमारी तक सरलता से पहुँचा दी जाती है। गट पद्धति के माध्यम से 'लोक–संपर्क' तथा 'लोक संग्रह' होने के बाद 'लोकसंस्कार' का कार्य गण पद्धति के द्वारा संघ स्थान पर पूरा होता है। नित्यप्रति शाखा में आने से संघ का चिंतन, संघ के ध्येय का व्यावहारिक रूप से ज्ञान प्राप्त होता है। जैसे जंगल में प्रतिदिन चलने से पगदण्डी बन जाती है, रोज–रोज बर्तन साफ करने से वह चमकता रहता है उसी प्रकार संघ–ध्येय का रोज–रोज शाखा पर जाकर स्मरण करते रहने से स्वयंसेवक के जीवन में संघ और संघ का विचार स्थायी रूप से रच बस जाता है और इसी 'स्वयंसेवकत्व' के बल पर कोई भी कार्यकर्त्ता जीवनपर्यन्त दृढ़तापूर्वक, हर परिस्थिति में अडिग रहकर कार्यरत रहता है। संघ पर तीन–तीन बार प्रतिबंध लग चुका है। १९७५ का आपात्काल तो अविस्मरणीय ही रहा है। परन्तु उपर्युक्त गट–पद्धति, गण पद्धति के द्वारा निर्मित स्वयंसेवक अडिग रहे और हर प्रतिबंध के बाद

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

नींव के पत्थर

□ जी.एन. पथरिया

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आज भारत ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व का सबसे विराट संगठन है। सुप्रसिद्ध विचारक एवं संघ के वरिष्ठ प्रचारक श्री दत्तोपन्त ठेंगड़ी के अनुसार भारत में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और कम्युनिस्ट आंदोलन की शुरुआत प्रायः एक कालखंड में हुई। यद्यपि भारत की कम्युनिस्ट पार्टी का गठन १९२० के उत्तरार्द्ध में भारत की धरती से हजारों किलोमीटर दूर ताशकन्द के सैनिक विद्यालय में हो गया था, फिर भी उसकी विधिवत गतिविधियाँ भारत में सन् १९२५ में कानपुर में आयोजित प्रथम कांग्रेस सम्मेलन से ही प्रारंभ हो सकी थीं। अतः इस दृष्टि से भारत में कम्युनिस्ट आन्दोलन तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य का प्रारंभ होना प्रायः एक ही कालखंड में हुआ माना जा सकता है क्योंकि डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार ने इस संगठन का कार्य संवत् १९८२ की पावन विजयादशमी अथवा सन् १९२५ के दशहरा पर्व से प्रारंभ किया था।

आधारभूत अन्तर

दोनों में इस समानता के बावजूद उनमें कई आधारभूत अन्तर विद्यमान रहे हैं। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी मानवेन्द्र नाथ राय ने जब १९२० में ताशकन्द के अन्दर भारत की कम्युनिस्ट पार्टी का गठन किया तब वे एक अनजान व्यक्ति नहीं थे। उनकी प्रतिभा, योग्यता, संगठन कुशलता, ध्येय समर्पित जीवन, कर्तव्यनिष्ठा, कुशाग्र बुद्धि, बौद्धिक प्रतिभा आदि से सन् १९१७ की सोवियत क्रान्ति का जनक व्लादिमिर इलिच उलियानोव उपाख्य लेनिन अत्यधिक प्रभावित था तथा उसने एम.एन. रॉय को आमंत्रण देकर न केवल सोवियत संघ में बुलाया था अपितु उपनिवेशवाद के संबंध में वे रूस की बोल्शेविक पार्टी या कम्युनिस्ट पार्टी के परामर्शदाता भी नियुक्त किए गए थे। अबानी मुखर्जी, नलिनी गुप्ता, सन्तोष सिह, रतन सिंह गुरुमुख सिंह, वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय, पी. खानखोजे, श्रीपाद अमृत डांगे, रजनी पाम दत्त, सत्यभक्त, मुजफ्फर अहमद, शौकत उस्मानी आदि प्रसिद्ध नेता एवं कार्यकर्त्ता उन्हें सहयोगी के रूप में प्राप्त थे। इसके ठीक विपरीत संघ–संस्थापक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार संघ–स्थापना से पूर्व तत्कालीन मध्य प्रान्त में एक प्रान्तीय स्तर के कांग्रेस नेता की ख्याति ही अर्जित कर सके थे तथा संघ प्रारंभ करते समय उनके साथ १५–२० बाल एवं किशोर वय के स्वयंसेवकों की एक टोली मात्र थी। एकमात्र अपवाद श्री हरिकृष्ण उपाख्य अप्पाजी जोशी थे जिन्हें मध्य प्रान्त में एक कर्मठ एवं समर्पित कांग्रेस नेता के रूप में जाना–पहचाना जाता था। कहने का आशय है कि भारत में कम्युनिस्ट आन्दोलन के जनक मानवेन्द्रनाथ राय एवं उनके सहयोगी देश के सार्वजनिक जीवन में अपन्री ख्याति एवं विशिष्ट पहचान रखते थे जबकि डॉ. हेडगेवार तथा उनके आरंभिक सहयोगी देशवासियों एवं समाज बन्धुओं के लिए प्रायः अनजान थे। दूसरे, एम.एन. राय और उनके सहयोगी अपनी प्रसिद्धि एवं ख्याति की चमक से युक्त थे जबकि संघ–संस्थापक एवं उनके प्रारम्भिक सहयोगी इस कीर्ति–गाथा से पूर्णतया वंचित थे। तीसरे, भारत के कम्युनिस्ट आन्दोलन के साथ सन् १९१७ में रूस में सफल बोल्शेविक क्रान्ति की गरिमा संबद्ध थी जबकि संघ इस गौरवपूर्ण स्थिति से पूर्णतया वंचित था। चौथे, भारत की कम्युनिस्ट पार्टी अथवा आन्दोलन सर्वहारा का नारा लगाने के बावजूद भौतिक साधनों से सन्नद्ध थे जबकि संघ संस्थापक डॉ. हेडगेवार को दो समय की रोटी भी मयस्सर नहीं थी। पाँचवें, कम्युनिस्ट आन्दोलन अपने साथ प्रगतिशीलता का तमगा चिपकाए था। इस प्रकार दोनों में आधारभूत रूप से अन्तर विद्यमान था।

पुनरुद्धार हेतु सक्रिय

लेकिन इस सुविधापूर्ण स्थिति के बावजूद आज भारत का कम्युनिस्ट आंदोलन द्रुत गति से अपना अस्तित्व खोने की रपटीली राह पर दौड़ता दिखाई दे रहा है। आज देश में दो दर्जन से अधिक कम्युनिस्ट पार्टियाँ हैं। उसकी सबसे बड़ी इकाई 'भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी)' तक अपनी प्रासंगिकता खोती जा रही है और अब भारत के निर्वाचन आयोग ने उसकी अखिल भारतीय स्तर की मान्यता समाप्त करके उसे पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा तथा केरल में राज्य स्तरीय दल के रूप में ही केवल मान्यता दी है। दूसरे शब्दों में भारत का कम्युनिस्ट आंदोलन अपनी अस्मिता एवं पहचान को बनाए रखने के चुनौतीपूर्ण कालखंड से गुजर रहा है। ऐसी ही दु:स्थिति देश में समाजवादियों की हुई है यद्यपि प्रसिद्ध एवं प्रतिभावान व्यक्तियों एवं नेताओं की उसके पास भी कोई कमी नहीं थी।

प्रभाकर बलवन्त (भैयाजी) दाणी

उमाकान्त केशव (बाबासाहब) आपटे

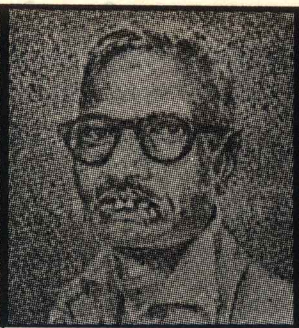
दादाराव परमार्थ

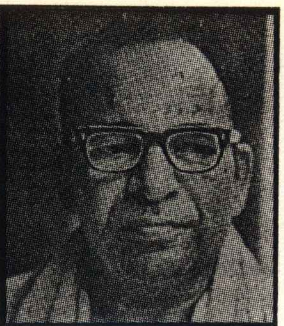
एकनाथ रानडे

दूसरी ओर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य निरन्तर प्रगति पथ पर बढ़ता जा रहा है। यहाँ तक कि अपने–आपको विश्वव्यापी बताने वाला कम्युनिस्ट आंदोलन अब अपनी मौत मर रहा है जबकि दूसरी ओर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य राष्ट्रीय सीमाओं को पार कर विश्वव्यापी बन गया है। यहाँ तक कि बहरीन आदि इस्लाम मतावलंबी देशों तक में संघ–कार्य की सक्रियता बढ़ गई है तथा ब्रिटेन की भूतपूर्व प्रधानमंत्री सुश्री मार्ग्रेट थैचर अब ब्रिटेन के हिन्दू स्वयंसेवक संघ द्वारा आयोजित शारीरिक प्रदर्शन के कार्यक्रम में भगवा ध्वज फहराकर स्वयं को गौरवान्वित कर रही हैं। इसी भाँति राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य न केवल वृद्धिंगत हो रहा है अपितु ५१ से भी अधिक संगठन उसकी प्रेरणा से मातृभूमि का पुनरुद्धार करने के लिए पूरी तरह सक्रिय बने हुए हैं।

निष्कलंक चरित्र

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की इस विलक्षणता को समझ पाना कठिन नहीं है। इसका कारण यह है कि डॉ. हेडगेवार द्वारा प्रारंभ किया गया संघ–कार्य पूर्णरूपेण भारतीय अथवा हिन्दू जीवन–दर्शन पर आधारित है। उसकी प्रगति का रहस्य उसके संस्थापक डॉ. हेडगेवार तथा उनके अनुयायियों के पूर्णतया धवल, निर्मल, उदात्त एवं निष्कलंकित चरित्र में छिपा हुआ है। उनकी कथनी और करनी में किसी भी प्रकार का कोई द्वैत नहीं रहा है। ऐसे तेजस्वी जीवन से युक्त व्यक्तियों के सम्पर्क एवं सान्निध्य में जो कोई भी आता है, उसका कायाकल्प हो जाता है। ऐसे तेजस्वी व्यक्तित्व के धनी व्यक्तियों को अपनी भाषण–कला द्वारा अन्य व्यक्तियों को अपनी ओर आकर्षित नहीं करना पड़ता। अन्य प्रतिभासम्पन्न युवक एवं व्यक्ति उनकी ओर स्वतः आकृष्ट हो जाते हैं। गँवार से दिखने वाले पूज्य पं. गदाधर अथवा श्री रामकृष्ण परमहंस के प्रति नरेन्द्रनाथ दत्त के खिंचते चले जाने का यही तो मूल आधार था और उनके संपर्क में आने से ही वे स्वामी विवेकानन्द बनकर भारत का कायाकल्प करने की सुदृढ़ आधार–शिला रखने में समर्थ और सफल हो गए। डॉ. हेडगेवार का अपना जीवन भी ऐसा ही धीरोदात्त एवं निष्कलंक था तथा अपने श्रेष्ठ चारित्र्य की शुचिता के आधार पर ही अत्यन्त साधारण से दिखने वाले बाल एवं किशोर वय के छात्रों को उन्होंने राष्ट्र–निर्माता बना दिया। उनमें ऐसी दुर्धर्ष कर्तृत्वशक्ति का प्रस्फुटन उन्होंने कर दिया कि अपने जन्मस्थान से सैकड़ों–हजारों किलोमीटर की दूरी पर जाकर वहाँ की भाषा, वेश–भूषा, रीति–रिवाज, सामाजिक जीवन आदि से पूर्णतया अपरिचित होने के बावजूद इन साधनहीन विद्यार्थियों ने ऐसा सुदृढ़ एवं प्रभावशाली शाखाओं का जाल बिछा दिया जिसे देखकर आज संसार आश्चर्यचकित है। यह सही है कि इन युवकों में अत्यन्त उच्च कोटि की प्रतिभा अन्तर्निहित थी, किन्तु उसका प्रस्फुटन कुशल माली के निर्देशन एवं संरक्षण में ही हो पाना संभव था तथा डॉ. हेडगेवार ऐसे ही निष्णात व्यक्ति–निर्माता थे।

गलती न हो...

इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि अपने प्रसिद्धि पराङ्मुख व्यक्तित्व एवं जीवन द्वारा डॉ. हेडगेवार ने इन युवाओं को यह संस्कार प्रदान कर दिया कि अल्प अथवा उल्लेखनीय सफलता मिलने पर भी उन्हें प्रसिद्धि पाने एवं अपना यशोगान कराने की प्रवृत्ति से पूर्णतया अलिप्त रहना चाहिए। इसीलिए डॉ. हेडगेवार ने दिल्ली में संघकार्य का बीजारोपण करने वाले

स्व. भाऊराव देवरस

हरिकृष्ण (अप्पाजी) जोशी

स्वर्गीय वसन्त कृष्ण ओक को ११ दिसम्बर, १६३६ को लिखे अपने पत्र में कहा था कि "आपके दिल्ली पहुँचने और आपके द्वारा वहाँ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य प्रारंभ होने जा रहा है विषयक जानकारी समाचार–पत्र में प्रकाशित होना संगठन–कार्य की दृष्टि से ठीक नहीं है। .... फिर यह गलती न हो, इसकी चिन्ता कीजिए।"

नींव के पत्थर

इस प्रसिद्धि–पराङ्मुखता की प्रवृत्ति का प्रखर संस्कार देने के लिए ही संघ–शाखाओं में उस समय ऐसे गणगीत प्रचलित थे जिनमें कहा गया है कि :

न चाहूँ मान दुनियाँ में,
न चाहूँ स्वर्ग को जाना।
हमें माता यही वर दो,
रहूँ भारत पर दीवाना।।

इतना ही नहीं, आगे यह भी बताया गया कि :

वृत्त–पत्रों में नाम छपेगा,
पहनूँगा स्वागत समुहार।
छोड़ चलो यह क्षुद्र भावना,
हिन्दू राष्ट्र के तारणहार।।

फलस्वरूप इन प्रखर संस्कारों के द्वारा ही डॉ. हेडगेवार ने अपने धवल, उज्ज्वल, निष्कलंक एवं प्रसिद्धि–पराङ्मुख चरित्र के आधार पर राष्ट्रभक्त कार्यकर्त्ताओं किंवा स्वयंसेवकों की ऐसी अजस्र शृंखला का निर्माण कर दिया कि राष्ट्र–मंदिर के शीर्ष कलश बनने के बजाय उसकी नींव के पत्थर बनने में ही अपने जीवन की धन्यता समझने लगे।

संघ मन्दिर का निर्माण करने वाले राष्ट्र–समर्पित इन कार्यकर्त्ताओं की सूची अत्यन्त लम्बी है। किस–किस का उल्लेख किया जाए? फिर यह भय भी लगता है कि कहीं अपनी अज्ञानता एवं असावधानी से किसी महाभाग का नामोल्लेख न करने का अपराध अथवा पाप न कर बैठूँ। फिर भी भावी पीढ़ियों की जानकारी के उद्देश्य से कतिपय कार्यकर्त्ताओं का नामोल्लेख करना समीचीन होगा। इस दृष्टि से सर्वश्री अप्पा जी जोशी, बाबा साहब आप्टे, दादाराव परमार्थ, भैयाजी दाणी, बालासाहब देवरस, राजाभाऊ पातुरकर, भाऊराव देवरस, लक्ष्मण राव इनामदार, भास्करराव कलम्बी, नारायण राव तर्टे, जनार्दन दत्त चिंचालकर, मधुकरराव देव, गोपालराव येरकुंटवार, मा.स. गोलवलकर, विट्ठलराव पत्की, बापूराव दिवाकर, नरहरि पारखी, माधवराव मुल्ये, बाबाजी कल्याणी, के.डी. जोशी, मोरेश्वर मुंजे, वसन्तकृष्ण ओक, कृष्णराव वडेकर, नारायणराव पुराणिक, कृष्णराव मोहरील, रामभाऊ जामगड़े, एकनाथ रानडे, बापूराव भिषीकर, शंकरराव कुर्वे, अण्णा शेष, दत्तोपंत यादवडकर, मधुकर भागवत, आबाजी हेडगेवार, यादवराव जोशी, गोपालराव पाठक, बालासाहब हरदास, नाथ मामा काले, गजाननराव जोशी, बच्छराज व्यास, बालासाहब सगदेव, प्रभाकर फड़णवीस, दामोदर गंगाधर भावे, बालासाहब इंदूरकर, दत्ताजी डिडोलकर, राम मोलेदे, गोपालराव बाकले, सदुभाऊ चितले, बापूराव पाल्धीकर, रामभाऊ इंदूरकर, बालासाहब गोरे, मनोहर गुर्जर, दीनदयाल उपाध्याय, अनन्त रामचन्द्र गोखले, माधवराव देवले आदि का नामोल्लेख किया जा सकता है। किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि जिन अनेक श्रेष्ठ कार्यकर्त्ताओं के नामों का उल्लेख यहाँ पर नहीं हुआ है संघ–कार्य के विस्तार में उनका योगदान किसी भी रूप में न्यून अथवा कम है। वस्तुतः इन ज्ञात एवं अज्ञात नींव के पत्थरों के ऊपर ही संघ रूपी यह दिव्य मंदिर आज अवस्थित है तथा सन्तान धर्म का अक्षरशः पालन करते हुए अपने इस सनातन राष्ट्र को एक बार पुनः परम वैभव पर ले जाने हेतु कृतसंकल्प हैं। संघ स्वयंसेवकों की इस अजस्र शृंखला के आधार पर ही उसके तृतीय सरसंघचालक पूजनीय मधुकर दत्तात्रय उपाख्य बाला साहब देवरस ने एक बार कहा था कि "हमारा यह सौभाग्य है कि हमें देव–दुर्लभ कार्यकर्त्ताओं का सक्रिय सहयोग प्राप्त है तथा उनके कर्तृत्व के आधार पर ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ निरन्तर प्रगति कर रहा है।" □

संघ के स्वयंसेवकों ने जान हथेली पर रखकर बचाया था दिल्ली को

□ डा० भगवानदास

भारत विभाजन के दिनों में कट्टरपंथी मुसलमानों ने न केवल पंजाब तथा पूर्वी बंगाल में हिन्दुओं का नरसंहार किया अपितु राजधानी दिल्ली में भी पूरा खून–खराबा कर १० सितम्बर १६४८ को भारत सरकार के मंत्रियों की हत्या कर लाल किले पर पाकिस्तानी झण्डा फहराने का कुत्सित षड़यन्त्र रचा था। उस समय यदि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक भीषण खतरा मोल लेकर मुस्लिम लीगियों के इस गुप्त षड़यन्त्र का पता नहीं लगाते तथा सरदार पटेल तथा नेहरू जी को ठीक समय पर सूचना नहीं पहुँचाते तो इसका दुष्परिणाम क्या होता– यह सोचकर भी हृदय काँप उठता है।

महान् मनीषी तथा दार्शनिक डॉ० भगवानदास (काशी) ने उन दिनों अपने एक लेख में संघ के इस राष्ट्र–कार्य की सराहना की थी। उसे यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है– संपादक

मुझे विश्वस्त रूप से पता चला है कि दिल्ली के मुस्लिम लीगियों के विश्वासभाजन बनकर उनके भेदों का पता लगाने के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कुछ स्वयंसेवकों ने इस्लाम–धर्म को स्वीकार कर लेने का बहाना तक किया था और इस प्रकार १० सितम्बर सन् १६४८ ई० को सरकार के सभी मन्त्रियों व हिन्दू नागरिकों की हत्या करके लाल दुर्ग पर पाकिस्तानी झण्डा फहराने और हिन्दुस्तान की सत्ता हथियाने के लिए मुस्लिम लीगियों द्वारा रचे गये षड़यन्त्र की सच्चाई सरदार पटेल और नेहरू जी को ठीक समय पर देने में समर्थ हुए थे।

स्वयंसेवकों ने की सरकार की रक्षा

सात सितम्बर को जब यह सूचना सरदार पटेल तथा नेहरू जी के पास पहुँचाई गई, उस समय दिल्ली में विश्वास करने योग्य थोड़ी भी सेना नहीं थी। इस पर उन्होंने प्रधान सेनापति आकिनलेक तथा अन्य सेनाधिकारियों से त्वरित विचार–विनिमय किया, तार भेज कर देश भर में जितनी सेना मिल सकती थी, उतनी दिल्ली में बुला ली। कुछ सहस्र सिपाहियों की सहायता से सारी दिल्ली में छापे मारकर मुस्लिम लीगियों के गुप्त अड्डों का पता लगाया गया। इनमें से कुछ स्थान तो वाइसराय–भवन के बहुत ही निकट, एक मस्जिद के तहखाने में मिले, जिनमें से बहुत अधिक परिमाण में गोला–बारूद, भोजन–सामग्री तथा बहुत से मुस्लिम लीगी सैनिक एकत्रित पाये गये। हमारे राजभक्त सैनिकों तथा अधिकारियों ने उन स्थानों पर आक्रमण किया और सहस्त्रों विश्वासघातक देशद्रोहियों से सरकार की रक्षा की।

जब चारों ओर निराशा का वातावरण फैला हुआ था, उस समय मन्त्रियों को लाने ले जाने वाले गैरसरकारी कम्पनियों और वायुयानों द्वारा जो आशा की ज्योति बनकर श्रीनगर (कश्मीर) की ओर धाये, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवकों की वह वीरगाथा आज सारी दुनिया जानती है। वे संघ के ही स्वयंसेवक थे, जिन्होंने अपने जीवन में बन्दूकों अथवा अन्य शस्त्रों का न तो कभी उपयोग ही किया था और जो न कभी दिल्ली से कश्मीर तक हिमाच्छन्न पहाड़ों पर से उड़े ही थे। किन्तु फिर भी उस कोहरे तथा पाले के बीच से यात्रा करते हुए भगवान के भरोसे श्रीनगर के हवाई अड्डों पर रात्रि के अन्धकार में आठ बजे कुछ थोड़े से अधिकारियों सहित उतरने में सफल हुए, उनकी वीरता सर्वविदित है।

पूरा भारत पाकिस्तान बन जाता

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सम्बन्ध में मैंने यह सब क्यों कहा है ? केवल इसलिए कि यदि उत्साह और बलिदान के भावों से भरे हुए वे संघ के युवा स्वयंसेवक उस अत्यन्त सामयिक सूचना को नेहरू जी और सरदार पटेल के पास न पहुँचाते तो आज भारत की सरकार न होती–सारा देश पाकिस्तान में परिवर्तित हो जाता तथा लाखों हिन्दू मार डाले गये होते। जो बचते उन्हें या तो मुसलमान बना लिया जाता या घोर दासता के बन्धनों में जकड़ दिया जाता। अतिशय कट्टरपन्थी पण्डित महानुभाव या तो समाप्त हो गये होते अथवा आनन्द के साथ गोमांस खाते होते। □

शहीद सुखदेव के परिवार को ऐसे बचाया स्वयेसेवकों ने

□ शिवकुमार गोयल

'शहीदे आजम' सरदार भगतसिंह तथा राजगुरु के साथ फाँसी का फन्दा चूमने वाले महान क्रांतिकारी सुखदेव के अनुज मथुरादास थापर मेरे पिलखुवा स्थित निवासस्थान पर पधारे हुए थे। मैं उनके लिए 'मेरे भाई शहीद सुखदेव' ग्रंथ का सम्पादन कार्य कर रहा था। एक दिन मैंने बातों ही बातों में उनसे पूछा– 'भारत विभाजन के समय आपको पंजाब से भारत आने को विवश होना पड़ा था। उस समय लायलपुर में हजारों हिन्दुओं को उन्मादी मुसलमानों के हाथों प्राण गँवाने पड़े थे। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवकों की उस दौरान क्या भूमिका थी ?"

श्री थापर जी बोले– 'यदि संघ के स्वयंसेवक हमारी सहायता नहीं करते तो हमारा परिवार लायलपुर से जीवित नहीं लौट सकता था। संघ के स्वयंसेवकों ने जान हथेली पर रखकर हजारों हिन्दुओं को लायलपुर से सुरक्षित अमृतसर पहुँचाया था।'

श्री मथुरादास थापर बताते हैं : 'हमारे ताऊ ला० अचिन्तराम थापर लायलपुर के अग्रणी कांग्रेसी नेता थे। वे वर्षों तक जिला कांग्रेस के अध्यक्ष रहे थे। गांधी जी तथा नेहरूजी के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा थी।

"१९४६ के दिन थे। ताऊ (ला० अचिन्तराम) लायलपुर नगरपालिका के अध्यक्ष थे। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि महात्मा गांधी के रहते भारत का विभाजन कदापि नहीं होगा। **एक दिन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता ने जब एक बैठक में भारत विभाजन की घोषणा होने की आशंका जताई तो ताऊ जी उस पर बुरी तरह बिफर पड़े थे 'तुम फिरकापरस्त लोग–बेकार का डर पैदा कर रहे हो। कांग्रेस किसी भी हालत में बँटवारा नहीं होने देगी।"**

१९४७ में जब भारत विभाजन की घोषणा हो चुकी तब भी ताऊ जी लायलपुर नगरपालिका के चेयरमैन थे। मियाँ जिन्ना से उनके निकट के सम्बन्ध रहे थे। पाकिस्तान के निर्माण की घोषणा के बाद भी उनका विश्वास था कि जिस प्रकार हिन्दुस्तान में हिन्दू–मुसलमान मिलकर रहेंगे उसी प्रकार पाकिस्तान में भी हिन्दू-मुसलमान शांतिपूर्वक रहेंगे। ला० अचिन्तराम जी के एक अनन्य मित्र थे हकीम नूरुद्दीन। वे भी जिन्ना के निकट रहे थे।

जिन्ना ने हिन्दुओं को 'काफिर' कहा

जब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, हिन्दू महासभा तथा आर्यसमाज के नेताओं ने हिन्दुओं को शीघ्रतिशीघ्र सुरक्षित निकल कर हिन्दुस्तान चले जाने का आह्वान किया तो ताऊ जी ने मियाँ जिन्ना से हिन्दुओं को पाकिस्तान में सम्मानपूर्वक रहने देने का 'फतवा' लेने हकीम नूरुद्दीन जी के पुत्र अब्दुल कय्यूम को अपना पत्र देकर जिन्ना के पास भेजा।

अब्दुल कय्यूम कराची पहुँचे। उन्होंने मियाँ जिन्ना से भेंट की तथा उन्हें ताऊजी का पत्र दिया। मियाँ जिन्ना ने अब्दुल कय्यूम से पूछा– 'तुम मुस्लिम लीग के नेता हो। क्या पाकिस्तान का अर्थ जानते हो ?' कुछ देर रुक कर मियाँ जिन्ना बोले– "पाक–स्थान का तो मतलब ही यह है कि जहाँ पूरी तरह इस्लामी शासन होगा। फिर हमारे देश में बुतपरस्त हिन्दुओं, काफिरों को बराबरी का दर्जा कैसे मिलेगा ?"

मियाँ जिन्ना कुछ देर रुके, फिर बोले– "अरे भाई मैंने जवाहरलाल से कहा था कि इधर–उधर के हिन्दू–मुसलमानों को पूरी तरह से बाँट दो, यदि खून–खराबा रोकना चाहते हो तो। जवाहरलाल बहुत जिद्दी है– उसने मेरी बात नहीं मानी। अब देखना दोनों तरफ भारी खून–खराबा होगा– इसकी जिम्मेदारी जवाहरलाल पर होगी।'

थापर साहब ने बताया– 'अब्दुल कय्यूम ने जब लायलपुर लौटकर ताऊ जी को जिन्ना का यह जवाब सुनाया तो मैं उनके पास बैठा हुआ था। ताऊजी ने बड़बड़ाते हुए कहा था– **"लगता है संघ वालों की बात ही सही सिद्ध होगी। ये कट्टरपंथी मुस्लिम लीगी एक भी हिन्दू को ससम्मान पाकिस्तान में नहीं रहने देंगे।'** ताऊ जी **उस रात सो नहीं पाए थे।**

थापर साहब बनाते हैं कि "१४ अगस्त का दिन था। पाकिस्तान का पहला आजादी दिवस मना तो ताऊजी (ला० अचिन्तराम जी) को लायलपुर

नगरपालिका का अध्यक्ष होने के नाते झण्डा फहराने के लिए आमंत्रित किया गया। मैं तथा लालाजी के पुत्र प्रकाश दोनों उनके साथ गये। लालाजी ने पाकिस्तान का झण्डा फहराया तथा अपने भाषण में कहा– 'हम इसी भूमि पर पैदा हुए हैं। हमने शहीद भगतसिंह आदि के साथ स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया है। मेरा भतीजा सुखदेव फांसी पर चढ़ा है। हम मिल–जुलकर अपने वतन में ही रहेंगे। अब यही हमारा वतन है।'

"एक ओर पाकिस्तान दिवस मनाया जा रहा था– ताऊ जी भाषण दे रहे थे– ठीक उसी समय 'अल्ला हो अकबर' के नारे लगाते हुए मुस्लिम मतान्धों ने लायलपुर के हिन्दुओं के मकानों व दुकानों पर हमले शुरू कर दिए। उनके मकान–दुकान जलाए जाने लगे। हिन्दू युवतियों का अपहरण किया जाने लगा। चुन–चुन कर हिन्दुओं की हत्या शुरू कर दी गई। बड़ी मुश्किल से हम सबको सभा–स्थल से सुरक्षित घर पहुँचाया गया।

और वे बेहोश हो गए

जब अगले ही दिन हमारे मोहल्ले के अनेक हिन्दू घरों पर हमले कर अनेक की हत्याएँ कर दी गईं–घरों को जला दिया गया तो ताऊ जी के मित्र हकीम बदरुद्दीन आए तथा उन्होंने उन्हें तुरन्त सुरक्षित डी.ए.वी. कालेज के कैम्प में चले जाने का सुझाव दिया। हम एक जीप में बैठकर कैम्प की ओर चले। रास्ते में हम सबने अपनी आँखों से मुस्लिम गुण्डों को हिन्दुओं का पीछा कर उन्हें छुरे–भोंकते हुए देखा। वे जगह–जगह दुकानों का लूट रहे थे, जला रहे थे। ताऊजी ने यह दृश्य देखा तो वे जीप में ही बेहोश हो गए। ताऊजी ने होश आने पर भी कहा– 'गांधी जी की बात जिन्ना टाल नहीं सकता। कुछ ही दिन बाद हम सब यही शांति से रहने लगेंगे।'

ताऊ जी ने मकान छोड़ते समय मकान की चाबी हकीम बदरुद्दीन को यह कहकर सौंपी थी जब उन्माद शांत हो जाए तो हमें कैम्प से ले आना।' किन्तु हकीम साहब ने अगले ही दिन डी.ए.वी. कालेज कैम्प में हमें अपने पत्र के साथ चाबी भेज दी। पत्र में लिखा था– 'आपका पूरा मकान लूट लिया गया है। उस पर कब्जा कर लिया गया है। अब आपको अविलम्ब हिन्दुस्तान चले जाना चाहिए।'

जान हथेली पर रखकर रक्षा

थापर साहब बताते हैं– "ताऊजी ने जब पत्र पढ़ा तो उनके विश्वास को ऐसा गहरा धक्का लगा कि वे बच्चों की तरह रोने लगे।

ताऊजी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के घोर विरोधी थे। वे कांग्रेस के मंचों से संघ को 'फिरकापरस्त' बताकर कोसा करते थे। किन्तु अब उन्होंने डी.ए.वी. कालेज कैम्प में रहकर अपनी आँखों से संघ के स्वयंसेवकों को सेवा करते, जान जोखिम में डालकर मोहल्लों में जाकर हिन्दू युवक–युवतियों, बालकों व वृद्धों को आततायियों के चंगुल से बचाकर शिविर में लाते देखा तो वे आश्चर्यचकित होकर कह उठे– **'मैं उन्हें जीवन भर 'फिरकापरस्त' बताता रहा– आज वे ही संघ के कार्यकर्त्ता जान हथेली पर रखकर लोगों के प्राण बचा रहे हैं, उनकी दिन–रात सेवा कर रहे हैं।'**

कृतज्ञता ज्ञापन

एक दिन पंजाब के एक प्रमुख संघ कार्यकर्ता शिविर में आए। लालाजी ने अपना परिचय देते हुए उनके सामने कहा– "मैं जिन कांग्रेसी नेताओं के गुणगान करता था, अपना जीवन कांगेस को अर्पित किए हुए था, उसी कांग्रेस ने भारत का बँटवारा स्वीकार कर हिन्दुओं के कत्लेआम का मौका दिया जबकि आप संघ वालों ने पहले ही चेतावनी दी थी, जो सही साबित हुई है। संघ के प्रति मेरे मन की तमाम भ्रांतियाँ काफूर हो गई हैं।' शहीद सुखदेव के भाई मथुरादास बताते हैं– "जब हमारा परिवार डी.ए.वी. कालेज कैम्प से हिन्दुस्थान के लिए रवाना हुआ तब भी ताऊजी संघ के स्वयंसेवकों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना नहीं भूले। उन्होंने युवा स्वयंसेवकों की पीठ थपथपाते हुए कहा– "तुम जैसे समर्पित कार्यकर्ताओं के कारण ही हमारा परिवार, लाखों हिन्दूजन दुर्दान्त मजहबी उन्मादियों के छुरों से बचकर जीवित हिन्दुस्तान जा पा रहे हैं।"

जब हमारा परिवार हिन्दुस्थान की ओर बढ़ रहा था तो सड़कों, आसपास के खेतों में बूढ़ों, महिलाओं व बच्चों की रक्तरंजित लाशें पड़ी देखीं। खून से लथपथ लाशें देखकर हमारी माँ कल्ली देवी की चीख निकल पड़ी थी– "अरे क्या इसी आजादी के लिए मेरे जिगर के टुकड़े सुखदेव ने फाँसी खाई थी और हमने माता जी की आँखों पर कपड़ा ढाँप दिया था। ☐

– भक्त रामशरणदास भवन,
पिलखुवा– २४५३०४

स्वतंत्रता संग्राम में संघ की भूमिका

संघ संस्थापक डा० केशव बलिराम हेडगेवार जन्मजात देशभक्त और प्रथम श्रेणी के क्रान्तिकारी थे। वे युगान्तर और अनुशीलन समिति जैसे प्रमुख विप्लवी संगठनों में डा० पाण्डुरंग खानखोजे, श्री अरविन्द, वारीन्द्र घोष, त्रैलौक्यनाथ चक्रवर्ती आदि के सहयोगी रहे। रासबिहारी बोस और शचीन्द्रनाथ सान्याल द्वारा प्रथम विश्वयुद्ध के समय १६१५ में सम्पूर्ण भारत की सैनिक छावनियों में क्रान्ति की योजना में वे मध्य प्रान्त के प्रमुख थे। कांग्रेस उस समय स्वतन्त्रता आंदोलन का मंच था। उसमें भी उन्होंने प्रमुख भूमिका निभायी। १६२१ और १६३० के सत्याग्रहों में भाग लेकर कारावास का दण्ड पाया।

१६२५ की विजयादशमी पर संघ स्थापना करते समय भी डा० हेडगेवार का उद्देश्य राष्ट्रीय स्वाधीनता ही थी। संघ के स्वयंसेवकों को जो प्रतिज्ञा दिलायी जाती थी उसमें "राष्ट्र की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए तन–मन–धन पूर्वक आजन्म और प्रामाणिकता से प्रयत्नरत रहने का संकल्प" होता था। संघ स्थापना के तुरन्त बाद से ही स्वयंसेवक स्वतंत्रता संग्राम में अपनी भूमिका निभाने लगे थे।

क्रान्तिकर्मी स्वयंसेवक

संघ का वातावरण देशभक्तिपूर्ण था। १६२६–२७ में जब संघ नागपुर और आसपास तक पहुँचा था उसी काल में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी राजगुरु नागपुर की भोंसले वेदशाला में पढ़ते समय स्वयंसेवक बनें। इसी समय भगतसिंह ने भी नागपुर में डॉक्टर जी से भेंट की थी। दिसम्बर १६२८ में इन क्रान्तिकारियों ने पुलिस उपकप्तान सांडर्स का वध करके लाला लाजपत राय की हत्या का बदला लेकर, लाहौर से सुरक्षित नागपुर आ गये थे। डा० हेडगेवार ने राजगुरु को उमरेड में भैया जी दाणी (जो बाद में संघ के अ०भा० सरकार्यवाह रहे) के फार्म हाउस पर छिपने की व्यवस्था की थी।

१६२८ में साइमन कमीशन के भारत आने पर पूरे देश में उसका बहिष्कार हुआ। नागपुर में हड़ताल और प्रदर्शन करने में संघ के स्वयंसेवक अग्रिम पंक्ति में थे।

महापुरुषों का समर्थन

१६२८ में विजयादशमी उत्सव पर भारत की तत्कालीन केन्द्रीय धारा सभा (सेंट्रल लेजिस्लेटिव असेम्बली), के प्रथम भारतीय अध्यक्ष और सरदार पटेल के बड़े भाई विट्ठल भाई पटेल उपस्थित थे। अगले वर्ष १६२६ में **महामना मदनमोहन मालवीय जी** ने उत्सव में उपस्थित होकर संघ को अपना आशीर्वाद दिया। स्वतंत्रता संग्राम की अनेक प्रमुख विभूतियाँ संघ के साथ स्नेह संबंध रखती थीं।

शाखाओं पर स्वतंत्रता दिवस

३१ दिसम्बर १६२६ को लाहौर में कांग्रेस ने प्रथम बार पूर्ण स्वाधीनता का लक्ष्य घोषित किया और २६ जनवरी १६३० को देश भर में स्वतंत्रता दिवस के रूप में मनाना निश्चित किया।

डा० हेडगेवार ने दस वर्ष पूर्व १६२० के नागपुर में हुए कांग्रेस के अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता सम्बन्धी प्रस्ताव रखा था, पर तब वह पारित नहीं हो सका था। कांग्रेस द्वारा सही लक्ष्य स्वीकार करने पर आनन्दित हुए डॉ० हेडगेवार ने संघ की सभी शाखाओं को परिपत्र भेजकर रविवार २६ जनवरी, १६३० को सायं ६ बजे राष्ट्रध्वज वन्दन करने और स्वतंत्रता की कल्पना और आवश्यकता विषय पर व्याख्यान की सूचना करवायी। इस निर्देश के अनुसार संघ की सब शाखाओं पर स्वतंत्रता दिवस मनाया गया।

सत्याग्रह

६ अप्रैल, १६३० को दांडी में समुद्रतट पर गांधी जी ने नमक कानून तोड़ा और लगभग ८ वर्ष बाद कांग्रेस ने दूसरा जनान्दोलन प्रारम्भ किया। संघ का कार्य अभी मध्य प्रान्त में ही प्रभावी हो पाया था। यहाँ नमक कानून के स्थान पर जंगल कानून तोड़कर सत्याग्रह करने का निश्चय हुआ। डा० हेडगेवार, संघ के सरसंघचालक का दायित्व डा० परांजपे को सौंप स्वयं अनेक स्वयंसेवकों के साथ सत्याग्रह करने गये।

जुलाई १६३० में सत्याग्रह हेतु यवतमाल जाते समय पुसद नामक स्थान पर आयोजित जनसभा में डा० हेडगेवार के सम्बोधन में स्वतंत्रता संग्राम संबंधी दृष्टिकोण स्पष्ट होता है। उन्होंने कहा : **"स्वतंत्रता के लिए अंग्रेजों के बूट की पालिश करने से लेकर, उनके बूट को पैर से निकाल कर उससे**

उनके ही सिर को लहूलुहान करने तक के सब मार्ग मेरे स्वतंत्रता प्राप्ति के साधन हो सकते हैं। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि देश को स्वतंत्र कराना है।"

डा० हेडगेवार के साथ गये सत्याग्रही जत्थे में अप्पा जी जोशी (बाद में सरकार्यवाह), दादाराव परमार्थ (बाद में मद्रस में प्रथम प्रान्त प्रचारक) आदि प्रमुख १२ स्वयंसेवक थे। उनको ६ मास का सश्रम कारावास दिया गया। उसके बाद अ०भा० शारीरिक शिक्षण प्रमुख श्री मार्तण्ड राव जोग, नागपुर के जिला संघचालक श्री अप्पाजी हल्दे आदि अनेक कार्यकर्त्ताओं और शाखाओं के स्वयंसेवकों के जत्थों ने भी सत्याग्रह में भाग लिया। सत्याग्रह के समय पुलिस बर्बरता के शिकार बने सत्याग्रहियों की सुरक्षा के लिए १०० स्वयंसेवकों की टोली बनी जिसके सदस्य सत्याग्रह के समय उपस्थित रहते थे।

८ अगस्त को गढ़वाल दिवस पर धारा १४४ तोड़कर जुलूस निकालने पर पुलिस की मार से अनेक स्वयंसेवक घायल हुए।

विजयादशमी १६३१ को डाक्टर जी जेल में थे। उनकी अनुपस्थिति में गाँव–गाँव में संघ की शाखाओं पर एक संदेश पढ़ा गया, जिसमें कहा गया था : **"देश की परतंत्रता नष्ट होकर जब तक सारा समाज बलशाली और आत्मनिर्भर नहीं होता तब तक रे मन ! तुझे निजी सुख की अभिलाषा का अधिकार नहीं।"**

जनवरी १६३२ में विप्लवी दल द्वारा सरकारी खजाना लूटने के लिए हुए बालाघाट काण्ड में वीर बाघा जतीन (क्रान्तिकारी जतीन्द्रनाथ) अपने साथियों सहित शहीद हुए और श्री बाला जी हुद्दार आदि कई क्रान्तिकारी बन्दी बनाये गये। उस समय श्री हुद्दार संघ के अ०भा० सरकार्यवाह थे।

संघ पर प्रतिबन्ध

संघ के विषय में गुप्तचर विभाग की रपट के आधार पर मध्य प्रान्त सरकार ने, जिसके क्षेत्र में नागपुर था, १५ दिसम्बर १६३२ को सरकारी कर्मचारियों के संघ में भाग लेने पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

डा० हेडगेवार जी के देहान्त के बाद ५ अगस्त १६४० को सरकार ने भारत सुरक्षा कानून की धारा ५६ व ५८ के अन्तर्गत संघ की सैनिक वेशभूषा और प्रशिक्षण पर पूरे देश में प्रतिबन्ध लगा दिया।

१६४२ का भारत छोड़ो आन्दोलन

संघ के स्वयंसेवकों ने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए भारत छोड़ो आंदोलन में भी सक्रिय भूमिका निभायी। विदर्भ के अष्टी चिमूर क्षेत्र में समानान्तर सरकार स्थापित कर दी। अमानुषिक अत्याचारों का सामना किया। उस क्षेत्र में एक दर्जन से अधिक स्वयंसेवकों ने अपना जीवन बलिदान किया। नागपुर के निकट रामटेक के तत्कालीन नगर कार्यवाह श्री रमाकान्त केशव देशपाण्डे उपाख्य बालासाहब देशपाण्डे, को आन्दोलन में भाग लेने पर मृत्युदण्ड सुनाया गया। आम माफी के समय मुक्त होकर उन्होंने वनवासी कल्याण आश्रम की स्थापना की।

देश के कोने–कोने में स्वयंसेवक जूझ रहे थे। दिल्ली–मुजफ्फरनगर रेल लाइन को पूरी तरह क्षतिग्रस्त किया। आगरा के निकट बरहन का रेलवे स्टेशन जलाया गया। मेरठ जिले में मवाना तहसील पर झण्डा फहराते स्वयंसेवकों पर पुलिस ने गोली चलायी, अनेक घायल हुए।

आंदोलनकारियों की सहायता और शरण देने का कार्य भी बहुत महत्व का था। केवल अंग्रेजी सरकार के गुप्तचर ही नहीं, कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ता भी अपनी पार्टी के आदेशानुसार देशभक्तों को पकड़वा रहे थे। ऐसे में जयप्रकाश नारायण और अरुणा (आसफ अली) दिल्ली के संघचालक लाला हंसराज

संघ की सफलता का कारण उसकी विशेष कार्यपद्धति

- विपरीत परिस्थितियों में कार्य करने का अभ्यास।
- देश हित में व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर अनुशासनबद्ध व्यवहार।
- सभी को साथ लेकर चलने का अभ्यास।
- हिन्दुत्व पर आधारित होने के कारण विचार स्वातन्त्र्य पर आस्था और उसका मूल्य चुकाने की तैयारी।

गुप्त के यहाँ आश्रय पाते थे। प्रसिद्ध समाजवादी नेता श्री अच्युत पटवर्धन और साने गुरुजी ने पूना के संघचालक श्री भाऊसाहब देशमुख के घर पर केन्द्र बनाया था। 'पतरी सरकार' कठित करने वाले प्रसिद्ध क्रान्तिकर्मी नाना पाटील को औंध (जिला–सतारा) में संघचालक पं० सातवलेकर जी ने आश्रय दिया।

संघ की स्वतंत्रता प्राप्ति की योजना

ब्रिटिश सरकार के गुप्तचर विभाग ने १९४३ के अन्त में संघ के विषय में जो रपट प्रस्तुत की, वह राष्ट्रीय अभिलेखागार की फाइलों में सुरक्षित है। इसमें कहा गया है कि संघ योजनापूर्वक स्वतंत्रता प्राप्ति की ओर बढ़ रहा है।

फाइलों में सुरक्षित प्रमाणों के कुछ अंश

मई–जून १९४३ : संघ कार्य तेजी से फैल रहा है। उसके अधिकारी शिक्षण शिविर (ओ.टी.सी.) ११ स्थानों पर लगे। पूना शिविर के समारोप में संघ प्रमुख गोलवलकर ने कहा– "त्याग का सर्वोच्च प्रकार हुतात्मा (शहीद) होना है। उन्होंने रामदास का दोहा सुनाया, जिसमें कहा : हिन्दुओं को धर्म के लिए प्राण निछावर कर देना चाहिए, पर उससे पूर्व अधिक से अधिक शत्रुओं को मार देना चाहिए। इन शिविरों में स्वयंसेवकों से कहा गया : "वे यहाँ सैनिक जीवन का अनुभव करने आये हैं, शीघ्र ही विदेशियों के साथ शक्ति–परीक्षण होगा।"

इन शिविरों में लड़ाकू और खतरनाक किस्म की शिक्षा दी जाती है और बताया जाता है कि संगठन के शक्तिशाली होने पर अंग्रेजों से दासता मुक्ति का संघर्ष शुरू किया जायेगा।

अन्य संघ अधिकारियों के प्रवास व संघ के कार्यक्रमों पर भी गुप्तचर विभाग ने चिन्ता प्रकट की है।

संघ के अन्य प्रमुख नेता बाबा साहब आप्टे ने १२ सितम्बर ४३ को जबलपुर में गुरुदक्षिणा उत्सव पर कहा : "अंग्रेजों का अत्याचार असहनीय है, देश को आजादी के लिए तैयार हो जाना चाहिए।"

गुप्तचर विभाग की रपट में संघ के क्रान्तिकारियों से संबंधों का भी उल्लेख है : पूना के संघ शिविर में और अमरावती में राष्ट्र सेविका समिति के शिविर में सावरकर उपस्थित रहे। बदायूँ (उ०प्र०) के संघ शिविर में विदेशों में अंग्रेजों के खिलाफ जन समाज को भड़काने वाले राजा महेन्द्रप्रताप का चित्र लगाया गया। इन शिविरों तथा कार्यक्रमों में पूर्ण गोपनीयता बरती जाती है।

आजाद हिन्द फौज और संघ

२० सितम्बर, १९४३ को नागपुर में हुई संघ की गुप्त बैठक में जापान की सहायता से भारत पर होने वाले हमले के समय, संघ की संभावित योजना पर विचार हुआ।

रियासतों में संघकार्य पर प्रतिबन्ध

गुप्तचर विभाग से यह सूचना प्राप्त कर कि संघ ने हिन्दू रियासतों के क्षेत्र में अपना संगठन मजबूत किया है, वहाँ स्वयंसेवकों को शस्त्रों का प्रशिक्षण खुलेआम दिया जा रहा है। ब्रिटिश सरकार ने सभी ब्रिटिश रेजीडेन्टों को संघ की गतिविधियों को रुकवाने व प्रमुख कार्यकर्ताओं के विषय में जानकारी एकत्र करने का निर्देश दिया।

प्राप्त सूचनाओं के विश्लेषण से गुप्तचर विभाग इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि संगठन के लिए संगठन, राजनीति से संबंध नहीं, हमारा कार्य सांस्कृतिक है– जैसे वाक्य वास्तविक उद्देश्य पर आवरण डालने के लिए है। संघ का वास्तविक उद्देश्य है– अंग्रेजों को भारत से खदेड़ कर देश को स्वतंत्र कराना। □

आपात्काल में संघ की भूमिका (आँकड़ों में)

सत्याग्रह कर जेल गये	१,९३,९००	८० प्रतिशत स्वयंसेवक
पुलिस द्वारा बन्दी बनाये गये अन्य	४४,९६५	३५,३१० स्वयंसेवक
मीसा बन्दी	२३,०१५	१६,३८३ स्वयंसेवक
जीवन–बलिदान	१०७	९३ स्वयंसेवक
पुलिस यातनाओं के शिकार	९५००	अधिकांश स्वयंसेवक

भारत विभाजन और संघ

विभाजन से पूर्व कांग्रेस ही वह मंच था, जिससे मुस्लिम लीग तथा ब्रिटिश सरकार सत्ता हस्तांतरण अथवा विभाजन के संबंध में वार्ता करते थे। कांग्रेस के प्रमुख स्तम्भ महात्मा गाँधी ने देश को आश्वस्त किया– "भारत का विभाजन करने से पूर्व मेरे शरीर के टुकड़े कर दो। यदि सारे भारत में आग लग जाये तो भी पाकिस्तान का निर्माण न हो सकेगा। पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा।" कांग्रेस के अन्य प्रमुख नेता भी इसी स्वर में बोल रहे थे।

अधोगति

लियोनार्ड मोस्ले ने अपनी पुस्तक "दि ब्रिटिश राज" के पृष्ठ २८५ पर लिखा है कि ३ जून १९४७ को वायसराय लार्ड माउण्टबेटन ने भारत को विभाजित कर जून १९४८ तक स्वतंत्र करने की योजना घोषित की थी। संघ सहित सम्पूर्ण देश विश्वास कर रहा था कि कांग्रेस भारत विभाजन स्वीकार नहीं करेगी। परन्तु १४–१५ जून को कांग्रेस कार्यसमिति ने इस योजना को स्वीकार कर सारे देश को स्तब्ध कर दिया। इसका विवरण देते हुए लियोनार्ड मोस्ले ने नेहरू जी को उद्धृत करते हुए लिखा है कि "सच्चाई यह है कि हम थक चुके थे और आयु भी अधिक हो गयी थी।... और यदि हम अखण्ड भारत पर डटे रहते.... तो स्पष्ट है हमें जेल जाना पड़ता।" इसी भाँति डा० राम मनोहर लोहिया ने 'दि गिल्टीमेन ऑफ इण्डियास पार्टीशन' के पृष्ठ ३७ पर लिखा है कि "नेताओं की तो अधोगति हुई। वे लालच के फन्दे में फँस गये।"

भारत विभाजन की माँग करने वाली मुस्लिम लीग को कम्युनिस्ट पार्टी और ब्रिटिश सरकार का समर्थन तो प्राप्त था ही, कांग्रेस के थके हुए, पद–लोलुप नेतृत्व के द्वारा विभाजन स्वीकार कर लेने पर राष्ट्र की एकता के समर्थक संघ, हिन्दू महासभा आदि ने अपना प्रयास प्रारम्भ कर दिया।

विभाजन में जल्दबाजी

इसी बीच विभाजन विरोधी शक्तियाँ तेजी से उभरने लगीं। उन शक्तियों को संगठित होते देख कर ब्रिटिश सत्ताधीशों का माथा ठनका। उन्होंने सोचा कि यदि इस विरोध को चरम सीमा तक पहुँचने का अवसर मिल गया तो भारत को तोड़ कर छोड़ने का उनका मन्सूबा पूरा नहीं हो सकेगा। पूजनीय बालासाहब देवरस ने 'पहली अग्नि परीक्षा' में लिखा है कि इसलिए उस व्यापक विरोध से बचने के लिए ब्रिटिश शासन ने अपने भारत छोड़ने की पूर्व घोषित तिथि जून अन्त १९४८ के १० माह पहले भारत छोड़ दिया।

श्री देवरस के इस कथन की पुष्टि **लियोनार्ड मोस्ले** ने भी की है। उसने तत्कालीन वायसराय और गवर्नर जनरल लार्ड माउण्टबेटन को उद्धृत करते हुए पृष्ठ ११८ पर लिखा है कि "इससे पूर्व कि देश में विभाजन के विरुद्ध कोई प्रभावी प्रतिरोध खड़ा हो सके, समस्या का झटपट निपटारा कर डाला।"

कांग्रेस द्वारा विभाजन की स्वीकृति के मात्र ६० दिन में देश का विभाजन कर अंग्रेज ने सत्ता हस्तांतरण कर दिया। यदि १० मास का समय और मिला होता तो समाज को विभाजन के विरुद्ध तैयार कर लिया जाता।

विभाजन–काल में हिन्दुओं की रक्षा

भारत विभाजन केवल भूखण्ड का बँटवारा नहीं था, यह था अनादिकाल से पूजित भारत माता का विखण्डन और असंख्य हुतात्माओं और स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान का ध्वंस। इस महाविध्वंस में हिन्दू समाज ने जो महाविनाश देखा उसमें लगभग २० लाख व्यक्ति काल–कवलित हुए और २ करोड़ लोगों को अपने पुरखों को भूमि छोड़नी पड़ी।

तत्कालीन अन्तरिम सरकार के मंत्री **श्री एन.वी. गाडगिल** ने अपनी पुस्तक 'गवर्मेन्ट फ्रॉम इनसाइड' में उस स्थिति का वर्णन किया है : **"पश्चिमी पंजाब हिन्दुओं और सिखों से खाली कर दिया गया। ६० लाख गैर मुस्लिमों में से स्वीपर रोक कर और सब निकाल दिये गये।.... पाकिस्तान की नीति स्पष्ट थी। वह सिन्ध में से हिन्दुओं को निकाल कर उनकी सब धन–दौलत लूट लेना चाहता था।... पूर्वी पाकिस्तान की अनहोनी दशा थी। वहाँ से ८० लाख हिन्दू निकाल दिये गये।... पाकिस्तान का एक–एक सिख और हिन्दू भारत की ओर आ गया है, इस स्थानान्तरण में अनगिनत स्त्रियों का अपहरण हुआ, उनसे बलात्कार हुआ और अनगिनत स्त्री–पुरुष बच्चे मार डाले गये।"**

न्यायमूर्ति खोसला ने अपनी पुस्तक Stern Reckoning में इस थोड़े

काल में पंजाब और सिन्ध में मारे गये लोगों की संख्या कम से कम १० लाख बतायी है।

हिन्दुओं का तारणहार संघ

'पहली अग्नि परीक्षा' नामक पुस्तक के पृष्ठ १३ पर दिया गया है कि विभाजन अटल देखकर संघ के स्वयंसेवक पाकिस्तान में कहर ढा रहे इस्लामी जेहाद के एकाएक शिकार बने हिन्दुओं को बचा कर उन्हें भारत में सुरक्षित लाने के काम में जुट गए। स्वयंसेवकों ने हिन्दुओं के प्राण और सम्मान की रक्षा करने में और उन्हें सुरक्षित रूप से पूर्व पंजाब में लाने में जिस शौर्य, त्याग और बलिदान का आदर्श उपस्थित किया वह एक रोमांचकारी अमर गाथा बन गया। इस कारण संघ हिन्दू तारणहार के रूप में घर–घर जाना जाने लगा।

सरदार पटेल की स्वीकारोक्ति

स्वयंसेवकों द्वारा किये गये इस कार्य की प्रशंसा स्वयं सरदार पटेल ने भी की : **"इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि संघ के बहादुर जवानों ने असंख्य निर्दोष स्त्री और बच्चों की रक्षा की। दूर–दूर के क्षेत्रों में उन्हें बचा कर वे लाए।"**

'गुरु जी गोलवलकर एवं आर. एस.एस.' नामक पुस्तक के पृष्ठ १६ पर **ब्राइट** लिखते हैं– संघ ने उन दिनों रेडक्रास की भूमिका निभायी थी। आजादी के पूर्व व बाद हुए दंगों में मुस्लिम उन्माद के शिकार निर्दोष लोगों को बचाकर लाने में संघ ने अत्यन्त उपयोगी भूमिका निभायी थी।

सुप्रसिद्ध सर्वोदयी नेता श्री ना. बनहट्टी ने साप्ताहिक **'समाधान'** में लिखा : **"वर्तमान समय में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ही एकमात्र ऐसा संगठन है जो कांग्रेस को चुनौती दे सकता है। संघ की संगठनशक्ति से प्रभावित होकर देश का प्रतिभावान, चरित्र सम्पन्न और समर्पित युवा वर्ग संघ की ओर आकर्षित हो रहा है। इस कारण संघ कांग्रेस की आँखों में खटकने लगा।"**

जाकिर हुसैन की स्पष्टोक्ति

कांग्रेस की नेहरू समर्थक मुस्लिम लॉबी संघ का विरोध कर रही थी। इस पर डा० जाकिर हुसैन ने स्पष्ट शब्दों में कहा– 'मुसलमानों के प्रति घृणा फैलाने या उनके कत्लेआम करने का संघ पर लगाया जा रहा आरोप पूरी तरह निराधार व गलत है। मुसलमानों को चाहिए कि वे संघ से पारस्परिक प्रेम, सहकार तथा संगठन के गुणों की शिक्षा लें।'

सहायता कार्य

इस भीषण अत्याचार के कालखण्ड में श्री गुरु जी गोलवलकर ने निराश्रित बान्धवों की सहायता का आदेश दिया। पंजाब के प्रान्त संघचालक रायबहादुर बद्रीदास की अध्यक्षता में **पंजाब सहायता समिति** का गठन किया गया। डॉ० गोकुल चन्द नारंग समिति के कोषाध्यक्ष थे और समिति का कार्यालय लाहौर में था।

इसी प्रकार देश के पूर्वी भाग में पूर्वी पाकिस्तान से विस्थापित होकर आ रहे हिन्दू बन्धुओं के लिए **'वास्तुहारा सहायता समिति'** के नाम से सहायता कार्य प्रारम्भ किया।

शरणार्थी नहीं पुरुषार्थी

जब लाखों–लाख हिन्दू केवल हिन्दू होने के कारण लुट–पिटकर, अपमानित होकर अपने पुरखों की धरती छोड़कर आ रहे थे उस समय देश में उनको शरणार्थी कहा गया। दुर्भाग्यवश प्रधानमंत्री नेहरू अपने भाषणों में इनको अपने कर्मों का फल भोग रहे अभागे कह रहे थे। पू० गुरुजी ने कहा– **"अपने ही देश में आने वाले हिन्दू बान्धव शरणार्थी नहीं, स्वधर्म की रक्षा में सर्वस्व न्यौछावर करने वाले पुरुषार्थी हैं, उनकी सब प्रकार से सेवा करो।"**

स्वयंसेवकों ने दिल्ली की रक्षा की

नव स्वतंत्र भारत को संकट में डालने के लिए मुस्लिम लीग ने षड्यंत्र रचा था। दिल्ली में हथियार और विस्फोटक एकत्र किये थे। अनेकों प्रशिक्षित लीगी कार्यकर्त्ता और विशाल शस्त्रागार तैयार था। उस संकट काल में अपनी जान जोखिम में डाल कर स्वयंसेवकों ने उस षड्यंत्र का पर्दाफाश किया।

पाकिस्तान में भारत के प्रथम राजदूत तथा असम के राज्यपाल रहे **श्री श्रीप्रकाश** के पिता, महान् विद्वान्, देश के प्रथम भारत रत्न **डा० भगवान–दास** ने १६ अक्टूबर, १९४८ को लिखा था : "मुझे विश्वसनीय जानकारी है कि आर.एस.एस. के नवयुवकों ने जवाहर लाल नेहरू और सरदार पटेल को समय रहते मुस्लिम लीग के उस षड्यन्त्र की सूचना दे दी थी, जिसके तहत १० सितम्बर, १९४७ को लीग दिल्ली में सशस्त्र विद्रोह करके भारत सरकार के मंत्रियों और बड़े अधिकारियों की हत्या कर देती, लाल किले पर पाकिस्तानी झण्डा फहरा देती और हिन्दुस्तान को

अपने कब्जे में ले लेती। यदि ये देशभक्त और कर्त्तव्यनिष्ठ तरुण नेहरू और पटेल को ठीक समय पर सूचना न देते, तो आज कोई भारत सरकार न होती, सारे देश का नाम बदल कर पाकिस्तान हो जाता, दसियों लाख हिन्दू मारे जाते, उससे अधिक इस्लाम में धकेल दिये जाते और भारत फिर गुलाम बन जाता।" "इस सब का निष्कर्ष क्या है? साफ तौर पर यह कि हमारी सरकार लाखों संघ कार्यकर्त्ताओं की राष्ट्रवादी शक्ति का उपयोग करे उसे कुंठित न करे।"

भारत रत्न डा० भगवान दास ने यह शब्द तब लिखे थे, जब स्वतंत्र भारत की पहली सरकार ने राजनीतिक विद्वेष वश संघ पर प्रतिबन्ध लगा रखा था।

स्वयंसेवकों ने कांग्रेसियों की रक्षा की

सितम्बर १९४६ में कांग्रेस मुस्लिम लीग की मिली–जुली सरकार का केन्द्रीय असेम्बली में अधिवेशन प्रारम्भ हुआ, तब लीगी गुण्डों ने विरोध प्रदर्शन और पथराव कर कांग्रेसी नेताओं को अपमानित किया। अपनी योजना को सफल होते देख कर अगले दिन और अधिक संख्या में लीगी एकत्र हुए। तब दिल्ली में कांग्रेसी नेता देशबन्धु गुप्त ने संघ कार्यालय पर जाकर संघ के अधिकारियों से सहायता माँगी। संघ ने इस चुनौती को स्वीकार किया। सैकड़ों स्वयंसेवक आनन–फानन में तैयार होकर असेम्बली पहुँचे। वीरव्रती स्वयंसेवकों की टोलियों को आता देख कर गुण्डे भाग गये और उसके बाद भी वे ऐसा दुःसाहस नहीं कर सके।

पं० नेहरू की सभा की रक्षा की

१९४६ में नेहरू जी हैदराबाद (सिन्ध) गये। वहाँ उनकी एक आमसभा आयोजित की गयी थी। संभावना थी कि अन्य स्थानों की तरह यहाँ भी लीगी गुण्डे नेहरू जी की सभा भंग कर देंगे। तब तक कांग्रेस ने विभाजन स्वीकार नहीं किया था। संघ जो सिन्ध में एक बड़ी शक्ति बन चुका था, कांग्रेसियों ने उसकी शरण ली। प्रमुख कांग्रेसी नेता **डा० चिमनदास** तथा **बाबा किशन चन्द** ने संघ के अधिकारियों से मिलकर सहायता माँगी। अतः बड़ी संख्या में तैयारी के साथ उपस्थित स्वयंसेवकों के कारण सभाएँ निर्विघ्न सम्पन्न हो सकीं।

गांधी जी की रक्षा की

गांधी जी दिल्ली की भंगी बस्ती के वाल्मीकि मन्दिर में रह रहे थे। निकट ही मुस्लिम लीग का बड़ा अड्डा था। उस ओर से गांधी जी पर आक्रमण के संकेत मिल रहे थे। गांधी जी की रक्षा में कठिनाई थी, क्योंकि वे पुलिस के सुरक्षा घेरे में रहने को तैयार नहीं थे। गांधी जी के निकट सहयोगी **श्री कृष्ण नायर** (जो बाद में सांसद भी रहे) दिल्ली के तत्कालीन प्रान्त प्रचारक **श्री वसन्तराव ओक** के पास पहुँचे और उनसे **गांधीजी** की रक्षा का दायित्व संघ सँभाले, यह आग्रह किया। संघ अधिकारियों द्वारा अपने स्वयंसेवकों को यह कार्य सौंपा गया। उन्होंने रात– दिन गांधी जी की कुटिया की पहरेदारी की।

हथियारबन्द लीगी गुण्डों से आतंकित न होते हुए स्वयंसेवकों ने अपना कर्तव्य पालन किया। सतर्क तरुण स्वयंसेवकों की उपस्थिति से लीगी अपनी योजना पूरी नहीं कर सके। □

प्रणाम !

उन चरणों में शत–शत प्रणाम !
जो चले हो सेवा–रत,
ले जन्मभूमि का सेवा–व्रत,
जिससे जन–जन जीवन जागृत
मृत जाति आज पा रही अमृत,
जिससे पाकर पौरुष प्रकाम !
उन चरणों में अनुदिन प्रणाम।।
जिसका जीवन संकल्प धवल,
नव जीवन का संकल्प नवल,
धधका प्राणों में बना अनल,
संगठित बने बिखरा स्वदेश,
निर्बलता पा जाये विराम।
उन चरणों में निशि–दिन प्रणाम।।
हिमगिरि–सा उन्नत उच्च भाल,
गौरव–गर्वित स्वर शब्द–माल,
देता है नव–जीवन उछाल
वह है नाम सभी के अधरों पर,
है गूँज रहा बन भक्ति नाम।
उन चरणों में शत–शत प्रणाम।।

□ सोहनलाल द्विवेदी

गांधी हत्या और संघ

शताब्दियों की लम्बी दासता से १५ अगस्त, १६४७ को खण्डित होकर स्वतंत्र हुए भारत के समक्ष सर्वप्रथम पीड़ादायक प्रसंग स्वतंत्रता संग्राम के मूर्धन्य नेता महात्मा गांधी की जघन्य हत्या के रूप में सामने आया। आजादी के बाद देश के विकास में सभी राष्ट्रभक्त शक्तियों का सहयोग लेकर आगे बढ़ने का दायित्व जिन सत्ताधारियों पर था उन्होंने गांधी जी के आदर्शों को कुचलते हुए उनकी दुर्भाग्यपूर्ण हत्या का प्रयोग अपनी दलगत राजनीति की स्वार्थपूर्ति में किया और चरित्र एवं अनुशासन से सम्पन्न देशभक्त संगठन राष्ट्रीय स्वयं–सेवक संघ को जड़–मूल से विनष्ट करने के कुत्सित रूप में किया। वास्तविकता न्यायिक प्रक्रिया में सामने आ गई।

३० जनवरी, १६४८ को गांधी जी की हत्या हुई। हत्यारे नाथूराम गोडसे ने वहीं अपनी पिस्तौल सहित समर्पण कर दिया। जाँच अधिकारियों के सामने शीघ्र ही स्पष्ट हो गया कि षड्यन्त्र में चन्द लोग शामिल हैं।

फिर भी सरसंघचालक श्री गुरुजी को गांधी जी की हत्या में संलग्न मान कर उन्हें बन्दी बना लिया गया।

छानबीन में प्रथम दृष्टया आरोप न बनने पर श्री गुरुजी गोलवलकर पर हत्या का आरोप ६ फरवरी, १६४८ को हटाने को सरकार मजबूर हुई।

२६ फरवरी को जाँच के प्रति असंतोष व्यक्त करते हुए नेहरू जी द्वारा लिखे पत्र के उत्तर में सरदार पटेल ने प्रधानमंत्री नेहरू को लिखा :

"गांधीजी की हत्या के संबंध में चल रही कार्यवाही से मैं पूरी तरह अवगत रहता हूँ। यह बात भी असंदिग्ध रूप से उभरकर सामने आयी है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इससे कतई सम्बद्ध नहीं है।"

(सरदार पटेल पत्र व्यवहार खण्ड–६, संपादक दुर्गादास)

विशेष अदालत में

आई.सी.एस. कैडर के न्यायमूर्ति आत्माचरण की विशेष अदालत में दिल्ली के ऐतिहासिक लाल किले में २६ मई से गांधी हत्याकांड मुकदमे की सुनवाई शुरू हुई।

अभियोजन पक्ष ने आठ अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप–पत्र प्रस्तुत किये। ये थे : नाथूराम गोडसे और उसके भाई गोपाल गोडसे, नारायण आप्टे, विष्णु करकरे, मदनलाल पाहवा, शंकर किस्तैया, दत्तात्रेय परचुरे और विनायक दामोदर सावरकर। दिगम्बर बागड़े सरकारी वायदा माफी गवाह बन गया।

११० पृष्ठों का निर्णय १० जनवरी, १६४६ को सुनाया गया। निर्दोष सावरकर जी को ससम्मान रिहा किया गया। नाथूराम गोडसे व नारायण आप्टे को फाँसी और शेष ५ को आजन्म कारावास की सजा सुनायी गयी।

न्यायमूर्ति आत्माचरण ने इस सरकारी आरोप को पूरी तरह अमान्य कर दिया कि यह व्यापक षड्यंत्र था, जिसमें हजारों व्यक्ति शामिल थे। निर्णय में यह भी असंदिग्ध रूप से घोषणा की कि इस षड्यंत्र में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कोई संबंध नहीं है।

न्याय प्रक्रिया में चारों पक्ष– सरकारी पक्ष, सफाई पक्ष, अभियुक्त और न्यायाधीश– में किसी भी ने संघ से इस काण्ड का संबंध नहीं जोड़ा। सरकार की ओर से प्रस्तुत वरिष्ठ अधिवक्ता श्री दफ्तरी ने पूरे मुकदमे में संघ का उल्लेख नहीं किया। अतः सफाई पक्ष के वकील द्वारा भी संघ का उल्लेख नहीं हुआ। न्यायाधीश महोदय ने भी संघ को दोष मुक्त किया और अभियुक्त ने न्यायालय में भी और उसकी मृत्यु के पश्चात् छपी उसकी पुस्तकों में भी संघ के अपने इस काण्ड में असंबद्धता ही प्रकट की है।

उच्च न्यायालय में

पंजाब उच्च न्यायाल में हुई अपील को तीन सदस्यीय खण्डपीठ–न्यायमूर्ति भण्डारी, अच्छूराम तथा जी.डी. खोसला ने शिमला में सुना। उन्होंने परचुरे तथा किस्तैया को बरी कर दिया। इसके बाद दोनों अभियुक्तों नाथूराम गोडसे और आप्टे को १५ नवम्बर १६४६ को फाँसी दे दी गई।

विशेष न्यायालय और उच्च न्यायालय के नीर–क्षीर विवेककारी निर्णय ने असंदिग्ध शब्दों में संघ को निर्दोष घोषित कर दिया। परन्तु संघ विरोधी विष–वमन करते रहे।

कपूर आयोग

इन्दिरा गांधी के प्रधानमंत्री बनने पर महात्मा जी की हत्या के १६ वर्षों बाद फिर से इस मामले को कब्र से निकाल कर १६६६ में नये सिरे से

न्यायिक जाँच हेतु आयोग गठित किया गया।

महात्मा गांधी जी की हत्या की जाँच के लिए उच्चतम न्यायालय के सेवा निवृत्त विद्वान् न्यायाधीश श्री टी. एल. कपूर की अध्यक्षता में गठित आयोग ने १०१ साक्ष्यों के बयान दर्ज किए तथा ४०७ दस्तावेजी सबूतों की जाँच–पड़ताल कर १९६८ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। कपूर आयोग के समक्ष सबसे महत्वपूर्ण सरकारी साक्ष्य–गांधी हत्या के समय केन्द्रीय गृह सचिव श्री आर.एन. बनर्जी थे–जिन्होंने स्पष्ट स्वीकार किया कि "गांधी के हत्यारे संघ के सदस्य नहीं थे।"

आयोग ने अपनी जाँच–पड़ताल के बाद सत्ताधारियों और संघ विरोधियों की इस मान्यता को पूरी तरह नकार दिया– कि (क) गांधी जी की हत्या में संघ का हाथ था। (ख) हत्या के पीछे राष्ट्रव्यापी षड्यन्त्र था।

आयोग के कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष

यद्यपि हत्या के बाद संघ पर पाबन्दी लगा दी गयी थी, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि सरकार ने यह स्वीकार कर लिया था कि हत्या संघ के सदस्यों ने की है।

(कपूर आयोग रिपोर्ट खण्ड–२, पृष्ठ– ६२)

दिल्ली में भी कोई ऐसा सबूत उपलब्ध नहीं है कि संघ महात्मा गांधी या अन्य वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं के विरुद्ध हिंसक गतिविधियों में संलग्न था।

(रिपोर्ट खण्ड– २, पृष्ठ– ६६)

आयोग के सामने यह दलील दी गई कि यदि संघ पर पहले ही प्रतिबन्ध लगा दिया गया होता तो गांधी जी की हत्या नहीं होती। इसके उत्तर में आयोग ने टिप्पणी की : "यदि संघ पर पहले भी प्रतिबन्ध लगा दिया होता तो भी कोई अन्तर नहीं पड़ता क्योंकि यह साबित न हो सका है कि उस संगठन का हत्या में कोई हाथ था। (कपूर आयोग रिपोर्ट खण्ड– १, पृष्ठ १८६)

अन्त में आयोग ने अपनी रिपोर्ट में असंदिग्ध घोषणा की है कि– **"श्री. आर.एन. बनर्जी के समान अनुभवी प्रशासक ने अपने बयान में कहा है कि संघ महात्मा गांधी की हत्या के लिए कतई उत्तरदायी नहीं था। इसका अर्थ है कि इस जघन्य हत्या के लिए संघ को किसी प्रकार जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता।"**

(रिपोर्ट खण्ड– २, पृष्ठ ७६)

दुर्भाग्यपूर्ण है कि न्यायपालिका के सम्मान की दुहाई देने वाले संघ विरोधी वामपंथी और तथाकथित सेकुलरवादी तीन–तीन न्यायालयों के निर्णयों के बाद भी आज इस झूठ को बार–बार दुहरा रहे हैं।

दिलचस्प पहलू यह है कि १९४८–४९ में प्रतिबंध हटाते समय नेहरू सरकार ने संघ पर लगाए आरोपों की चर्चा भी नहीं की।

प्रधानमंत्री मोरार जी भाई ने लोकसभा में एक प्रश्न के उत्तर में स्वीकार किया कि गांधी हत्या में संघ का हाथ नहीं है।

म.प्र. के कांग्रेसी मुख्यमंत्री रहे पं० द्वारिका प्रसाद मिश्र ने अपनी आत्मकथा पुस्तक 'लिविंग इन इरा' के द्वितीय खण्ड के पृष्ठ ५९ पर लिखा है कि : इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि गांधी जी के हत्या ने स्वार्थी राजनेताओं के हाथों में अपने विरोधियों को बदनाम करने तथा यदि संभव हो तो उन्हें नेस्तनाबूद करने का हथियार दे दिया।" □

आत्मप्रवंचना

विदेशी सहायता के द्वारा आर्थिक विकास की बात करना कच्ची मिट्टी के कृत्रिम पाँव लगाकर, अपनी विकलांगता के समाप्त हो जाने का संतोष पालने या संपन्न होजाने की आत्मप्रवंचना करने जैसा है। देश को जिस आर्थिक साम्राज्यवाद के जाल में फँसाया जा रहा है, अमरीका और दूसरे देश जिस प्रकार अपनी आर्थिक समृद्धि के लिए भारत और दूसरे विकासशील देशों का प्रत्यक्ष और परोक्ष शोषण करने की चालाकी कर रहे हैं, यदि समय रहते इसे समझा न गया तो एक दिन देश की राजनीतिक आजादी भी खतरे में पड़ सकती है। तब हम पशुओं की तरह केवल उपभोक्ता होंगे और विदेशियों का गुलाम और बंधुआ मजदूर बनकर रहना ही हमारी नियति होगी। विदेशी आर्थिक साम्राज्यवाद के इस आक्रमण से देश को कोई और नहीं, केवल 'स्वदेशी' का ही कवच बचा सकता है।

□ दत्तोपंत ठेंगड़ी, १९ दिसम्बर, १९९३

संघ और समरसता

□ सुरेश जोशी

सामाजिक विषमता का एक प्रकट स्वरूप अस्पृश्यता, अपने समाज का अत्यन्त विकृत स्वरूप है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है, कष्टदायक है। यह समस्या सैंकड़ों वर्षों से समाज तथा देश में व्याप्त है। वर्तमान में इस समस्या से समाज मुक्त हो, यह भाव बढ़ रहा है। स्व. श्री बालासाहब देवरस ने पुणे के वसंत व्याख्यानमाला तथा नागपुर में इस विषय पर अपने विचार स्पष्ट रूप से रखे हैं। वे कहते है "It must go lock, stock and barrel" अस्पृश्यता पूर्ण रूप से समाप्त होनी चाहिए, इस विषय में किसी के मन में कोई संदेह न रहे। अमेरिका में गुलामी समाप्त करने वाले अब्राहम लिंकन ने कहा था कि (If Slavery is not wrong, nothing is wrong) हमें भी ऐसा ही कहना चाहिए कि "यदि अस्पृश्यता कलंक नहीं है तो इस संसार में कुछ भी कलंक नहीं है।" (If untocuchability is not wrong, nothing is wrong in this world)

वर्णव्यवस्था, जाति व्यवस्था के कारण आज विषमता का अनुभव हम करते हैं। यही कारण है कि आज अपना समाज दुर्बल हो रहा है, विघटित हो रहा है।

रा०स्व०संघ की शाखा में तो प्रारम्भ से ही इसकी चिंता की गई। संघ स्थान पर एकत्रित होकर कार्यक्रम करने से, हम सब हिन्दू हैं यह भाव प्रबल होता जाता है। परिणामतः किसी प्रकार का भेद हृदय में प्रवेश नहीं कर पाता।

गांधी जी द्वारा सराहना

१९३४ के वर्धा में चल रहे एक शिविर में महात्मा गांधी जी का आगमन हुआ था। स्वयंसेवकों से पूछताछ करते हुए सबका परिचय हुआ। उन्होंने अनुभव किया कि यहाँ तो बिना किसी भेदभाव के स्वयंसेवक रह रहे हैं। सबका खान–पान एक साथ हो रहा है। किसी भी स्वयंसेवक के मन में न संकोच है न किसी प्रकार का स्पृश्य–अस्पृश्य का भाव। पू० डॉ० हेडगेवार जी के साथ हुए वार्तालाप में महात्मा गांधी जी ने संघ के इस प्रकार की सहजता की सराहना की।

संघ में आने वाला तथाकथित अस्पृश्य बंधु व्यापक हिन्दुत्व की अनुभूति करता है, परन्तु समाज में उपेक्षा का शिकार बनता है। सामाजिक जीवन में उद्योग–व्यवसाय के क्षेत्र में, शिक्षा के क्षेत्र में, धार्मिक व्यवहार में वह कदम–कदम पर उपेक्षा, अपमान अनुभव करता है।

जब तक समाज में समरसता का भाव निर्माण नहीं होता तब तक यह समाज विघटन की प्रक्रिया चलती रहेगी और इसीलिए आवश्यक है कि सभी स्तर पर इस हेतु प्रयास हो।

न हिन्दू पतितो भवेत्

१९६९ में कर्नाटक प्रांत, का विश्व हिन्दू परिषद का प्रान्तीय सम्मेलन उडुपी में संपन्न हुआ था। पू० श्री गुरुजी के मार्गदर्शन में इस सम्मेलन की योजना बनी थी। अनेक सन्त और मठाधिपति इस सम्मेलन में उपस्थित थे। यह पहला अवसर था जब सभी उपस्थित महापुरुषों ने एक स्वर से प्रस्ताव पारित करते हुए कहा कि **"अस्पृश्यता कलंक है तथा इसे किसी भी धर्मग्रन्थ का समर्थन नहीं है। मम दीक्षा–हिन्दू रक्षा। मम मंत्र समानता। सर्वे हिन्दु सहोदराः। न हिन्दू पतितो भवेत्।"** इस प्रकार की घोषणा करते हुए समाज को समरसता हेतु मार्गदर्शन किया।

इसके पश्चात् अनेक सन्तों ने तो संकल्प लेते हुए पिछड़ी बस्तियों में जाकर अपने को पिछड़ा मानने वाले बंधुओं में सम्मान का भाव जगाना प्रारम्भ किया जो अत्यन्त प्रेरणादायी एवं अनुकरणीय सिद्ध हुआ।

अनुकरणीय प्रयास

१९८९ में अयोध्या में रामजन्मभूमि पर भव्य मंदिर का शिलान्यास कार्यक्रम हुआ। इस समारोह के अवसर पर श्रेष्ठ धर्माचार्य, मठाधिपति उपस्थित थे। रामजन्मभूमि न्यास द्वारा विश्व हिन्दू परिषद के तत्वावधान में आयोजित इस समारोह में प्रथम शिला श्री कामेश्वर चौपाल के हाथों स्थापित हुई, जो तथाकथित पिछड़ी जाति के माने जाते हैं। इस घटना से अपने करोड़ों बंधुओं ने अन्तःकरण में सम्मान की अनुभूति की होगी।

काशी में धर्माचार्य सम्मेलन में आये हुए संतों का डोमराजा के घर भोजन का कार्यक्रम हो या नागपुर में संपन्न धर्माचार्य सम्मेलन के समय दीक्षाभूमि पर जाकर श्रद्धा से, आदर से पू० डा० अम्बेडकर जी की प्रतिमा पर माल्यार्पण का कार्यक्रम हो यह तो जनसामान्य का मार्गदर्शन करता ही है।

दिल्ली के कांस्टीट्यूशन हाल में डा० अम्बेडकर जयन्ती पर बोलते हुए ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी वासुदेवानन्द जी ने कहा कि : "आचार्य होने के नाते मैं घोषणा करता हूँ कि किसी मन्दिर के गर्भगृह में जिस स्थान पर मुझको जाकर पूजन और देवदर्शन का अधिकार है, वहाँ तक किसी भी हिन्दू को प्रवेश का अधिकार है।"

केरल के गुरुवायर मंदिर में आये हुए पिछड़े बंधुओं का वहाँ के पुजारियों द्वारा स्वागत और सादर मंदिर प्रवेश, यह अपने आप में एक विशेष प्रसंग है।

कांची कामाकोटि पीठ के प०पू० जगद्गुरु श्री जयेंद्र सरस्वती जी द्वारा ४०,००० अर्चकों को मंदिर में अर्चना हेतु प्रमाण पत्र प्रदान किए गए जो सभी तथाकथित अनुसूचित एवं पिछड़ी जाति के थे। वि०हि०प० ने इस प्रकार के प्रशिक्षण का आयोजन तमिलनाडु में किया था।

कर्नाटक में माताओं को (भगिनी वर्ग) संन्यास दीक्षा देते हुए अपनी संस्कृति में भगिनी वर्ग भी इसका अधिकार रखता है यह प्रस्तुत करने का महान कार्य पेजावर पीठाधीश पू० विश्वेषतीर्थजी ने किया है।

जनसामान्य भी इसी दृष्टि से सम्मान के भाव से, अंतःकरण से, अपने मन से अस्पृश्यता जैसी गलत धारणाओं को दूर करते हुए समरसता का भाव धारण करे यह आवश्यक है।

संघ के स्वयंसेवक कन्यापूजन, सहभोज के कार्यक्रमों का आयोजन करते हुए समाज में व्याप्त विषमता मिटाने का प्रयास कर रहे हैं। सेवा बस्तियों में सेवा कार्य द्वारा यही कार्य किया जा रहा है।

सामाजिक समरसता मंच

ऊपर दिए गए विवरण से यह स्पष्ट है कि संघ के स्तर पर समरसता स्थापित करने में संघ ने सफलता पायी है। परन्तु समाज के स्तर पर समरसता अभी स्थापित नहीं हो पायी है। जातिभेद, ऊँच–नीच, अस्पृश्यता इत्यादि दोष आज भी हिन्दू समाज में विद्यमान हैं। अतः संपूर्ण हिन्दू समाज में समरसता स्थापित करने के उद्देश्य से १४ अप्रैल, १६८३ को महाराष्ट्र में 'सामाजिक समरसता मंच' की स्थापना श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी जी की प्रेरणा से की गई। इस दिन का विशेष महत्त्व इसलिए था कि इस दिन वर्ष–प्रतिपदा थी और इस प्रकार यह सामाजिक समरसता से जुड़े दो महापुरुषों का जन्म–दिवस था : डॉ० हेडगेवार का जन्म–दिन वर्ष प्रतिपदा और डॉ० अम्बेडकर का जन्म–दिन १४ अप्रैल।

संदेश यात्रा

ऐतिहासिक कारणों से सैकड़ों वर्षों से जो ऊँच–नीच का भाव समाज में विद्यमान रहा है उसे दूर करना अत्यंत कठिन कार्य है। इस मानसिकता में परिवर्तन करते समय "धीमे–धीमे शीघ्रता करो" (hasten slowly) नीति का अनुसरण करना अत्यंत आवश्यक था। समरसता मंच ने सदैव इस बात का ध्यान रखा और तीन सूत्र समाज के सामने रखे :

१. सभी सामाजिक प्रश्न किसी एक जाति के न होकर संपूर्ण हिन्दू समाज के हैं।
२. उनके बारे में संपूर्ण हिन्दू समाज को विचार करना चाहिये।
३. इस दृष्टि से जो मंच हो वह अराजनीतिक होना चाहिये।

विचारगोष्ठियाँ, बैठकों, पत्रक, पुस्तिकाओं इत्यादि के द्वारा साहित्य–प्रचार और व्यक्तिगत संपर्क जैसे माध्यमों से मंच ने धीरे–धीरे अपना कार्य बढ़ाना प्रारम्भ किया। इसमें प्रमुख कठिनाई यह थी कि तथाकथित सवर्ण समाज के हिन्दुत्ववादी भी आजीवन सामाजिक समता के लिए कार्य करने वाले महात्मा फुले, डॉ० अम्बेडकर जैसे महापुरुषों के प्रति अपनापन अनुभव नहीं करते थे। अतः उनके मन में इन महापुरुषों द्वारा किये गये कार्य के महत्त्व की अनुभूति उत्पन्न किये बिना मानसिकता में परिवर्तन संभव नहीं था। प०पू० गुरुजी ने कहा ही था कि अस्पृश्यता का मूल तथाकथित सवर्ण समाज की मानसिकता में है। इसलिए समरसता मंच ने "फुले, अम्बेडकर, हेडगेवार–समरसता के शिल्पकार", यह उद्घोष देते हुए इन के जीवन–कार्य को लोगों तक पहुँचाना प्रारम्भ किया। १६६० में महात्मा फुले की स्मृतिशताब्दी और डॉ० अम्बेडकर की जन्मशताब्दी के उपलक्ष में समरसता मंच ने महाराष्ट्र में चालीस दिवसीय 'सन्देश–यात्रा' का आयोजन किया।

समस्या का निदान

महाराष्ट्र में दलित साहित्य की आड़ में हिन्दुत्व–विरोधी लोग प्रगतिशीलता का आवरण ओढ़कर हिन्दू समाज के अन्दर आपस में घृणा फैलाने का काम 'समता परिषद्' नामक आयोजन के द्वारा करते हैं। इस पार्श्वभूमि में समरसता मंच ने १६८८ में 'समरसता परिषद्' का आयोजन किया जिसमें २५०० प्रतिनिधि आये। इसमें समरसता का सन्देश सफलतापूर्वक दिया गया।

सामाजिक समरसता मंच के सामने दो अत्यंत कठिन प्रसंग उपस्थित हुए और उसने उनका सफलतापूर्वक

सामना किया। महाराष्ट्र–शासन ने डॉ० अम्बेडकर का संपूर्ण साहित्य प्रकाशित करने का उपक्रम प्रारम्भ किया। तदनुसार १९८७ में प्रकाशित चतुर्थ खण्ड में 'रिडल्स ऑफ राम एण्ड कृष्ण' शीर्षक वाला प्रकरण था। इसमें उन्होंने राम और कृष्ण पर कठोर टीका की है। इस कारण उग्र हिन्दुत्ववादी लोगों ने इस पर प्रतिबंध लगाने की माँग की। साथ ही हिन्दुत्वविरोधी परन्तु हिन्दुत्व का आवरण ओढ़े हुए लोगों ने भी इस अवसर का लाभ लेते हुए दलित और अन्य हिन्दुओं में वैमनस्य बढ़ाने का प्रयास किया। इस कारण सारे महाराष्ट्र का वातावरण अत्यन्त गरम हो गया और हिन्दू समाज के विघटन का संकट उत्पन्न हो गया। ऐसी परिस्थिति में सन्तुलित भूमिका लेकर ठंडे मस्तिष्क से विचार करते हुए समस्या को इस प्रकार सुलझाने की आवश्यकता थी कि हिन्दू समाज की एकता बनी रहे। ठीक ऐसी ही भूमिका समरसता मंच ने निभायी और समस्या सही ढंग से सुलझ गयी।

अम्बेडकर विश्वविद्यालय

संभाजीनगर (औरंगाबाद) के मराठवाड़ा विश्वविद्यालय का नाम परिवर्तित करके अम्बेडकर विश्वविद्यालय रखने की माँग को मानते हुए १९७८ में महाराष्ट्र विधान–सभा ने वैसा प्रस्ताव पारित किया। इसका तीव्र विरोध किया गया जिसके कारण अनेक स्थानों पर दलित–दलितेतर हिन्दुओं में संघर्ष हुआ और बड़े पैमाने पर आगजनी तथा हिंसा हुई। इस कारण विश्वविद्यालय का नामांतरण नहीं हो सका। तब से यह प्रश्न समय–समय पर वहाँ संघर्ष की स्थिति उत्पन्न कर रहा था। १९९३ में यह प्रश्न फिर से उठा और वातावरण उत्तप्त होने लगा। परन्तु इस समय सामाजिक समरसता मंच ने इस विषय में सक्रिय भूमिका निभायी। उसने यह विचार रखा कि डॉ० अम्बेडकर महान् देशभक्त थे। इस कारण उनके नाम पर विश्वविद्यालय का नामकरण किया जाना सर्वथा उचित है तो दूसरी ओर यह प्रयास किया कि दलित समाज के द्वारा इस प्रश्न पर हिन्दूविरोधी रुख न अपनाया जाय। इस कारण नामांतरण आन्दोलन केवल दलितों का न रहकर सभी हिन्दुओं का हो गया। दलितों की भाषा संयमित रही और नामान्तरण–विरोधियों का आक्रोश नामांतरण के विरोध में न होकर नामांतरण की प्रक्रिया के विरोध तक सीमित हो गया। इसके परिणामस्वरूप १९७८ के दंगों की तुलना में अत्यंत अल्प मात्रा में विरोध होकर १९९४ में नामान्तरण हो गया।

समरसता मंच के प्रयास

सामाजिक समरसता मंच ने दो और कार्य अपने हाथ में लिये हैं। डा० अम्बेडकर के नेतृत्व में १९५६ में बड़ी संख्या में दलित बौद्ध बने। ईसाई या मुसलमान बनने के स्थान पर डा० अम्बेडकर बौद्ध इसलिए बने कि इससे वे इस धरती से, इसकी संस्कृति से जुड़े रहेंगे। परन्तु समय के साथ बौद्ध मत मानने वालों को राष्ट्रविरोधी शक्तियाँ भारत की सांस्कृतिक धारा से अलग करने का षड्यन्त्र करने लगीं। अतः उन्हें उनकी मूल सांस्कृतिक पहचान का स्मरण दिलाना आवश्यक था। इसलिए समरसता मंच ने ब्रह्मदेश के एक स्वयंसेवक श्री रामप्रकाश धीर द्वारा निर्मित बौद्ध प्रदर्शनी स्थान–स्थान पर ले जाकर दिखाई और उन्हें इस बात की अनुभूति दिलाने का कार्य प्रारम्भ किया जिसका बहुत अच्छा परिणाम बौद्धमत मानने वालों पर हो रहा है।

समरसता मंच द्वारा हाथ में लिया गया दूसरा नया कार्य हे 'भटके विमुक्त विकास परिषद्' जिसके अन्तर्गत घुमन्तू (घुमक्कड़) जनजातीय लोगों की समस्याएँ सुलझाने का प्रयास करते हुए उन्हें किसी स्थान पर स्थायी रूप से रहकर अपनी आजीविका चलाने के लिए प्रेरित किया जाता है तथा इसमें उनकी सहायता की जाती है। इस दिशा में तुलजापुर के पास यमगरवाड़ी नामक स्थान पर दान में मिले १८ एकड़ भूखंड पर इस परिषद् के द्वारा घुमन्तू जनजातियों के लिए कई प्रकल्प प्रारम्भ किये गये हैं।

६ दिसम्बर १९९२ को बाबरी ढाँचा ध्वस्त होने के बाद महाराष्ट्र में हिन्दुत्वविरोधी तत्वों ने ऐसा दुष्प्रचार प्रारम्भ किया कि इन लोगों ने जानबूझकर इस काम के लिए ६ दिसम्बर का दिन चुना क्योंकि वह डॉ० अम्बेडकर की पुण्यतिथि है और इसलिए यह उनका अपमान है, जबकि वह दिन गीताजयंती और महाभारत युद्ध का प्रथम दिन होने के कारण चुना गया था जो उस वर्ष ६ दिसम्बर को था। अतः समरसता मंच ने अम्बेडकर जी के जन्मदिन १४ अप्रैल, १९९३ को 'अयोध्या, ६ दिसंबर, डॉ० अम्बेडकर और हिन्दुत्व' विषय पर एक पत्रक बनाकर संपूर्ण महाराष्ट्र में वितरित किया जिसके कारण हिन्दुत्वविरोधियों का दुष्प्रचार निष्प्रभावी हो गया।

प्रारम्भ में सामाजिक समरसता मंच का कार्य महाराष्ट्र तक ही सीमित रहा, परन्तु बाद में यह अन्य प्रान्तों में भी फैलने लगा। वर्तमान में बिहार, गुजरात और कर्नाटक में इसका कार्य अच्छा चल रहा है और अन्य प्रान्तों में भी प्रारंभ हो चुका है।

□

संघ – जैसा कि मैंने देखा

□ महात्मा गांधी

वर्षों पहले जब संघ के प्रवर्तक श्री हेडगेवार जीवित थे, मैं वर्धा में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के शिविर में गया था। श्री जमनालाल बजाज मुझे वहाँ ले गये थे और वहाँ उनके (संघ के) स्वयंसेवकों के अनुशासन, उनमें छुआछूत के विचारों का पूर्ण अभाव और उनकी कठिन सादगी का मुझ पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा था। तब से संघ बहुत बढ़ गया है। कोई भी संगठन जो सेवा और आत्म बलिदान के उच्च आदर्शों से प्रेरित हो, वह निश्चित ही अधिकाधिक शक्तिशाली होता जाता है, यह मेरा विश्वास है। किन्तु सचमुच में उपयोगी होने के लिए आत्म-बलिदान के साथ उद्देश्य की पवित्रता और सच्चा ज्ञान भी होना चाहिए। इन दोनों के अभाव में आत्म बलिदान समाज के लिए घातक सिद्ध होता है।

संघ की यह प्रार्थना भारत माता, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू धर्म की प्रशंसा में है। मैं स्वयं कट्टर सनातनी हिन्दू हूँ। शब्द के मूल का किसी को पता नहीं है। यह नाम हमें दिया गया था, और हमने इसे अपना लिया। संसार के सभी धर्मों में जो कुछ सर्वोत्तम है, वही हिन्दू धर्म में मौजूद है। इस दृष्टि से हिन्दू धर्म का किसी भी अन्य धर्म, विशेषतः इस्लाम का विरोध नहीं है, जैसा कि अभाग्यवश लोग समझ बैठते हैं।

हिन्दू धर्म के ह्रास होने का कारण यही था कि उसमें छुआछूत का विचार घर कर गया था और यदि अपने धर्म को जीवित रखना है तो इस विचार को हमें दूर करना पड़ेगा।

कुछ ही दिन पूर्व श्री गुरुजी मुझसे मिले थे और उनसे मैंने संघ के विषय में फैले हुए आक्षेपों का जिक्र भी किया था।

श्री गुरुजी ने मुझे आश्वासन देते हुए कहा था कि यद्यपि वे संघ के प्रत्येक स्वयंसेवक के व्यक्तिगत आचरणों की जिम्मेदारी नहीं ले सकते फिर भी यह निश्चित है कि संघ की नीति किसी के भी प्रति मन में विरोध न रखते हुए हिन्दू धर्म की सेवा करना ही है। संघ आक्रमण वृत्ति में विश्वास नहीं रखता। वह केवल स्व-संरक्षण की कला सिखाता है। वह प्रतिहिंसा की शिक्षा नहीं देता।

यह हमारा दुर्भाग्य है कि भारत का विभाजन हुआ है। यदि पाकिस्तान अपना व्यवहार ठीक नहीं करेगा तो भारत और पाकिस्तान का युद्ध अवश्यम्भावी है।

संघ एक सुसंगठित और पूर्णतः अनुशासित संस्था है और ऐसी शक्ति राष्ट्र के हित के लिए बहुत उपयोगी हो सकती है। (दिल्ली, १६ सितम्बर १९४७)

कुछ विचार कण

- "डॉक्टर साहब द्वारा निर्मित कार्यपद्धति सुगम है। इसी में उनकी अलौकिकता प्रगट हुई है। प्राचीनकाल में भगवान श्रीकृष्ण ने मानवमात्र के लिए सरलतापूर्वक आचरण करने योग्य ईश्वर साक्षात्कार का मार्ग दिखलाया था। अर्वाचीनकाल में परमेश्वर का साक्षात्कार करने का सुगम मार्ग भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस ने दिखलाया और आज के युग में राष्ट्रस्वरूप परमेश्वर के साथ तादात्म्य उत्पन्न करने का अति सरल मार्ग पूजनीय डाक्टर साहब ने दिखलाया है।"
- "डाक्टर जी के सहवास में मैं रहा तो बहुत परन्तु सिद्धान्त चर्चा नहीं हुई। फिर भी मेरा घमंड गल गया, मन में परिवर्तन हुआ, मुझ पर संस्कार हुआ।"
- "संघवृत्ति से व्यक्तियों को भरना हो तो उसका उपाय बौद्धिक वर्ग, भाषण नहीं है। यह वृत्ति कैसे निर्माण की जाये ? यह अपने संघनिर्माता का जीवन बतलाता है। अत्यन्त विशाल अन्तःकरण, उज्ज्वल चारित्र्य, अत्यन्त प्रखर कार्य निष्ठा के कारण वह संभव हुआ। उनके अद्भुत स्नेह से अन्तःकरण पूर्णतः विगलित होकर संस्कारित होता था।"

–श्री गुरुजी

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वतंत्रता संग्राम

भारत की स्वतंत्रता की घोषणा के साथ ही अंग्रेजों ने सभी देशी रियासतों को मुक्त कर दिया था। वे चाहें भारत में रहें या पाकिस्तान में अथवा अपने को स्वतंत्र घोषित कर दें। सभी रियासतों ने अपना-अपना निर्णय कर लिया, परन्तु तीन रियासतों- जम्मू-कश्मीर, हैदराबाद तथा जूनागढ़ ने विलय नहीं किया। सबके अलग-अलग कारण थे।

जम्मू-कश्मीर का भारत में विलय

जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरिसिंह कुछ कारणों से भारत में विलय करने में हिचक रहे थे। उसमें विशेषकर मनोनीत प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू का पूर्व काल में रियासत के कामकाज में अनुचित हस्तक्षेप तथा कश्मीर घाटी में महाराजा और उनकी हिन्दू प्रजा के विरुद्ध षड्यंत्र में लगे शेख अब्दुल्ला को अत्यधिक समर्थन था। साथ ही जम्मू-कश्मीर को भारत से जोड़ने वाले मार्ग, बँटवारे में पाकिस्तान में जाने से रियासत अलग-थलग पड़ गयी थी।

जम्मू-कश्मीर का सांस्कृतिक व भू-राजनीतिक महत्व समझ कर महात्मा गांधी और सरदार पटेल ने भी प्रयास किये, परन्तु वे राजा हरि सिंह की शंकाओं को दूर नहीं कर सके। तब सरदार पटेल ने संघ के तत्कालीन सरसंघचालक श्री गुरुजी से सम्पर्क कर सहयोग माँगा। श्री गुरुजी नागपुर से दिल्ली और फिर सरदार से भेंट कर १७ अक्तूबर ४७ को श्रीनगर पहुँचे। इसके लिए भारत सरकार के द्वारा वायुयान की व्यवस्था की गयी। १८ अक्तूबर को श्री गोलवलकर ने तत्कालीन प्रान्त प्रचारक (बाद में सरकार्यवाह बने) श्री माधव राव मुल्ये के साथ राजा से भेंट की। उस समय वहाँ युवराज कर्ण सिंह तथा रियासत के दीवान श्री मेहर चन्द्र महाजन उपस्थित थे।

महाराजा हरिसिंह की शंकाएँ और तर्क सुनकर श्री गोलवलकर ने उनको सत्परामर्श दिया- **"आप हिन्दू राजा है। पाकिस्तान से विलय (Acceed) करने में आपकी हिन्दू प्रजा को भीषण संकटों से संघर्ष करना होगा। यह ठीक है कि अभी हिन्दुस्तान से रास्ते-रेलमार्ग नहीं है, परन्तु सब ठीक हो जायेगा। आपका और जम्मू-कश्मीर रियासत का भला इसी में है कि आप भारत में विलय करें।"**

इस भेंट से जहाँ महाराज की विलय संबंधी हिचक दूर हो गयी, वहीं राज्य की हिन्दू जनता में भी आत्मविश्वास और संकल्प शक्ति का संचार हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि पाकिस्तानी आक्रमण के समय कश्मीर में स्वयंसेवकों के नेतृत्व में हिन्दू समाज कश्मीर की रक्षा के लिए आगे आया। फिर चाहे हवाई पट्टी की मरम्मत करना हो या पाकिस्तानी सीमा में से भारतीय सेना के लिए गोला-बारूद लाना हो अथवा पाकिस्तानी सेना का मुकाबला हो, अनेकों स्वयंसेवकों ने अपना जीवन बलिदान किया।

हैदराबाद विलय में संघ का योगदान

वर्तमान आंध्र में तेलंगाना, कर्नाटक और महाराष्ट्र का कुछ क्षेत्र मिलाकर तत्कालीन हैदराबाद रियासत थी। ८५ प्रतिशत हिन्दू जनसंख्या पर घोर मुस्लिम मानसिकता वाला निजाम वहाँ शासक था। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व ११ जून, ४७ को उसने घोषणा कर हैदराबाद को स्वतंत्र राज्य घोषित कर दिया। उसने ४० हजार की सेना और २ लाख कट्टरपंथी रजाकारों की मदद से हिन्दुओं पर अत्याचार करने और उन्हें हैदराबाद रियासत से भगाने का कार्य शुरू किया। निजाम की कार्यकारी परिषद के सदस्य जे०वी० जोशी ने उस काल का वर्णन करते हुए लिखा है- **"परभणी और नान्देड़ जिलों में पूरी तरह आतंक छाया हुआ है। मैंने अपनी आँखों से विनाश लीला देखी है। मैं रो पड़ा यह देख कर कि हिन्दुओं की हत्या की गई और उनकी आँखें निकाल ली गयीं, महिलाओं से बलात्कार किया गया, भारी संख्या में घरों को जला कर राख कर दिया गया।"**

भारत में हैदराबाद विलय के समर्थक अन्य हिन्दुओं के साथ ही दस हजार से अधिक कांग्रेसी बन्दी बना लिये गए। कम्युनिस्ट भी रजाकारों के साथ मिलकर लूटपाट में लगे थे। उनको भी हथियार दिये जा रहे थे। हैदराबाद भारत के मध्य एक नासूर की

भाँति बन रहा था।

इस समस्या के समाधान के लिए म०प्र० के मुख्यमंत्री पं० रविशंकर शुक्ल और गृहमंत्री द्वारिकाप्रसाद मिश्र सरदार पटेल की प्रेरणा से सक्रिय हुए। भयग्रस्त हिन्दुओं को आश्वस्त करने हेतु बरार के प्रान्त संघचालक बापू साहब सोहणी से मिलकर उन्होंने संघ स्वयंसेवकों के सहयोग की अपेक्षा की। संघ, आर्यसमाज आदि हिन्दू संगठनों की सक्रिय भागीदारी के कारण, रजाकार हिन्दुओं का पलायन नहीं करा सके और अन्त में सरदार पटेल की योजनानुसार १३ सितम्बर, ४८ को भारतीय सेना ने हैदराबाद में प्रवेश किया। रजाकारों से हुए संघर्ष में १० भारतीय सैनिकों को वीरगति प्राप्त हुई और १२०० रजाकार भारतीय सेना द्वारा मारे गये। हिन्दू समाज के सक्रिय सहयोग से मात्र ४८ घंटों में १४ सितम्बर, १९४८ को हैदराबाद का भारत में पूर्ण विलय संभव हो सका।

गोवा मुक्ति अभियान

१९४७ में अंग्रेजों के वापस जाने के बाद भी गोवा, दमन–दीव, नगर हवेली–दादरा आदि भारतीय क्षेत्रों में पुर्तगाली उपनिवेश बना रहा। १९५४ में सर्वदलीय मुक्ति संघर्ष छेड़ा गया, जिसको राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रबल समर्थन ने प्रभावी बना दिया। संघ के स्वयंसेवकों ने आजाद गोमांतक दल बना कर गोवा मुक्ति संघर्ष में पूरी ताकत झोंक दी।

गोवा की राजधानी पणजी के सचिवालय पर १९५५ में पहली बार तिरंगा फहराने वाले स्वयंसेवक ने जो एक स्कूल अध्यापक थे, लिस्बन (पुर्तगाल) की जेल में १६ साल कैद में बिताये।

२५ जून १९५५ को वरिष्ठ प्रचारक श्री जगन्नाथ राव जोशी के नेतृत्व में गये सत्याग्रहियों के जत्थे को पुर्तगाली पुलिस ने पीट–पीट कर सत्याग्रहियों के पैर तोड़ डाले। मथुरा के स्वयंसेवक श्री अमीचन्द गुप्त इस अभियान के प्रथम शहीद हुए। श्री जोशी व अन्य सभी को १०–१० वर्ष का कारावास दण्ड दिया गया।

१५ अगस्त, १९५५ को सबसे बड़े सत्याग्रही जत्थे का नेतृत्व दिल्ली के पूर्व प्रान्त प्रचारक श्री वसन्त कृष्ण ओक ने किया। पुर्तगाली पुलिस की फायरिंग की तीन गोली लगने के बाद गिरते हुए भी श्री ओक ने तिरंगे को गिरने नहीं दिया। उनके गिरते ही ध्वज को सागर (म०प्र०) की बहन सहोदरा देवी ने थाम लिया। इस पर उनके दाहिने हाथ पर गोली मारी गयी। उन्होंने ध्वज को बाँयें हाथ में सँभाल लिया और लहराती रहीं। फिर वे गोली लगने से अचेत होकर गिरें, इससे पूर्व ही राष्ट्रध्वज को उज्जैन (म०प्र०) के जिला प्रचारक श्री राजाभाऊ महाकाल ने भारतमाता की जय कहते हुए सँभाल लिया। पुर्तगाली सैनिकों ने अब उन पर गोलियों की झड़ी लगा दी। आँख को बेधती हुई गोली मस्तिष्क में जा घुसी। कुछ ही क्षणें में वे नीचे गिर गये, परन्तु उससे पहले ध्वज अपने साथी को सौंप दिया। शहादत से पूर्व उनकी देह छटपटाती थी परन्तु मुँह से भारत माता की जय ही बोल रहे थे।

वीर मोहन रानाडे को लिस्बन की जेल में २४ वर्ष की सजा देकर भेजा गया, जहाँ उन पर अमानुषिक अत्याचार हुए।

वीरों के बलिदान और सत्याग्रहियों पर हो रहे अत्चारों से सारा देश उबलने लगा। अन्ततः १८ दिसम्बर १९६१ को भारत की सेनाओं ने अति प्रातः आक्रमण किया और १९ दिसम्बर को देश में यूरोपियों का सबसे पुराने उपनिवेश गोवा–दमन–दीव को ४५० वर्ष बाद मुक्त करा लिया।

दादर–नगर हवेली जिसे स्वयंसेवकों ने लाठी के बल पर मुक्त कराया

दादर–नगर हवेली पर भी पुर्तगाली उपनिवेश था। २ अगस्त १९५४ को पुणे के संघचालक श्री विनायक राव आप्टे के नेतृत्व में लगभग १०० स्वयंसेवकों के दल ने धावा बोल दिया। गुरिल्ला पद्धति से आकस्मिक छापे मार कर पुर्तगालियों को छकाते हुए वे राजधानी सेल्वासा पहुँच गये। विद्युत की गति से पुलिस मुख्यालय पर आक्रमण कर दिया। वहाँ उपस्थित १७५ सशस्त्र पुर्तगाली सैनिकों ने खुद को घिरा देखकर बिना शर्त समर्पण कर दिया। हथियार बन्द सैनिकों पर दण्डधारी स्वयंसेवकों की विजय हुई। मुख्यालय पर तिरंगा फहरा कर उसी दिन यह क्षेत्र भारत सरकार को सौंप दिया गया।

२ अगस्त १९७९ को सेल्वासा के नागरिकों द्वारा मुक्ति की रजत जयंती के अवसर पर इन स्वयंसेवकों का अभिनन्दन किया गया। १९८७ में महाराष्ट्र सरकार द्वारा इन देशभक्त साहसी स्वयंसेवकों का सम्मान स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के रूप में किया गया। □

जब स्वयंसेवकों ने पुर्तगालियों को भारत से भगाया

□ अजय मित्तल

१९४७ में अंग्रेजों ने सत्ता भारतीयों को हस्तांतरित कर दी। पर दो यूरोपीय देशों का कब्जा भारत के कुछ इलाकों पर इसके बाद भी कुछ वर्षों तक बना रहा। इनमें से फ्रांस ने अपने आधिपत्य वाले चारों क्षेत्र–पांडिचेरी, यनाम, माहे व करईकल–आठ–नौ वर्षों में धीरे–धीरे भारत को सौंप दिये। भारत सरकार ने शांतिपूर्ण बातचीत द्वारा समझा–बुझाकर इन्हें प्राप्त कर लिया। दूसरी औपनिवेशिक ताकत–पुर्तगाल– से भी वार्ताएँ की गयीं। पर उस पर इनका कोई असर नहीं हुआ। अंततः जनान्दोलन तथा शक्ति–प्रयोग से ही समस्या समाप्त हुई और पुर्तगाल बेइज्जत हो कर भारत से अपना बोरिया–बिस्तर समेट कर भागा।

कुख्यात ज़ेवियर के कारनामे

यह एक दुःखद तथ्य है कि पुर्तगाल इस देश के छोटे–मोटे क्षेत्रों को कब्जाने वाली प्रथम यूरोपीय साम्राज्यवादी ताकत थी और वह सबसे देर तक यहाँ डटी रही। १५१० ईसवी में पुर्तगाल के सेलर–जनरल अल्फांसो ने गोवा पर कब्जा किया और पाँच साल बाद वह भारत में पुर्तगाल का पहला वाइसराय बना। १५३५ ईसवी में पुर्तगाल ने दमन और दीव पर अपना आधिपत्य प्रस्थापित कर लिया। फिर दादरा व नगरहवेली पर अधिकार जमाया। १५४० ईसवी तक इन पाँचों क्षेत्रों के सभी मन्दिर पुर्तगालियों ने गिरा दिये। इनके स्थान पर चर्च खड़े किये गये। १५४२ ई. में फ्रांसिस जेवियर नाम का एक पादरी गोवा आया। अपने पाँच साल के यहाँ के कार्यकाल में उसने बलात् धर्म–परिवर्तन के द्वारा कई लाख हिंदुओं को ईसाई बनाया। जंजीरों से जकड़े हिन्दू के मुख में जबरदस्ती गोमांस का टुकड़ा घुसाकर हिन्दूधर्म से परावृत्त करने का जेवियर का घिनौना काम कुख्यात है। इन कुकृत्यों के कारण उसे चर्च ने संत माना।

पाशविक बल प्रयोग

पुर्तगाली बेरहम दमनकारी थे। सोलहवीं सदी से शुरु होने वाले स्वाधीनता संघर्षों को उन्होंने पाशविक बलप्रयोग से कुचला। स्थानीय लोगों को ईसाई बनाकर अपने साम्राज्यवाद के समर्थक भी उन्होंने काफी संख्या में खड़े कर लिये। इस प्रकार दमन व धर्मान्तरण के सहारे वे साढ़े चार सौ साल तक यहाँ टिके रहे। तो भी आजादी पाने के लिए हिन्दुस्थानियों की जद्दोजहद लगातार चलती रही। इस सदी के प्रारम्भ में १९१२ ईसवी में सावंत भाइयों ने गोवा में विद्रोह की आग सुलगाई। पर यह बगावत दबा दी गयी। १९४६–४७ में सत्याग्रह द्वारा पुर्तगालियों को भारत छोड़ने पर विवश करने की कोशिशें हुईं। किन्तु पुर्तगाल इंग्लैण्ड की तरह दूसरे विश्वयुद्ध के कारण कमजोर तो हुआ नहीं था। वह वस्तुतः युद्ध में सम्मिलित ही नहीं हुआ था। इसलिए अपने विश्वव्यापी उपनिवेशों को सँभाल न सकने की मजबूरी उसके सामने नहीं थी। सो अहिंसक आंदोलनों को उसने हृदयहीन बलप्रयोग द्वारा कुचल डाला।

दादरा–नगर हवेली की मुक्ति

१९५४ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवकों ने 'आजाद गोमांतक दल' बनाकर पुर्तगाली गुलामी से गोवा व अन्य पुर्तगाली उपनिवेशों को स्वतंत्र करने के लिए सार्थक प्रयत्न शुरू किये। इनका पहला अभियान दादरा और नगर–हवेली की मुक्ति का था जिसमें दल को शानदार सफलता मिली, हालाँकि इसके बीस से भी अधिक स्वयंसेवक सैनिक पुर्तगालियों द्वारा बंदी बनाये गये, जिन्हें औसतन पच्चीस वर्षों के कारावास की सजा दी गयी। २ अगस्त १९५४ को अपने अन्तिम अभियान में एक सौ से अधिक संघ–कार्यकर्ताओं ने दादरा–नगर हवेली पर धावा बोला। इनका नेतृत्व पुणे के संघचालक श्री विनायक राव आप्टे, नाना काजरेकर तथा सुधीर फड़के कर रहे थे। श्री फड़के लब्ध–प्रतिष्ठ फिल्म संगीतकार हैं। स्वाधीनता सेनानियों का यह जत्था गुरिल्ला पद्धति द्वारा पुर्तगाली पुलिस को आकस्मिक छापों से छकाते हुए सेल्वासा पहुँच गया। यहाँ स्थित पुर्तगाली मुख्यालय पर बिजली की गति से इन्होंने धावा बोला। वहाँ १७५ पुलिस वाले मौजूद थे। पर वे इतने घबरा गये कि उन्होंने हथियार डालकर आत्मसमर्पण कर दिया। तत्काल मुख्यालय पर तिरंगा फहराया गया और उसी दिन यह क्षेत्र भारत सरकार को सौंप दिया गया। आज भी दादरा–नगर हवेली के निवासी वह रोमांचकारी, पर अविश्वसनीय घटना उत्साह से स्मरण करते हैं। इस घटना की रजतजयंती पर २ अगस्त १९७९

को सेलवासा के लोगों ने उस विजयी जत्थे के सेनानियों को सम्मानित किया था। महाराष्ट्र सरकार ने भी १९८७ में उन्हें स्वाधीनता सेनानी मानकर आदर दिया।

पणजी पर तिरंगा

दादरा–नगरहवेली के अनुभव से आजाद गोमांतक दल को बहुत उत्साह मिला। गोवा–मुक्ति के लिए उनके प्रयास तेज हो गये। पर गोवा में पुर्तगाली सरकार ने अपनी काफी ताकत झोंकी और दमनात्मक कार्यवाहियाँ कीं। गोवा की सीमा पर पूरे भारत से सत्याग्रही पहुँच रहे थे। संघ के कार्यकर्ता इनके भोजन व निवास की व्यवस्था करते थे। संघ–जनसंघ के लोगों के साथ सत्याग्रही जत्थे गोवा की सीमा में घुसते थे, लाठी–गोली झेलते थे, गिरफ्तार होते थे और पुर्तगाली जेलों में यातनाएँ सहते थे।

राजधानी पणजी के सचिवालय पर १९५५ में संघ के एक अध्यापक कार्यकर्ता ने तिरंगा प्रथम बार फहरा देने का साहस दिखाया। वे गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें लिस्बन (पुर्तगाल की राजधानी) की जेल में १७ साल रखा गया, जहाँ से वे १९७२ में रिहा हुए।

प्रथम हुतात्मा

२५ जून १९५५ को जनसंघ के प्रमुख नेता जगन्नाथ राव जोशी १४५ सत्याग्रहियों के साथ गोवा में घुसे। पुलिस ने इन पर निर्मम लाठी प्रहार शुरू किया। अनेकों लहूलुहान हुए। अनेकों की हड्डियाँ टूटीं। मथुरा से आये कार्यकर्त्ता अमीचन्द्र गुप्ता को तो पुलिस ने लोहे के सरियों से पीटा। जब वे अचेत होकर गिर पड़े तो पुर्तगाली पुलिस के जवान उनके शरीर पर बूटों समेत कूदने लगे। आखिर उनका प्राणांत हो गया। वे गोवा मुक्ति आंदोलन के प्रथम हुतात्मा बने। जोशी जी साथियों सहित गिरफ्तार कर जेल भेज दिये गये, जहाँ से वे १९६१ में छूटे।

महाकाल का बलिदान

१५ अगस्त १९५५ को सबसे बड़ा सत्याग्रही जत्था, जिसमें ६४२ लोग थे, बाँदा सीमा पर स्थित पत्रादेवी पहुँचा। इसके उपनेता संघ के वरिष्ठ प्रचारक वसंत राव ओक थे। वे तिरंगा लिये जत्थे में सबसे आगे थे। पुर्तगाली पुलिस ने सत्याग्रहियों पर सीधे फायरिंग शुरू कर दी। श्री ओक के तीन गोलियाँ लगीं। वे नीचे गिर गये, पर तिरंगे को उन्होंने जमीन पर नहीं गिरने दिया। इसके पूर्व कि उनकी चेतना लुप्त होती, उन्होंने झंडा सागर (मध्य प्रदेश) की सहोदरा देवी बहन को थमा दिया। इस वीरांगना बहन की दायीं भुजा, जो ध्वज को सँभाले हुई थी, पर निशाना लगाकर पुलिस ने गोली मारी। घायल बहन ने बायें हाथ में ध्वज पकड़ लिया। तभी आ पहुँचे उज्जैन के संघ–कार्यकर्त्ता राजाभाऊ महाकाल। संज्ञाहीन होने जा रही बहन के हाथ से उन्होंने झंडा थाम लिया। पुलिस फायरिंग जारी थी। गोलियों की एक बौछार राजाभाऊ पर हुई। एक गोली उनकी आँख चीरती हुई मस्तिष्क में धँस गयी। कुछ ही सेकेंड में वे भारतमाता की गोदी में गिर गये। पर ध्वजा एक अन्य सत्याग्रही बंधु ने थाम ली थी। "भारत माता की जय" बोलते महाकाल काल के गाल में समा गये।

कुछ अमरीकी व अन्य विदेशी पत्रकार घटनास्थल पर तभी पहुँचे थे। यह निर्मम रक्तपात देखकर वे इतने विचलित हुए कि उन्होंने पुर्तगाली अधिकारियों को भला–बुरा कहकर उन्हें गोलीबारी बंद करने पर विवश कर दिया। इस प्रकार अहिंसक सत्याग्रहियों पर फायरिंग बंद हुई। राजाभाऊ का नाम गोवामुक्ति के इतिहास में अमर हो गया।

मोहन रानडे की क्रान्ति गाथा

महान क्रांतिकारी मोहन रानाडे के नामोल्लेख बगैर गोवा संघर्ष की कथा अधूरी है। १५ अगस्त, १९५५ की रक्तरंजित घटना के बाद सत्याग्रह कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया गया था। पर विप्लवी चेतना वाला एक युवा वर्ग अब सक्रिय हो गया। आजाद गोमांतक दल के मोहन रानाडे के नेतृत्व में कुछ क्रांतिकारी युवक सशस्त्र अभियान चलाने लगे। २६ नवम्बर १९५५ को उन्होंने पुर्तगाली पुलिस–चौकियों पर कब्जा कर लिया। यहाँ उन्होंने पुलिसजनों को बंदी बनाया और हथियार लूट लिये। शिरगाँव में जमीन के अन्दर लोहे की खानें थीं, जहाँ भारी मात्रा में बारूद मिलने की संभावना थी। अतः रानाडे के दल ने वहाँ भी धावा बोला। ये लोग ३५ पेटी डायनामाइट लूट कर ले आये। इसके बाद बेती पुलिस चौकी लूटी। पर इस कार्यवाही में मोहन जी बुरी तरह जख्मी हो गये। वे पुर्तगालियों द्वारा पकड़ लिये गये। उन्हें चौबीस साल की सजा देकर लिस्बन भेज दिया गया। यहाँ से वे मरणासन्न अवस्था में ही रिहा हुए।

गोवा मुक्त हुआ

आजाद गोमांतक दल ने सत्याग्रह व कुर्बानियों द्वारा गोवा–मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। अन्तर्राष्ट्रीय दबावों के कारण भारत सरकार पाँच साल निष्क्रिय रही। अन्ततः १९६२ के चुनावों के ठीक पहले दिसम्बर १९६१ में नेहरू सरकार ने सैन्य कार्यवाही कर गोवा से पुर्तगालियों को खदेड़ दिया।

☐

– खंदक, मेरठ

खेल-खेल में देशभक्ति के संस्कार

□ एन० के० श्रीवास्तव

सन् १९६५ के भारत–पाकिस्तान युद्ध के समय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवकों की अनेकानेक टोलियाँ अग्रिम मोर्चों पर तैनात सेना के जवानों की अनेक प्रकार से सहायता कर रही थीं। कई बार उन्हें पाकिस्तानी सेना की गोलियों के बीच भारतीय जवानों तक विभिन्न सहायता सामग्री पहुँचाने का दायित्व पूर्ण करना पड़ा। इस कार्य में कई स्वयंसेवकों के जीवन का बलिदान भी हुआ। युद्ध समाप्त होने के बाद सेना के कुछ अधिकारियों की तत्कालीन सरसंघचालक प०पू० श्री माधवराव सदाशिव गोलवलकर उपाख्य श्री गुरुजी से भेंट हुई। इन अधिकारियों ने श्री गुरुजी से प्रश्न किया कि "आपने संघ स्वयंसेवकों को इतनी देशभक्ति कैसे सिखाई कि वे शत्रु की गोलियों की भी चिन्ता न कर मोर्चों पर हमारे जवानों की बराबर सहायता करते रहे। हमारी सेना के जो जवान मातृभूमि के लिए प्राणोत्सर्ग करते हैं वह तो उनकी 'ड्यूटी' है। इसीलिए उनकी भर्ती की जाती है और जब वे शहीद हो जाते हैं तो सरकार की ओर से उनके परिवार वालों को कुछ न कुछ राहत भी मिलती है। परन्तु संघ के जो स्वयंसेवक मोर्चों पर सहायता कार्य करते रहे उन्हें तो इसका भी कोई लाभ नहीं था कि उनके बलिदान हो जाने के बाद उनके घर–परिवार वालों को कहीं कोई सहायता मिलेगी। आखिर आपने यह प्रखर देशभक्ति इन युवकों में जगाई कैसे ?" प०पू० श्री गुरुजी ने सहज मुस्कान के साथ उत्तर दिया कि "यह सब हमने कबड्डी खेल से सीखा है।" सेनाधिकारियों को भले इस पर आश्चर्य हुआ होगा परन्तु तथ्य तो यही है कि संघ स्थान पर आने वाले स्वयंसेवकों में खेल–खेल में ही देशभक्ति, निर्भयता, साहस, शौर्य और विजयी होने की आकांक्षा जाग्रत होती है। संघ की शाखाओं पर इसी प्रकार के खेल खिलाए जाते हैं जिनसे स्वयंसेवकों में अनेकानेक श्रेष्ठ गुणों का सहज रूप से विकास होता जाता है। यह पता भी नहीं चल पाता कि स्वयंसेवक कैसे धीरे–धीरे गुणों का संचयन करता जाता है। संघ स्थान पर खेलों का अपना स्वतंत्र अस्तित्व एवं महत्व होता है। शारीरिक के अन्य कार्यक्रमों यथा– दण्ड, पद–विन्यास, समता, व्यायाम योग, सूर्य नमस्कार आदि की तुलना में खेलों में अधिक आकर्षण रहता है। खेलों के अनेक प्रकार है– छूने, दौड़ने, आकस्मिक आक्रमण, बाधाएँ पार करने, चुनौती देने, शारीरिक व बौद्धिक क्षमता प्रदर्शित करने वाले खेल विभिन्न प्रकार से खेले जाते हैं। कहीं सब स्वयंसेवक खेल में एक साथ भाग लेते हैं तो कहीं दल या टोली बनाकर उन्हें निर्धारित नियमों के अनुसार खेल खिलाया जाता है। कही द्वन्द्व के खेल होते हैं तो कहीं व्यूह–रचना के खेल होते हैं। इन सबके पीछे उद्देश्य एक ही रहता है कि वे स्पर्धा में विजयी होने के लिए भरपूर प्रयत्न करना सीखें। इस सब खेलों में कबड्डी एक ऐसा खेल है जिसमें सर्वाधिक आकर्षण रहता है और स्वयंसेवकों का मन इस खेल से कभी ऊबता भी नहीं। रोज–रोज खेल कर प्रवीणता बढ़ाना प्रत्येक स्वयंसेवक की कामना रहती है। यह खेल सीधा धरती से जुड़ा हुआ ही नहीं है वरन् इसके अन्दर शुद्ध रूप से 'हिन्दू दर्शन' भी समाहित है। हम सारे हिन्दू पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं। इस खेल में भी खिलाड़ी बराबर मरते–जीते रहते हैं। शाखाओं पर कबड्डी पर एक गीत भी गाया जाता रहा है जिससे खेल भावना के साथ–साथ आत्मा की अमरता व शरीर की नश्वरता का ज्ञान भी सहज स्वाभाविक रूप से होता है। यहाँ कुछ पंक्तियाँ उद्धृत करना समीचीन होगा :

'क्यों डरता है अरे खिलाड़ी,
खेल–खेल तू निर्भय हो।
देख कबड्डी कहकर,
प्रतिद्वन्द्वी पाला देने आया।
मार गया तेरे साथी को,
पकड़ नहीं कोई पाया।।
तनिक सहारा जो दे देता,
शत्रु नहीं जाने पाता।
तेरा साथी भी बच जाता,
स्वयं शत्रु भी मर जाता।।
खेल–खेल तो चतुराई का,
तेरा सबको परिचय हो।
क्यों डरता है अरे खिलाड़ी......।।
देखो शत्रु अकेला ही,
कितना अन्दर घुस आया है।

उसे न मरने का भय है,
साहस की सारी माया है।।
मर जाओगे तो क्या होगा,
पुनरपि जीवन पाओगे।
खेल–खेल कर ही अपना,
सच्चा कर्तव्य निभाओगे।
तथा
रहे अकेले ही तो फिर,
साथी सब मारे गये तुम्हारे,
साथ दिया यदि तुमने होता,
जाते नहीं कभी वे मारे।

स्पष्ट है कि उपर्युक्त गीत स्वयंसेवकों के अन्तःकरण में हिन्दू चिंतन की शाश्वत भावना जगाने के साथ–साथ इस देश की मिट्टी से प्रेम करना भी सिखाता है। संघ की मान्यता है कि यह सारा देश एक है। हम सब इस एक भारत माता की संतानें हैं। इसलिए इस भूमि का एक–एक कण अपने लिए पूज्य है। शाखाओं पर जब हम 'कश्मीर किसका– हमारा' खेलते हैं या मण्डल में दौड़ते हुए वीर छत्रसाल की, जय शिवा प्रताप की का खेल खेलते हैं तो हम सीधे इस देश और इसके महापुरुषों से अपना संबंध प्रस्थापित कर लेते हैं। जब केरल, बंगाल, राजस्थान, गुजरात, आंध्र, कर्नाटक, असम आदि अन्य सुदूरवर्ती प्रान्तों में हम 'कश्मीर हमारा है' का खेल खेलते हैं तब वहाँ की सुन्दरता के साथ अपनत्व जाग्रत हो जाता है और हम दुनिया को इस माध्यम से यह चुनौतियाँ भी देते हैं कि कश्मीर पर जिनकी कुत्सित दृष्टि लगी है उन्हें सावधान हो जाना चाहिए। वे समझ लें कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है जिसे हम जीते जी अलग होने नहीं देंगे। भारत परिचय, महापुरुषों की खोज आदि खेलों के माध्यम से जिस तरह देशभक्ति के भाव जगते हैं वे गहरे संस्कार के रूप में रच–बस जाते हैं और यही संस्कार थे जिनके कारण संघ–स्वयंसेवक युद्ध के समय भी कर्तव्यविमुख नहीं हुए और अपनी जान हथेली पर रखकर सीमा के अग्रिम मोर्चों तक भारतीय सेना की सहायता करते रहे और सेना की विजयश्री में अपना योगदान भी अर्पित कर सके। प०पू० श्री गुरुजी का यह कथन कि 'देशभक्ति की भावना हम कबड्डी से सीखते हैं' शत–प्रतिशत सही है। संघ शाखाओं पर इसी कारण ऐसे ही खेलों को अपनाया गया है जिनसे स्वयंसेवकों के हृदय में इस देश की मिट्टी से प्रेम जाग्रत हो, सभी प्रकार के भेद–भाव नष्ट हों और हम सब एक माता के पुत्र के रूप में राष्ट्र के हितों का चिंतन करें और समय आने पर देश के लिए अपना सर्वस्वार्पण करने को तत्पर रहें। □

– एच. २/२३२, जानकीपुरम, लखनऊ

जीवन में पहली बार.....

श्री शंकराचार्य की गद्दी तथा परम्परागत परिपाटियों के गढ़ शृंगेरी के निकटवर्ती ग्रामों में संघ के कार्यकर्ताओं का अनुभव बड़ा ही विस्मयकारी है। जब अत्तिरोडिगे ग्राम का मुख्य शिक्षक पहले–पहल हरिजन–बस्ती की ओर गया तो उसे आधे मार्ग में ही रोककर बस्ती वालों ने कहा कि "यदि ऐसे पुण्यात्मा हमारे घरों में प्रवेश करेंगे तो (घरों) पर विनाश की बिजली टूट पड़ेगी क्योंकि हम अशुद्ध हैं और पियक्कड़ हैं।" किन्तु संघ के कार्यकर्ता भी उन्हें सरलता से छोड़ने वाले नहीं थे। उन्होंने श्री रामोत्सव का आयोजन किया और पूजा तथा प्रसाद के लिए सभी ग्रामवासियों को आमंत्रित किया। ग्राम–प्रधान तथा अन्य परम्परावादी ब्राह्मणों से लेकर पिछड़ी जाति के लोगों तक सभी लोगों को एक ही स्थान पर भोजन परोसा गया। किसी को भी अपने साथ बैठे व्यक्ति के कारण ऊँच–नीच की कोई ठेस नहीं पहुँची। किन्तु चरमोत्कर्ष तो भोजन के अंत में हुआ। जब हरिजन तथा अन्य पिछड़े वर्ग अपनी पत्तले उठाने लगे तो मुख्य संघ–कार्यकर्ता ने उन्हें रोकते हुए कहा, "नहीं, आप हमारे सम्माननीय अतिथि और श्रीराम के भक्त हैं। आपके साथ ऐसा व्यवहार करना हमारा सौभाग्य और कर्त्तव्य है।" ऐसा तो पहले कभी सुनने में नहीं आया था कि पुरोहित का पुत्र स्वेच्छा से 'अछूतो' की पत्तलें उठायें! एक वयोवृद्ध हरिजन ने, जो ध्यानपूर्वक यह सब देख रहा था, कहा– "ऐसा दृश्य तो मैंने जीवन में पहली बार देखा है। अब हमें अनुभव हो रहा है कि संघ क्या है। मैं वचन देता हूँ कि इसके बाद आप जहाँ भी बुलायेंगे, वहाँ हम आयेंगे और हमसे जो भी करने को कहेंगे, वह हम करेंगे।"

संघ ने समरसता का पाठ पढ़ाया

□ श्री सूरजभान

महामहिम राज्यपाल उत्तर प्रदेश

"अनुसूचित जाति में जन्म लेने के कारण मुझे बाल्यावस्था से ही सामाजिक अस्पृश्यता का कड़ुवा घूट पीने पर विवश होना पड़ा है। किन्तु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सम्पर्क में आने पर मुझे वहाँ इस कलुषित व्यवहार का शिकार नहीं बनना पड़ा है।" उक्त शब्द उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल श्री सूरजभान ने पत्रिका के संपादक डॉ. गौरीनाथ रस्तोगी से गांधी जयन्ती के पावन–पर्व पर एक साक्षात्कार में अभिव्यक्त किए।

श्री सूरजभान ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि वे तत्कालीन अम्बाला अब यमुनानगर (हरियाणा) जिले के जगाधरी नगर के समीप एक ग्राम के निवासी हैं। उक्त ग्राम में उस समय दो–तीन घर सवर्णों तथा कुछ परिवार मुसलमानों के अतिरिक्त सभी अनुसूचित जाति से संबंधित थे। उनकी अत्यन्त प्रबल इच्छा परमपिता परमेश्वर की आरती लिखित रूप से प्राप्त करना था किन्तु वह उन्हें उस बाल्यकाल में कभी प्राप्त नहीं हो सकी।

प्रगतिशीलता का नमूना

महामहिम राज्यपाल ने यह भी स्पष्ट किया कि उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा एक प्रगतिशील कहे जाने वाले विद्यालय से उत्तीर्ण की। परन्तु उन्होंने उक्त विद्यालय का नाम यह कहकर बताने से इन्कार कर दिया कि वहाँ के छात्रावास में मुझे अपने खाने के पात्र अलग रखने तथा उन्हें स्वयं साफ करने की विवशता एवं आपत्तिजनक भेदभावपूर्ण व्यवहार किए जाने के बाद भी उसका मेरे प्रति यह उपकार है कि मैंने वहाँ से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की है।

संघ और अस्पृश्यता

तदुपरान्त श्री सूरजभान ने इंटर के अध्ययन हेतु अम्बाला शहर के ए. एस. जैन कालेज में प्रवेश लिया। वहीं उनका सम्पर्क राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से आया तथा वे संघ के स्वयंसेवक बन गए। जैन कालेज में अध्ययन करते समय भी वे महाविद्यालय के छात्रावास में रहते थे तथा भोजन आदि मामलों में उनके साथ उसी प्रकार का भेदभावपूर्ण व्यवहार होता था। जब इस बात की जानकारी उसी छात्रावास में रहने वाले अध्यापक श्री बद्रीदास जैन को मिली तब उन्होंने मुझसे कहा कि अस्पृश्यता पर आधारित यह व्यवहार अमानवीय है। अध्यापक श्री जैन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्त्ता थे। मेरे द्वारा विवशता प्रकट करने पर उन्होंने मुझसे कहा कि कल से मैं संघ की शाखा में जाने वाले ७–८ विद्यार्थियों और स्वयं का भोजन महाविद्यालय छात्रावास के भोजनालय से कमरे पर मँगवाऊँगा तथा सभी स्वयंसेवक तुम्हारे साथ बैठकर भोजन करेंगे। इससे तुम्हें अपने भोजन–पात्र अलग रखने तथा उन्हें स्वयं साफ करने से छुटकारा मिल जाएगा।

छात्र हड़ताल

अध्यापक श्री जैन ने अपनी यह योजना कार्यान्वित तो की, किन्तु दो दिन उपरान्त ही अन्य सभी छात्रों को यह जानकारी प्राप्त हो गई कि अनुसूचित जाति का सूरजभान नामक छात्र सवर्ण विद्यार्थियों के साथ भोजन करता है। अतः उसका न केवल विरोध हुआ अपितु महाविद्यालय के प्राचार्य से इस घटना की शिकायत भी की गई। प्राचार्य महोदय ने अध्यापक श्री जैन को इस घटना के लिए बुरा–भला भी कहा। किन्तु वे अपने पथ पर अडिग रहे। इस पर छात्रों ने हड़ताल कर दी। भोजनालय के कर्मचारियों ने भी भोजन बनाने से इन्कार कर दिया।

समरसता का पाठ

मामला जैन कालेज की प्रबंधक समिति के सामने विचार एवं निर्णयार्थ लाया गया। प्रबंधक समिति ने स्पष्ट शब्दों में निर्णय दिया कि जैन मत अस्पृश्यता एवं जाति–व्यवस्था को अमान्य करता है अतः विद्यार्थी सूरजभान को छात्रावास के भोजनालय में अन्य सवर्ण छात्रों की भाँति भोजन करने का अधिकार है। फलतः हड़ताल समाप्त हो गई। इस प्रकार राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने मेरे साथ न केवल समानता का व्यवहार किया अपितु मुझे सामाजिक समरसता का पाठ भी पढ़ाया।

अस्पृश्यता की राजनीति

एक अन्य घटना का उल्लेख करते हुए राज्यपाल श्री सूरजभान ने कहा कि साठ के दशक के अन्त में हरियाणा के अंदर आयोजित राष्ट्रीय

स्वयंसेवक संघ के एक शिविर में कांग्रेस (इ) के एक सांसद श्री रणधीर सिंह मेरे साथ शिविर देखने गए। श्री रणधीर सिंह संघ के आलोचकों में से एक थे। किन्तु जब उन्होंने अपने ग्राम के एक अनुसूचित जाति के संघ स्वयंसेवक को भोजन परोसते देखा तब उन्हों बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने उस स्वयंसेवक से जब जानकारी प्राप्त करनी चाही तब उसने उन्हें बताया कि संघ में किसी स्वयंसेवक से उसकी जाति नहीं पूछी जाती। अतः स्पृश्यता–अस्पृश्यता का प्रश्न ही यहाँ खड़ा नहीं होता।

कुछ समय उपरान्त लोकसभा में वाद–विवाद के दौरान एक कांग्रेसी सांसद ने संघ पर अस्पृश्यता तथा जातीय भेदभाव को प्रश्रय देने का आरोप लगा डाला। इस पर इन्हीं कांग्रेसी सांसद श्री रणधीर सिंह ने बहस में हस्तक्षेप करते हुए कहा कि "संघ में अनेक बुराइयाँ हो सकती हैं किन्तु वहाँ जातीय आधार पर भेदभाव अथवा अस्पृश्यता को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता। यह मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा है।"

इस घटना के अगले दिन तत्कालीन प्रधानमंत्री ने श्री रणधीर सिंह को बुलाकर उन्हें इस बात के लिए सचेत किया कि उन्हें बहस में इस प्रकार हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था। श्री रणधीर सिंह के स्पष्टीकरण देने पर कि मैंने स्वयं अपनी आँखों से यह सब देखा है, प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा कि "मैं भी जानती हूँ कि संघ में स्पृश्यता–अस्पृश्यता संबंधी समस्या नहीं है, फिर भी उन्हें इस प्रकार बोलना नहीं चाहिए।"

संबंध तोड़ने का प्रश्न नहीं

आरक्षण के संबंध में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए उन्होंने टिप्पणी की कि अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए की गई संवैधानिक व्यवस्था को आज तक प्रामाणिकता एवं ईमानदारी के साथ क्रियान्वित नहीं किया गया है। फलस्वरूप अब यह दुःस्थिति उत्पन्न हो गई है कि सवर्ण कहा जाने वाला वर्ग यह प्रश्न खड़ा करता है कि जातीय आधार पर यह आरक्षण कब तक लागू रहेगा जबकि दलित समाज उसे लागू रखने पर जोर देता आ रहा है। इस संबंध में रहस्योद्घाटन करते हुए श्री सूरजभान ने कहा कि एक बार भाजपा कार्यकर्त्ताओं के मध्य ऐसा ही प्रश्न खड़ा किये जाने पर तत्कालीन वरिष्ठ भाजपा नेता तथा वर्तमान में गुजरात के राज्यपाल श्री सुन्दरसिंह भंडारी ने प्रतिप्रश्न करते हुए पूछा था कि "यदि परिवार का कोई सदस्य अस्वस्थ हो तो औषधि कब तक दोगे ? उत्तर मिला : स्वस्थ होने तक। श्री भंडारी जी ने कहा कि यही मापदंड आरक्षण व्यवस्था के प्रति भी लागू रहना चाहिए।" वैसे उन्होंने अपना अभिमत प्रकट करते हुए कहा कि "आरक्षण आगामी १० वर्ष तक लागू रहे। उसका प्रामाणिकता से पालन हो। तदुपरान्त जातीय आरक्षण की व्यवस्था को समाप्त कर आर्थिक आधार पर आरक्षण की व्यवस्था की जाए।"

अन्त में राज्यपाल श्री सूरजभान ने यह भी स्पष्टीकरण दिया कि यद्यपि अपने छात्र–जीवन से ही वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक हैं, फिर भी राज्यपाल का पद संभालने के उपरान्त उन्होंने संघ–शाखा अथवा संघ के किसी कार्यक्रम में भागीदारी नहीं की है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्होंने संघ से अपने संबंध तोड़ लिए हैं और न ही वे ऐसा कुछ करना चाहते हैं। □

शत-शत प्रणाम

केशव,
तुमको शत–शत प्रणाम!
तुम
आदमी या देवता
यह चले कैसे पता,
आदमी की मूर्ति में देवत्व का आभास
देवता की देह में हो आदमी का वास
तो उसे क्या कह पुकारें
आरती कैसे उतारें,
ओ संघ–शक्ति के भक्ति–धाम।
तुम अग्निमित्र जाज्वल्यमान
जन–जन–अन्तः के अमृत–गान
तुम शिबि–दधीचि की यादगार,
हे परशुराम के स्वाभिमान
ओ कर्णधार शत–शत प्रणाम!

□ **पं. श्यामनारायण पाण्डेय**

सेवा भारती

□ भैय्याजी जोशी

अ०भा० सेवाप्रमुख

निरपेक्ष, निःस्वार्थभाव से प्राणिमात्र की सेवा करना यह हिन्दू समाज का स्वभाव है। सामान्यतः हिंसा, पीड़ा, कष्ट देखकर हिन्दू का हृदय द्रवित होता है। यही कारण हे कि अपनी संस्कृति में 'परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीड़नम्' दूसरों को दुःख देने का व्यवहार करना पाप माना जाता है। दूसरों की सेवा करना पुण्य। प्यासे को पानी, भूखे को अन्न, अतिथि का सम्मान, यह सब कार्य श्रेष्ठ माने गये हैं।

सेवाभाव

पक्षियों को चुगने के लिए अन्न, पीने के लिए पानी, पशुओं को घास–पानी की व्यवस्था करना यह ग्राम–ग्राम में दिखाई देता है। मंदिर में जाने वाली बहिनें थाल में आटा–गुड़ लेकर जाती हैं ताकि चिड़ियों को खिलाया जा सके। यात्रा मार्ग पर घनी छाया हेतु वृक्ष लगाना, यात्रियों हेतु विश्राम गृह (धर्मशाला) बनवाना, खान–पान का प्रबन्ध करना, चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराना यह पुण्य माना जाता है। समाज के सामान्य व्यक्ति से लेकर धनवान तक सभी यथाशक्ति सेवाभाव से ऐसे कार्य करते हैं। यह आम बात है।

संन्यासी, महापुरुष, समाज–सुधारकों ने अपनी वाणी से, लेखन से, व्यवहार से यही मार्गदर्शन किया है।

संतश्री रविदास, कबीर, नरसी मेहता, तुकाराम, एकनाथ महाराज, गाडगे महाराज, नारायण गुरु ऐसे कई नाम लिये जा सकते हैं। स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने तो 'नर सेवा, नारायण सेवा' का मंत्र देकर अपने अनुयायियों को सेवा की प्रेरणा दी। 'रामकृष्ण मिशन' तो आज सेवा का पर्याय बना हुआ है।

समाज के विभिन्न अभावों, समस्याओं का निवारण करने के भाव से अपना जीवन समर्पित करने वाले महात्मा फुले, महर्षि आण्णासाहेब कर्वे, राजा राममोहन राय, भगिनी निवेदिता, डा० बाबा साहब अंबेडकर, स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी इनके आदर्श हमारे सम्मुख प्रस्तुत हैं, जो हमें सेवा की प्रेरणा देते आये हैं।

देश के कोने–कोने में भिन्न–भिन्न जातियों में जन्मे ऐसे महापुरुष हमारे प्रेरणा के स्रोत हैं और यही अपने समाज की विशेषता है। दीर्घकालीन श्रेष्ठ परम्परा है।

सेवाभारती की स्थापना

वंचितों की सेवा किये बिना परम वैभव और पुनर्निर्माण का कोई भी कार्य पूरा नहीं हो सकता। इसलिए स्वयंसेवकों द्वारा प्रारम्भ किये गये अनेक कार्यों में इस बात की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। वनवासी कल्याण आश्रम, विश्व हिन्दू परिषद्, भारत विकास परिषद्, दीनदयाल शोध संस्थान, विद्या भारती इत्यादि संस्थाओं द्वारा वंचित वर्ग के लिए अनेक सेवा–प्रकल्प चलाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त अनेक स्वयंसेवक व्यक्तिगत स्तर पर या कोई संस्था बनाकर अनेक प्रकार के सेवाकार्य करते हैं। परन्तु संघ द्वारा अपनी कार्यपद्धति के एक अंग के रूप में सेवाकार्यों का समावेश करने की आवश्यकता सरसंघचालक प०पू० बालासाहब देवरस के दिल्ली के स्वयंसेवकों के समक्ष १६७८ में हुए भाषण के बाद अनुभव की गयी जिसमें उन्होंने सामाजिक आशय (social thrust) की बात कही थी। इसी बात को ध्यान में रखते हुए १६८० में दिल्ली में 'सेवा भारती' की स्थापना की गयी जिसके माध्यम से अनेक प्रकार के सेवा कार्य प्रारंभ किये गये। वर्तमान में सेवा भारती द्वारा दिल्ली की कुल ७०० सेवा बस्तियों में से ४०० से अधिक में लगभग १३५० सेवाकार्य चलाये जा रहे हैं। कुछ अन्य प्रान्तों में भी यह कार्य प्रारंभ हो चुका है।

सेवाकार्यों को डॉ० हेडगेवार जन्मशताब्दी के अवसर पर १६८६–६० से विशेष गति मिली। उस समय देशभर में सेवानिधि एकत्रित करते हुए सेवाकार्यों का जाल द्रुतगति से फैलाने की योजना बनी। सेवानिधि एकत्र करने के बाद सभी प्रान्तों में विभाग या संभाग स्तर पर सेवाकार्यों के संचालन हेतु न्यास बनाये गये जिनके अन्तर्गत सेवा–प्रकल्प प्रारंभ करने का क्रम आरंभ हुआ।

एक शाखा, एक सेवाकार्य

संघ की शाखाओं को सेवाकार्यों

से जोड़ने की दृष्टि से 'एक शाखा–एक सेवाकार्य' तथा शाखा–सप्ताह में एक दिन सेवा बस्ती में ये योजनाएँ प्रारंभ की गईं। संघ के संविधान में संशोधन करते हुए 'सेवा विभाग' नाम से नया विभाग प्रारम्भ किया गया। वर्तमान में संघ के सेवा विभाग द्वारा देशभर में साढ़े तीन हजार से अधिक स्थानों पर लगभग सात हजार सेवा–प्रकल्प चलाये जा रहे हैं।

विशेष प्रकल्प

स्वयंसेवक स्थानीय स्तर पर अनेक संस्थाएँ बनाकर सेवाकार्य चलाते हैं। कर्नाटक में 'हिन्दू सेवा प्रतिष्ठान' के द्वारा अनेक सेवाकार्य चलाये जाते हैं। इसका एक विशेष उपक्रम है– युवा सेवाव्रती प्रकल्प। इस समय ५०० से अधिक युवा पूर्णकालिक सेवाव्रती के रूप में समाज–सेवा के विविध क्षेत्रों में कार्यरत हैं। वनसंपदा की रक्षा के लिए हिन्दू सेवा प्रतिष्ठान ने १९८८ में कन्याकुमारी से गोवा तक की १०० दिन की 'पश्चिमी घाट रक्षा पदयात्रा' का अनोखा आयोजन किया जिसके अंतर्गत इस विषय पर जनजागरण के अतिरिक्त २ लाख से अधिक पौधे भी लगाये गये।

विवेकानन्द केन्द्र

स्व० एकनाथ जी रानडे ने विवेकानन्द शिला स्मारक का निर्माण करने के पश्चात् दूसरे चरण के रूप में विवेकानंद केन्द्र का कार्य प्रारंभ किया। इसके द्वारा सामाजिक पुनरुत्थान के लिए समर्पित ध्येयनिष्ठ युवा जीवनव्रती तैयार किये जाते हैं। ऐसे सैकड़ों जीवनव्रती पूर्वांचल और तमिलनाडु में विविध प्रकल्प चला रहे हैं।

'स्वामी विवेकानन्द मेडिकल मिशन' का कार्य अनेक प्रान्तों में १९७२ से चल रहा है जिसके अंतर्गत चिकित्सा–सेवा के अनेक प्रकल्प चल रहे हैं।

भारतीय कुष्ठ निवारक संघ

मध्य प्रदेश के चांपा नामक स्थान पर 'भारतीय कुष्ठ निवारक संघ' १९६२ से कुष्ठरोगियों की सेवा और उपचार में रत है। कुष्ठरोगियों को आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी बनाने के लिए गोशाला, कृषि, उद्योग–प्रशिक्षण इत्यादि कार्य चलाये जाते हैं। कुष्ठरोगियों के छोटे बच्चों के लिए झूलाघर और बड़े बच्चों के लिए शिक्षण की व्यवस्था भी की जाती है। कर्नाटक के बीजापुर नामक स्थान पर भी कुष्ठरोगियों की चिकित्सा–सेवा का एक कार्य चल रहा है।

अन्य प्रकल्प

१९७७ में प्रारंभ हुए 'नेशनल मेडिकोज आर्गनाइजेशन' (एन०एम०ओ०) के माध्यम से आज देशभर में सहस्रों चिकित्सक सेवाबस्तियों और वनांचलों में चिकित्सा–सुविधा तो प्रदान करते ही हैं, वे स्वास्थ्य संबंधी प्रत्येक पहलू पर उन्हें मार्गदर्शन करते हुए उनके स्वास्थ्य–अभिभावक की भूमिका निभा रहे हैं।

केरल में 'बाल गोकुलम्' ओर 'अमृत भारती विद्यापीठम्' के माध्यम से १२०० बाल–संस्कार–केन्द्र चलाये जा रहे हैं।

नागपुर में 'लोक कल्याण समिति' के अन्तर्गत दो प्रकल्प चल रहे हैं– 'डॉ० हेडगेवार रक्तपेढ़ी' और 'माधव नेत्रपेढ़ी'। रक्तपेढ़ी ने 'जन्मदिन पर रक्तदान' नामक योजना के माध्यम से जनता में रक्तदान के प्रति अभिरुचि बढ़ायी है। नेत्रपेढ़ी के प्रथम नेत्रदानी के रूप में स्व० बालासाहब देवरस ने नेत्रदान–संकल्प–पत्र भरा और उनकी इच्छानुसार उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका नेत्रदान किया गया। अन्य स्थानों पर भी स्वयंसेवक रक्तदान और नेत्रदान के प्रकल्प चला रहे हैं।

संघ के वरिष्ठ प्रचारक स्व० डॉ० आबाजी थत्ते की स्मृति में नागपुर में १९९६ में 'डॉ० आबाजी थत्ते सेवा और अनुसंधान संस्था' प्रारम्भ की गई। इसके माध्यम से रुग्णसेवा के अतिरिक्त रुग्णों के साथ आने वाले आप्तजनों के निवास की व्यवस्था और समुचित मार्गदर्शन किया जाता है और उन्हें आवश्यकतानुसार औषधियाँ, रक्त इत्यादि उपलब्ध कराया जाता है।

पुणे की 'ज्ञान प्रबोधिनी' द्वारा वहाँ के शिवगंगा और गुंजावनी नदी–घाटियों में स्थित १७० ग्रामों में समग्र ग्राम–विकास प्रकल्प चलाये जा रहे हैं।

उत्तर प्रदेश के हिमालयीन क्षेत्र में 'उत्तरांचल उत्थान परिषद्' कार्यरत है। इसके द्वारा जनजागरण, जनसेवा तथा ग्रामीण विकास की दृष्टि से अनेक ग्रामों में कार्य किया जा रहा है। संघ के वरिष्ठ प्रचारक स्व० भाऊराव देवरस की स्मृति में लखनऊ में 'भाऊराव देवरस सेवा न्यास' द्वारा सामाजिक सेवा के विभिन्न प्रकल्प तथा स्व० माधव राव देवड़े की स्मृति में 'देवड़े रुग्ण सहायता केन्द्र' लखनऊ में चलाये जा रहे हैं।

नवीन अभिव्यंजना

अपनी इसी सेवाभावना के कारण किसी भी मानव निर्मित अथवा प्राकृतिक आपदा में प्रान्त, भाषा, पंथ के भेदों से ऊपर उठकर तत्काल राहत कार्य में संघ के स्वयंसेवक लग जाते हैं। फिर चाहे वह गुजरात का सूखा हो या आन्ध्र में आयी भयंकर बाढ़ अथवा निसर्ग के तांडव नृत्य जैसे भूकंप। सभी स्थानों में संघ के स्वयंसेवक सदैव सेवा–कार्य में अग्रणी रहे हैं। उन्होंने ऐसे क्षत–विक्षत शवों का भी अंतिम संस्कार करने में संकोच नहीं किया है जिसे अंजाम देने में सेना के जवान भी झिझक रहे थे। चरखी दादरी (हरियाणा) में हुई भीषण विमान दुर्घटना में लगभग समस्त इस्लाम मतावलम्बी व्यक्तियों की सहायता में संघ के स्वयंसेवकों द्वारा अग्रणी रहने पर उसके आलोचक भी दंग रह गए थे। अपने इस कर्तृत्वपूर्ण व्यवहार से ही संघ की आज यह छवि निर्माण हो गई है कि अब समझदार एवं जागरूक वर्ग भी **आर.एस.एस.** का अर्थ **Ready for Selfless Service** मानता है।

आशा एवं विश्वास के केन्द्र

यह भाव केवल आपदाओं तक सीमित नहीं रह गया है। नगर में विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से (लगभग २४० पंजीकृत संस्थायें) तथा अखिल भारतीय स्तर पर स्थापित संस्थाओं जैसे विश्व हिन्दू परिषद्, वनवासी कल्याण आश्रम, विद्या भारती, राष्ट्र सेविका समिति, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्, दीनदयाल शोध संस्थान, भारत विकास परिषद्, सेवाभारती, वन बन्धु परिषद् के माध्यम से २४००० से अधिक सेवाकार्य चल रहे हैं जो अपने आप में एक कीर्तिमान हैं। अन्य किसी भी सेवा संस्थाओं की तुलना में यह संख्या कहीं अधिक है।

भिन्न–भिन्न स्थानों पर चलने वाले रक्तकोष, गोवा, मुंबई, भागयनगर (हैदराबाद), बंगलौर, दिल्ली, भोपाल, आगरा कई स्थानों पर अनाथ बालक–बालिका–महिलाओं के लिए कार्यरत मातृछाया जैसे प्रकल्प, अंध बंधुओं के उत्थान हेतु कार्य करने वाला अखिल भारतीय दृष्टिहीन कल्याण संघ एवं वरदान जैसी संस्थायें समाज का विश्वास तथा आशा का स्थान बनी हैं।

केरल में बाल गोकुलम के चलने वाले १२०० केन्द्र, कर्नाटक में हिन्दू सेवा प्रतिष्ठान द्वारा प्रशिक्षित २४० सेवाव्रती, वनवासी क्षेत्र में चलने वाले ६४०० एकल विद्यालय, स्थान–स्थान पर कार्यरत ग्राम स्वास्थ्य रक्षक संबंधी सभी प्रकल्प अपने प्रयासों से समाज परिवर्तन के कार्य में जी-जान से लगे हैं।

रामकथा, कृष्णकथा का प्रशिक्षण लेकर ग्राम–ग्राम में अपनी वाणी में श्रद्धा जागरण का कार्य करने वाले भैया, बहन, वनवासी, ग्रामवासी समाज में सुरक्षा का भाव निर्माण कर रहे हैं।

सूची और बड़ी हो सकती है। सेवा करना यह किसी पंथ–विशेष को अपना अधिकार समझने की आवश्यकता नहीं है।

संघ के स्वयंसेवक सेवा के द्वारा समाज में स्वाभिमान, आत्मनिर्भरता, समरसता का भाव–निर्माण करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

इनके अतिरिक्त अनेक स्वयंसेवक भी व्यक्तिगत स्तर पर अनेक प्रकार के सेवाकार्य करते हैं। इन सबके माध्यम से समाज के वंचित वर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति होकर उनकी स्थिति तो सुधर ही रही है, साथ ही उचित संस्कार प्राप्त करके वे राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के पुनीत कार्य में सहयोगी हो रहे हैं तथा राष्ट्रविरोधी शक्तियों का इस वंचित वर्ग को राष्ट्र की मुख्य धारा से काटकर अलग करने का षड्यन्त्र विफल होने लगा है। □

> *"संघ के लोग मुसलमानों से घृणा करते हैं, उन पर आक्रमण करते हैं, इस प्रकार का आरोप सर्वथा असत्य है। मुसलमानों को भी संघ से परस्पर प्रेम, सहयोग और संगठन–कुशलता का पाठ सीखना चाहिए।"*
>
> □ डा० जाकिर हुसैन (पूर्व राष्ट्रपति)
>
> २० नवम्बर, १९४९, मिलाद महफिल मुंगेर

मातृ शक्ति जागरण

□ मीनाक्षी दीक्षित

स्वीकार और अस्वीकार के लम्बे अंतर्द्वन्द्व के पश्चात् तापस अगस्त्य ने गृहस्थधर्म में प्रविष्ट होने का निर्णय लिया। विद्या, बुद्धि और विवेक में अपने समकक्ष विदर्भ की राजकन्या को उन्होंने अपनी सहधर्मिणी की परिकल्पना के अनुरूप पाया और विवाह का प्रस्ताव लेकर विदर्भ–नरेश के पास पहुँचे। ऋषिवर अगस्त्य के प्रस्ताव को सुनकर, विदर्भ नरेश ने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "योग्य तथा वयस्क राजकन्या अर्थात् मेरी पुत्री लोपामुद्रा का निर्णय ही इस प्रस्ताव पर अन्तिम तथा मान्य होगा"। सम्पूर्ण प्रसंग से अवगत होने पर, लोपामुद्रा ने विचार कर कहा: "महात्मा अगस्त्य जैसे तेजस्वी ऋषि का राजकन्या से विवाह राष्ट्रहित में है। अतः यह प्रस्ताव उसे स्वीकार है।" लोपामुद्रा अगस्त्य का वरण कर, समस्त राजवैभव को त्यागकर सुदूर अरण्य में बनी पर्णकुटी में पहुँच गई। महात्मा अगस्त्य की स्नेहमयी पत्नी एक वात्सल्यमयी माँ ही नहीं बनी, वरन् वेद–ऋचाओं की उसने रचना की। उसने गुरुकुल की स्थापना की। उसकी मुख्य शिक्षिका और कुलपति का भार ग्रहण किया। वह शस्त्र संचालन, शस्त्र निर्माण और सैन्य संचालन में भी प्रवीण हुई। अगस्त्य ने जब अपने श्रेष्ठ कार्य हेतु दक्षिण की ओर प्रस्थान किया तब उस समस्त अभियान में लोपामुद्रा ने भी अगस्त्य के समान कौशल दिखाया– चाहे वह शस्त्र–संचालन में रहा हो या संस्कारों की प्रतिष्ठापना में।

हिन्दू संस्कृति की प्रतीक

लोपामुद्रा कुटुम्ब का आधार अन्नपूर्णा, स्नेहमयी पत्नी और वात्सल्यमयी माँ है। गुरुकुल की अधिष्ठात्री–ज्ञान और शिक्षा की ज्योति है। युद्ध कौशल में निष्णात शक्ति का प्रकट रूप है। लोपामुद्रा एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व है। पुनः वह एक अपवाद न होकर सामान्य व्यवस्था की परिचायक है। मैत्रेयी, गार्गी, भारती– यहाँ तक कि आधुनिक युग में माँ शारदा के प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व उसके प्रमाण हैं। इसीलिए भारत की हिन्दू संस्कृति की प्रतीक नारी बतायी गई है।

शताब्दियों तक आक्रान्ताओं से संघर्ष करने के कारण हिन्दू समाज के सभी घटक प्रभावित हुए। स्त्रियों पर इसका अधिक प्रभाव पड़ा। संघर्ष में सहयोगी होने के बाद भी कुछ अपवादों को छोड़कर शनैः–शनैः वे अपने अधिकारों से च्युत होती गईं। परदा प्रथा, बाल विवाह, अशिक्षा जैसी कुरीतियाँ हिन्दू समाज में व्याप्त हुईं और आनुवंशिक हो गईं।

पाँच कसौटियाँ

रा०स्व० संघ अपने जन्म–काल से समाज–जीवन में भारतीय नारी के योगदान को लेकर चिन्तित रहा है। इसीलिए वह अपने स्वयंसेवकों से सदैव यह अपेक्षा करता रहा है कि संघ का कार्य प्रत्येक परिवार में चूल्हे तक पहुँचना चाहिए। संघ के निष्ठावान स्वयंसेवकों ने अपने नेतृत्व की इस अपेक्षा को सर्वदा व्यावहारिक रूप प्रदान किया है और आज भी कर रहे हैं। इतना ही नहीं, उसके अपने स्वयंसेवकों के मार्गदर्शन हेतु अग्रलिखित पाँच महत्वपूर्ण निर्देश भी निर्धारित किये हैं।

(१) संघ की प्रक्रिया समाज परिवर्तन द्वारा समाज के उत्कर्ष की प्रक्रिया है। (२) संघ का विचार 'हिन्दुत्व' है। (३) प्रतीक हिन्दू स्त्री, लोपामुद्रा जैसी ज्ञान–अधिकार धारिणी, सम्पूर्ण व्यक्तित्व की स्वामिनी है। (४) नारी किसी भी समाज का केवल अर्धांश ही नहीं, आधार भी है। (५) समाज उत्कर्ष की प्रक्रिया उसके अर्धांश या आधार को परे रखकर संभव नहीं है।

इन पाँच मूल आधारों को दृष्टिगत रखकर ही संघ की नारी के सन्दर्भ में भूमिका का अवलोकन किया जाना उचित होगा।

आम जन में संघ की पहचान दैनन्दिन शाखा से है। शारीरिक और बौद्धिक कार्यक्रमों द्वारा स्वयंसेवकों का चरित्र निर्माण करने वाली इन शाखाओं में स्त्रियों की प्रत्यक्ष सहभागिता नहीं है। इस कारण संघ विरोधियों को इस अपप्रचार का सूत्र मिल जाता है कि 'संघ में स्त्रियों का कोई स्थान नहीं है'।

इतिहास का निर्माण

वस्तुस्थिति इससे सर्वथा भिन्न है। यद्यपि शाखा में स्त्रियाँ नहीं है तथापि संघ कार्य में बड़ी संख्या में स्त्रियाँ संलग्न हैं और संघ स्त्रियों के

हित में अन्यान्य कार्य कर रहा है। संघ के उत्सव, प्रबोधन, बौद्धिक जैसे सभी कार्यक्रमों में महिलाएँ समान रूप से उपस्थित होती हैं। गोरक्षा आन्दोलन और राम जन्मभूमि भूमि मुक्ति आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी और भूमिका सभी ने देखी है। पचास के दशक में गो रक्षा के प्रश्न पर उ०प्र० के विधान मंडल परिसर के प्रत्येक द्वार पर लेट कर धरना देते हुए उन्होंने विश्व के संसदीय कार्यकलाप में एक इतिहास का निर्माण किया था क्योंकि उस समय उ०प्र० विधान सभा का अधिवेशन २५ मिनट के विलम्ब से होने की जो अभूतपूर्व घटना घटित हुई थी, उसका सर्वाधिक श्रेय संघ-कार्य से प्रभावित लखनऊ की तत्कालीन मातृ-शक्ति को ही प्राप्त है। शायद ही किन्हीं दूसरे आन्दोलनों में महिलायें इतने सुसंगठित तौर पर इतनी बड़ी संख्या में खड़ी हुई होंगी? क्या यह संघ में महिलाओं के सहभाग के बिना संभव था? कदापि नहीं। इसी प्रकार आपात्काल के विरुद्ध लड़ी गई लड़ाई में संघ परिवार की बहनों का अप्रतिम योगदान है। संदेशों, लिखित सामग्रियों का निर्माण, प्रसार, और प्रकीर्णन, भूमिगत स्वयंसेवकों की देखभाल, उनकी सुरक्षा जैसे न जाने कितने कठिन और चुनौतीपूर्ण कार्य संघ परिवार की बहनों ने किये हैं- समर्पण और विश्वास से, निष्ठा और लगन से।

फिर कैसे कहा जा सकता है कि संघ कार्य में महिलाओं का स्थान नहीं है?

संस्कार देने वाली शिक्षिका

संघ का बल 'संस्कार' पर है। माँ शिशु की प्रथम शिक्षिका, संस्कार-दायिका है। 'माँ' के रूप में स्त्री का विशेष कर्त्तव्य बन जाता है। माँ के रूप में उसे विशेष सम्मान प्राप्त होता है। भारतीय संस्कृति 'आदि शक्ति' से 'मातृभूमि' तक- समष्टि को मातृ आधारित मानती है। हमारी कुटुम्ब व्यवस्था मातृ प्रधान रही थी। शिशु मन पर संस्कारों के बीज रोपने वाली स्त्री ही समाज के संस्कारों की निर्मात्री है। उसकी यह भूमिका भी वस्तुतः संघ की भूमिका ही है। इस सन्दर्भ में रा०स्व० संघ के द्वितीय सरसंघचालक प०पू० गुरुजी ने कहा है, 'नैतिक अधःपतन से अपनी तरुण पीढ़ी का बचाव करने का दायित्व माताओं पर ही है। माँ ही परिवार में ऐसे वातावरण का निर्माण कर सकती है कि कभी भूखा रहना पड़े तो भी आनन्द से सहन करेंगे पर घूस कभी नहीं लेंगे।'

संस्कार प्रदायिनी 'माँ' के रूप में स्त्री को अभिषिक्त करने की यह विचारधारा, आधुनिक नारी-मुक्त आंदोलन की विचारधारा से बहुत मेल नहीं खाती। अतः कई बार पाश्चात्य नारी मुक्ति आंदोलनों से प्रभावित नारी-अधिकार समर्थक कहते हैं, संघ स्त्रियों की प्रगति और खुलेपन के विरुद्ध है तथा वह स्त्रियों को चूल्हे-चौके में समेट देना चाहता है। यदि ऐसा होता तो संघ अपने अनेक सामाजिक कार्यक्रमों के नेतृत्व का दायित्व स्त्रियों पर कैसे छोड़ता?

आधारभूत अन्तर

वस्तुतः पश्चिम के नारीवादी आंदोलनों और भारतीय स्त्री के अस्तित्व की पहचान की लड़ाई में एक आधारभूत अन्तर है। यह अन्तर सांस्कृतिक मूल्यों और परिस्थितियों के कारण है। पश्चिम के आन्दोलन उस सांस्कृतिक और मजहबी प्रक्रिया के विरुद्ध थे जिसने स्त्री को द्वितीय श्रेणी का नागरिक बना दिया था। अतः वे आन्दोलन, समस्त मान्य प्रक्रियाओं का प्रतिकार करते थे। भारत में स्थिति इससे सर्वथा भिन्न रही है। सांस्कृतिक अवधारणा में यहाँ स्त्री पुरुष के समतुल्य है। सामाजिक स्तर पर भी उसे यह स्थान प्राप्त रहा है। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम द्वारा अश्वमेध यज्ञ किए जाने के अवसर पर माता सीता की प्रतिमा की उपस्थिति किस सत्य एवं तथ्य की परिचायक है? आदि शंकराचार्य से शास्त्रार्थ में मण्डन मिश्र के निरुत्तर हो जाने पर भी निर्णायिका देवी भारती द्वारा उन्हें पराजित न घोषित करना अन्ततः क्या दर्शाता है? क्या उससे नारी के अर्द्धांगिनी होने का सत्य प्रतिपादित नहीं होता? सच्चाई तो यह है कि भारतीय जीवन व्यवस्था में इस देश के किसी भी परिवार में एक मांगलिक कार्य माता के रूप में परिवार की आधारभूत इकाई नारी के बिना संपन्न नहीं हो सकता। इसीलिए इस राष्ट्र की सांस्कृतिक-सामाजिक रचना में 'अर्द्ध-नारीश्वर' की कल्पना ही नहीं की गई है, अपितु उसे व्यावहारिक स्वरूप भी प्रदान किया गया है। अनेक विसंगितयों के बावजूद उसे यह गौरवपूर्ण स्थान आज भी भारत के सांस्कृतिक-सामाजिक जीवन में प्राप्त है। कालान्तर में परकीय दासता के सुदीर्घ कालखंड में उसके शील-सम्मान के संकट में पड़ जाने के फलस्वरूप

भारतीय नारी को परिवार की चहारदीवारी में सीमित रहने तक बाध्य होना पड़ा और उससे वह निर्बल तथा असहाय बन गई। किन्तु हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि भारतीय नारी का संघर्ष अपनी सांस्कृतिक अवधारणा से नहीं, वरन् परिस्थितिजन्य विषमताओं एवं असंगतियों से है।

साँझा उत्तरदायित्व

जब परिस्थितिवश भारतीय नारी शिक्षा, ज्ञान, विचार, निर्णय, जैसे जीवन के महत्वपूर्ण पक्षों से दूर हुई, तो निश्चय ही सम्पूर्ण व्यवस्था पुरुष–प्रधान हो गई। वर्षों से जमे हुए इस चक्के को अब खिसकना ही होगा। संघ जिस समतामूलक उत्कृष्ट समाज का स्वरूप लेकर कार्य कर रहा है उसमें यह आवश्यक है कि स्त्री और पुरुष दो अंगांगी किन्तु स्वतंत्र और सम्पूर्ण व्यक्तित्व के रूप में विकसित हों और पहचाने जायें।

कुटुम्ब के स्तर पर बालक–बालिका में भेदभावपूर्ण व्यवहार दूर हो, बालिकाओं को शिक्षा का समान अवसर हो, उन्हें व्यक्तिगत निर्णय स्वयं लेने का सामर्थ्य, विवेक और अधिकार प्राप्त हो, महिलाओं से जुड़ी कुरीतियों बाल विवाह, दहेज आदि से मुक्त मानसिकता का विकास हो, पारिवारिक हिंसा, यौन उत्पीड़न जैसे अपराधों को रोककर भारतीय नारी शक्ति को उसकी सांस्कृतिक अवधारणा के अनुरूप गौरव प्रदान किया जा सकता है।

इस प्रक्रिया को समाज का कोई एक व्यक्ति या घटक अकेला पूर्ण नहीं कर सकता, यह सभी का साँझा उत्तरदायित्व है। अपने स्तर पर संघ इस प्रक्रिया में लगा है।

हमें ध्यान रखना होगा कि शिवाजी का निर्माण जीजाबाई के संरक्षण, सान्निध्य में होता है। यदि शिवा जी चाहिये तो जीजाबाई अनिवार्य एवं अपरिहार्य हैं। किन्तु जीजाबाई का निर्माण करने हेतु नारी को शिक्षा, ज्ञान आदि से सन्नद्ध कर उसे स्वयं निर्णय लेने का अधिकार प्रदान करना होगा और रा०स्व० संघ उसका पोषक एवं समर्थक है। वह इस कार्य को मौखिक वार्ताओं तक सीमित करने के विरुद्ध है। इसलिए राष्ट्र सेविका समिति के माध्यम से वह भारतीय नारी को स्वावलम्बन की शिक्षा देने में संलग्न है। □

अन्तर

वर्षों पूर्व शृंगेरी से लगी त्रिताहल्ली तहसील में एक मनोरंजक घटना घटी। पिछले अनेक वर्षों तक वह तहसील समाजवादियों का गढ़ मानी जाती रही। समाजवादी नेता प्रेम भसीन एक बार वहाँ गये। अपने कार्यकर्ताओं से वार्ता करते समय उन्होंने पूछा, "भाइयों, आप यहाँ कृषि–आन्दोलन अति सफलतापूर्वक चला रहे हैं। किन्तु सामाजिक परिवर्तन लाने में आप कितने सफल रहे हैं ? मेरे मन में एक नया विचार कौंधा है। हमें अपने ही घरों से इस आन्दोलन को आरम्भ करना है। जातिवाद और अस्पृश्यता की रूढ़ि के अभिशाप को हमें पहले–पहल अपने ही घरों से मिटाना होगा। उसके बिना हमारे शब्दों का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। अब मैं जानना चाहूँगा कि आपके कितने घरों में हरिजनों को निस्संकोच आने दिया जाता है और आपके साथ भोजन के लिए आमंत्रित किया जाता है ? भसीन को उस समय बड़ी ठेस पहुँची जब सभा में उपस्थित किसी भी समाजवादी कार्यकर्ता ने अपना हाथ नहीं उठाया। किन्तु कतिपय युवकों ने खड़े होकर कहा, "देखिए, हम समाजवादी टोली के तो नहीं है। हम तो बस ऐसे ही अपने समाजवादी मित्रों के साथ यहाँ चले आये। किन्तु आपने अभी जो कुछ कहा है, वह हम सबके लिए कोई नयी बात नहीं है। पहले ही विगत अनेक वर्षों से हमारे घरों के द्वार अपने हरिजन भाइयों के लिए खुले हुए हैं। वे प्रायः हमारे यहाँ आते हैं और हमारी माताओं द्वारा परोसा गया भोजन हमारे परिवार के अन्य लोगों के साथ करते हैं।" प्रत्यक्षतः भसीन चकित रह गये। उन्होंने पूछा कि ऐसे उल्लेखनीय परिवर्तन का कारण क्या था ? युवकों ने सहज भाव से कहा, "हम बचपन से संघ के स्वयंसेवक रहे हैं।"

तो यह अंतर है संघ–शैली के सामाजिक कायाकल्प और विभिन्न 'सुधारवादी' तथा 'क्रांतिवादी' आन्दोलनों के बीच।

बिछुड़ों को गले लगायें! जागृति का शंख फूँकें!

□ मोहन जोशी

भारत की सनातन संस्कृति अनादि काल से **"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"** की भावना से ओतप्रोत रही है। इस जीवन–दर्शन ने सम्पूर्ण चराचर जगत में ईश्वर को व्याप्त माना है और समस्त सृष्टि को सदा एक परिवार की भावना से देखा है। विश्व कल्याण की इस महान भावना के कारण हजारों वर्ष पूर्व ही समस्त संसार के निवासी भारत के प्रति जगद्गुरु के रूप में श्रद्धा व्यक्त करते रहे। विश्व के घटनाक्रम में कई परिवर्तन हुए। इसके परिणामस्वरूप संसार के कुछ भागों में अति संकुचित एवं स्वार्थी मनोवृत्ति की आसुरी संस्कृतियों का प्रादुर्भाव हुआ, जिनके अत्याचारी शासकों ने अपनी राज्यलिप्सा और मजहबी कट्टरता के जुनून में लाखों व्यक्तियों का नरसंहार किया और मानवता के हृदय में विष बीज बो दिए। ऐसी विनाशकारी संस्कृतियों में ईसाइयत और इस्लाम प्रमुख हैं।

क्रुसेड के नाम पर अत्याचार

ईसा मसीह के नाम पर प्रचलित ईसाई मजहब के अनुयायियों ने क्रुसेड–धर्मयुद्ध के नाम पर घोर असहिष्णुता और अत्याचार की परम्परा का निर्माण किया। सन् ३२२ में अन्तिम रोम सम्राट कॉन्स्टेन्टाइन के ईसाई मत स्वीकार करने से लेकर सन् १६४० तक ईसाई शासकों ने उनके धर्मगुरुओं के आदेश एवं साम्राज्यवाद की महत्वाकांक्षा से प्रेरित होकर यूरोप, अमेरिका, अफ्रीका और एशिया महाद्वीप के करोड़ों लोगों का नरसंहार किया और विश्व की अनेक महान संस्कृतियों का विनाश कर दिया। यह कार्य आर्थिक एवं सांस्कृतिक आक्रमण के रूप में शक्तिशाली ईसाई शासकों तथा वेटिकन में सत्तारूढ़ ईसाई धर्मगुरु पोप जॉन पॉल द्वितीय के निर्देशानुसार आज भी चलाया जा रहा है। गत् वर्ष ६–७ नवम्बर, १९९९ को दिल्ली में आयोजित एशिया के कैथोलिक बिशपों के सम्मेलन में पोप द्वरा अगली सहस्त्राब्दी में सम्पूर्ण एशिया को 'ईसाई मत में मतान्तरित करने की घोषणा' इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

इस्लाम द्वारा जेहाद

इस्लाम मत के प्रवर्तक पैगम्बर मोहम्मद ने स्वयं को अल्लाह का सन्देशवाहक घोषित करते हुए इस्लाम मजहब की शुरूआत की। उनके अनुयायियों ने जेहाद–धर्मयुद्ध के नाम पर अरब, मिस्त्र, ईरान, इराक तथा यूरोप के अनेक देशों में भयंकर कत्लेआम और अमानवीय अत्याचार के द्वारा इस्लामी सत्ता का प्रचार किया। यहूदी, पारसी तथा मिस्त्र की समृद्ध संस्कृतियों का सर्वनाश कर दिया। बाद में इस्लाम के अनुयायी अनेक अरबी, तुर्की, ईरानी तथा अफगानिस्तानी मुस्लिम शासकों ने भारत को भी अपना निशाना बनाया। इसके परिणामस्वरूप भारत में मोहम्मद बिन कासिम से लेकर औरंगजेब की मृत्यु तक लगभग ८०० वर्ष भारत की विश्वकल्याणकारी संस्कृति पर इस्लामी सत्ता के विस्तार के लिए लाखों लोगों का रक्त बहाया गया और अति नृशंस पाशवी अत्याचार किये गये। मुस्लिम शासकों ने केवल राज्य ही स्थापित नहीं किया; किन्तु अपनी सैन्य शक्ति के बल पर नृशंस अत्याचार करके लाखों महिलाओं का अपहरण किया, नागरिकों को गुलाम बनाया और उनको बलात् इस्लाम स्वीकार करने पर विवश कर दिया। पाकिस्तान, बांग्लादेश तथा भारत के वर्तमान मुसलमान धर्मान्तरित हिन्दुओं के ही वंशज हैं; किन्तु वे अपने पूर्वजों की मूल संस्कृति से अपने–आपको अलग मान बैठे हैं।

हिन्दू पूर्वजों की संतान

औरंगजेब की मृत्यु के बाद भारत मुस्लिम शासकों के अत्याचार से पूर्णः मुक्त भी नहीं हो पाया था कि इसी बीच भारत में पुर्तगाली तथा अंग्रेज सत्ताधीशों ने भयंकर अत्याचार, हिंसा और रक्तपात के आधार पर अपना शासन स्थापित कर लिया। शासन स्थापना के साथ–साथ पुर्तगाली तथा अंग्रेज शासकों ने विदेशी पादरियों की प्रेरणा से अपनी राजसत्ता के बल पर मुसलमानों के समान ही नृशंस अत्याचार करके हिन्दू समाज को ईसाई मजहब में मतान्तरित करने का जबर्दस्त अभियान चलाया। इसी के परिणामस्वरूप वर्तमान भारत

में ३ करोड़ से अधिक ईसाई बन गये हैं, जो शत–प्रतिशत हिन्दू पूर्वजों की सन्तान हैं।

विभाजन और नरसंहार

सन् १९४७ में ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत के विभाजन की घोषणा के बाद नवोदित पाकिस्तान के शासकों ने भूतकाल के नृशंस मुस्लिम आक्रमण–कारियों का अनुसरण करते हुए भयंकर अमानुषिक अत्याचार किये। इसके परिणामस्वरूप मजहबी जुनून की आग में ५ लाख से अधिक हिन्दू नर–नारियों की हत्या हुई और लगभग १ करोड़ हिन्दुओं को आतंकित करके उनकी सम्पूर्ण धन–सम्पत्ति लूटकर भारत में पलायन हेतु विवश कर दिया। देश को अधूरी स्वतन्त्रता मिलने के बाद पं० जवाहरलाल नेहरू और उनके सहयोगी शासनारूढ़ नेताओं ने भारत की जनता को यह आश्वासन दिया कि देश में अब पूर्ण शान्ति, समृद्धि और एकता की नई लहर उत्पन्न होगी; किन्तु ५२ वर्ष व्यतीत होने के बाद देश में शान्ति–समृद्धि और राष्ट्रीय एकता की भावना निरन्तर क्षीण होती जा रही है।

कश्मीर की त्रासदी

आजादी के ५२ वर्ष बाद भी कश्मीर की समस्या हल होना तो दूर रहा, वहाँ के जनजीवन पर हर समय आतंकवाद की तलवार लटकी हुई है। केन्द्र सरकार के द्वारा कश्मीर की राज्य सरकार को अरबों रुपये का अनुदान देने के बाद भी वहाँ के मुसलमानों की गरीबी, बेरोजगारी की समस्या हल नहीं हो पाई और प्रतिदिन पाकिस्तान के इशारे पर सक्रिय मुस्लिम आतंकवादियों द्वारा नरसंहार और रक्तपात किया जा रहा है। हाल ही में भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के द्वारा अमेरिका में दिए गये भाषण के अनुसार कश्मीर की समस्या के कारण ३० हजार व्यक्तियों की हत्यायें हो चुकी हैं। इसमें हिन्दू, मुसलमान, सेना तथा सुरक्षाबलों के कर्मचारी भी सम्मिलित हैं।

उत्तर पूर्व की स्थिति

इसी प्रकार उत्तर पूर्वांचल में ईसाई संस्थाओं द्वारा किए गये धर्मान्तरण के कारण चर्च की प्रेरणा से ईसाई आतंकवादी वहाँ की आम जनता का खून बहा रहे हैं और भारत की एकता, अखण्डता और सार्वभौम सत्ता को चुनौती दे रहे हैं। अलगाववादी मनोवृत्ति के कारण विदेशी साम्राज्यवादी शक्तियों के सहयोग से राजनीतिक सौदेबाजी करके दिल्ली में शासन करने वाले अदूरदर्शी शासकों पर दबाव डालकर कुछ दशक पूर्व नागालैण्ड, मेघालय, मिजोरम जैसे ईसाई प्रभावी राज्यों का निर्माण हो चुका है। हिंसा और विघटन की लहर वहाँ अभी थमी नहीं है। असम, मणिपुर, त्रिपुरा तथा अरुणाचल के कुछ जिलों में भी इस अलगाववादी आग की लपटें पहुँच गई हैं, जो भविष्य के लिए खतरे का भारी संकेत हैं।

निष्कर्ष यह है कि झूठी पंथनिरपेक्षता का नारा मिली–जुली साँझी संस्कृति का भ्रमजाल, वोट बैंक को एकजुट बनाये रखने के लिए ईसाई–मुस्लिम की तुष्टिकरण नीति के परिणामस्वरूप आज भारत के ईसाई–मुसलमान तथा हिन्दुओं के सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवन में एक भय, सन्देह और असुरक्षा के घटाटोप बादल छा गये हैं। वर्तमान समय में सामाजिक सद्भाव, राष्ट्रीय एकता, अखण्डता और जनजीवन में शान्ति स्थापना के कार्य में भारत की राजनीतिक शक्तियाँ पूर्णतया असफल हो गईं हैं। यद्यपि गत ५२ वर्षों में विदेशी ईसाई–मुस्लिम साम्राज्यवादी शक्तियों के जाल में फँसकर राजनीतिक सत्ता हथियाने के लालच में देश में प्रान्तवाद, भाषावाद और जातिवाद की विभीषिकाओं को वीभत्स रूप प्रदान किया है; किन्तु अभी भी बीज रूप में देश के हिन्दू–मुसलमान तथा ईसाइयों में ऐसे दूरदर्शी राष्ट्रभक्त, विचारक और समाजसेवी विद्यमान हैं, जिनके निर्देशों पर चलकर भारत के सभी मत–पंथ–सम्प्रदायों और उपासना पद्धतियों के वर्तमान अनुयायियों को स्नेह और एकात्मता के सूत्र में गूँथा जा सकता है।

हिन्दू रक्त प्रवाहित

भारत में वर्तमान समय में लगभग १३ करोड़ मुस्लिम, ३ करोड़ ईसाई, शेष विराट हिन्दू परिवार के जैन–बौद्ध–सिक्ख आदि मिलकर ८४ करोड़ अनुयायी हैं। इन सभी की रगों में सनातन काल से समान पूर्वजों का रक्त प्रवाहित हो रहा है।

भारत में ८५० ऐसी छोटी–बड़ी मुस्लिम जातियाँ हैं, जिनके पूर्वज कुछ शताब्दियों पूर्व हिन्दू ही थे, जिनकी उन्हें अभी भी थोड़ी बहुत स्मृति शेष है। मोहम्मद अली जिन्ना, जुल्फिकार अली भुट्टो, शेख अब्दुल्ला, मोहम्मद करीम छागला, अब्दुल रहमान अंतुले, जार्ज फर्नांडीज, अजीत जोगी आदि का पारिवारिक इतिहास इसका ज्वलन्त

उदाहरण है।

द्विराष्ट्रवाद ध्वस्त

मोहम्मद अली जिन्ना और तत्कालीन मुस्लिम लीग ने द्विराष्ट्रवाद की जो कल्पना की थी, वह पूर्णतः ध्वस्त हो चुकी है। पाकिस्तान अपने जन्म के २३ वर्ष बाद भी १० लाख मुस्लिम बन्धुओं का रक्त बहाकर दो टुकड़ों में विभाजित हो चुका है। सिन्ध, बलूचिस्तान और पख्तूनिस्तान में द्विराष्ट्रवाद के पुरोधा मुल्ला–मौलवियों और राजनीतिक नेताओं के विरुद्ध चुपचाप एक शान्त ज्वाला धधक रही है जो कभी एक भीषण विस्फोट का रूप धारण करेगी। देश विभाजन के समय भारत से पाकिस्तान गये हुए लाखों मुसलमानों के नेता अल्ताफ हुसैन ने कुछ दिनों पूर्व अपने वक्तव्य में कहा था कि द्विराष्ट्रवाद का सिद्धान्त सुख–शान्ति और सम्मान का जीवन नहीं दे सका है। पाकिस्तान और बांग्लादेश का आम नागरिक देश विभाजित होने के ५२ वर्ष बाद भी वहाँ कट्टरपंथी मुल्लाओं और स्वार्थी राजनीतिज्ञों के झूठे आश्वासनों और मजहबी जेहादी ऐलानों के बावजूद भूख, बेरोजगारी, गरीबी, रोग और अशान्ति की भयंकर पीड़ा को मजबूरी में झेल रहा है। भारत का आम मुसलमान मौलाना बुखारी जैसे मुल्लाओं और शहाबुद्दीन जैसे स्वार्थी राजनीतिज्ञों के बहकावे में आकर कभी उर्दू, कभी इस्लामिक तालीम, अरबी सभ्यता, कश्मीरी मुसलमानों की आजादी, मुस्लिम पसर्नल लॉ, राम जन्मभूमि बनाम बाबरी ढाँचा, हज और मस्जिदों के लिए अनुदान के चक्र में फँसकर झूठे आश्वासनों के एक विशाल अन्धकारपूर्ण किले में घूम रहा है, जिसके सब दरवाजों पर विदेशी अरबी मजहब के कट्टरवादी फौलादी ताले लगे हुए हैं। ताजी हवा में साँस लेने के लिए और अपने पुरखों के बताये हुए सुख–शान्ति और समृद्धि के जीवन को पुनः प्राप्त करने के लिए उन्हें साहसपूर्वक मजहबी लौहावरण से बाहर आने का साहस प्रकट करना होगा और अपने प्राचीन पूर्वजों के गौरवशाली इतिहास का स्मरण करके पुनः भारतीय जीवन–दर्शन की मूल धारा में समरस होने का दृढ़ निश्चय करना होगा।

मायाजाल से बाहर निकलें

इसी प्रकार जो ईसाई बन्धु यूरोप की मायावी सेमेटिक विचारधारा के जाल में येन केन प्रकारेण फँसा लिये गये थे उन्हें भी भूतकाल की विसंगतियों को विस्मरण करते हुए नये भविष्य के निर्माण के लिए भारत की लोक–कल्याणकारी, विश्व को स्नेह और शान्ति प्रदान करने की क्षमता रखने वाली दिव्य जीवन–पद्धति को अपनाने के लिए कमर कसनी होगी। कामिनी–कांचन एवं सत्ता के प्रलोभन और दिग्भ्रमित करने वाली पाश्चात्य साम्राज्यवादी शक्तियों के मायाजाल से बाहर निकलने का सामूहिक निश्चय करना होगा।

आत्मचिन्तन करें

पंथनिरपेक्षतावादी राजनीतिज्ञों द्वारा पोषित तथाकथित अल्पसंख्यक–मुस्लिम एवं ईसाई बन्धुगण थोड़ा आत्मचिन्तन करें। मुस्लिम बादशाहों, पाकिस्तानी शासकों, अंग्रेज–पुर्तगाली सत्ताधारियों और प्रगति के सुनहले सपने दिखाने वाले ईसाई मजहव के प्रचारकों का शताब्दियों तक अनुकरण करने के बाद क्या उनकी गरीबी, असमानता, अशिक्षां की समस्या हल हुई है ? क्या उन्हें इस्लाम और ईसाइयत में समानता और सम्मान का यथोचित अधिकार प्राप्त हुआ है ? क्या वे आत्मशान्ति और समृद्धि के चरम उत्कर्ष पर पहुँच चुके हैं ? यदि नहीं तो सोचें। यदि हिन्दू समाज उदार दृष्टिकोण वाला नहीं होता तो ६५ प्रतिशत हिन्दू प्रतिनिधित्व वाली संविधान सभा भारत के मजहबी आधार पर खण्डित होने पर भी मुसलमान–ईसाइयों को समान संवैधानिक अधिकार देकर सच्चे बन्धु भाव का परिचय न देती ? विश्व के अन्य किसी भी देश ने अपने अल्पसंख्यकों को कोई समान अथवा विशेषाधिकार नहीं दिए हैं, अतः भारत के मुसलमानों एवं ईसाइयों को भारत से बाहर की विचारधारा, संस्कृति एवं जीवन–पद्धति के प्रति विशेष झुकाव रखने से कोई लाभ नहीं मिलने वाला है। भारत की प्राचीन सांस्कृतिक विरासत के प्रति अपनत्व का भाव जगाने का एक प्रचण्ड अभियान चलाने में उन्हें पूर्ण शक्ति से सहभागिता निभानी चाहिए। इसी के द्वारा शान्ति, समृद्धि और सम्मान पूर्ण जीवन जीने का मार्ग प्रशस्त होगा।

हिन्दू भी आत्ममंथन करें

भारत के हिन्दू समाज को आज आत्ममंथन की आवश्यकता है। भूतकाल में पारस्परिक फूट, आत्मकेन्द्रित मनोवृत्ति, रुढ़ि–अन्धविश्वास, जाति, भाषा, प्रान्त के भेदभाव आदि अनेक कारणों से हिन्दू समाज को भारी क्षति पहुँची है। अपने ही अशिक्षित, निर्धन

एवं सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए बन्धु–भगिनियों के प्रति अपमान और निरादर का भाव रखने के कारण हमने अपने ही स्वधर्म बन्धुओं को भूतकाल में शत्रुओं की झोली में फेंक दिया है। आज उनकी संख्या करोड़ों में है। उनमें से करोड़ों व्यक्ति कट्टर ईसाई–मुसलमान बनकर पावन हिन्दू संस्कृति और महान भारत राष्ट्र को क्षति पहुँचाने के लिए विदेशी विचारधारा के अनुयायी अत्याचारी साम्राज्यवादियों की विरासत को आगे बढ़ाने में सहयोगी बन रहे हैं। इसी के परिणामस्वरूप कश्मीर से लाखों हिन्दू समाज के व्यक्तियों को अपमानित और तिरस्कृत करके गत ८–१० वर्षों में कश्मीर घाटी से निष्कासित कर दिया गया है। हजारों व्यक्तियों को अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े। ऐसी ही भीषण अपमानजनक स्थिति नागालैण्ड, मेघालय, मिजोरम में बनी हुई है। असम, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा दक्षिण के अनेक राज्यों में विदेशी शक्तियाँ जातिवाद भड़काकर देश में रक्तपात और गृहयुद्ध का ज्वार उठाना चाहते हैं। पाकिस्तानी जासूसी संस्था आई.एस.आई. तथा विदेशों से अपार धनराशि की सहायता प्राप्त कट्टरपंथी मुल्ला–मौलवी और ईसाई धर्म प्रचारक इस विघटन की आग में अपने उत्तेजित भाषणों और राष्ट्रविरोधी गतिविधियों के माध्यम से पेट्रोल उड़ेलने का कार्य कर रहे हैं। सम्पूर्ण हिन्दू समाज आज एकजुट खड़ा न होने के कारण अपने धर्मस्थानों, मानबिन्दुओं एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठ परम्पराओं का संरक्षण और सम्वर्धन नहीं कर पा रहा है। ऐसे समय में प्रबल जनजागरण के माध्यम से एक विचार क्रान्ति उत्पन्न करनी होगी। हिन्दू समाज के साधु'–संतों, प्रबुद्ध विचारकों, राष्ट्रवादी राजनीतिज्ञों, जातियों के मुखियाओं और समस्त हिन्दू संस्थाओं को एकजुट होकर १३ करोड़ मुस्लिम एवं ३ करोड़ ईसाई कहलाने वाले हिन्दू पूर्वजों की सन्तानों को जो शताब्दियों से सांस्कृतिक दृष्टि से हमसे बिछुड़ गये हैं, गले लगाना होगा। पुरानी रूढ़ियों, जातिगत संकीर्णता और राजनीतिक स्वार्थों से ऊपर उठकर ईसाई–मुसलमान कहलाने वाले समाज के हृदयों में प्रवेश करना होगा। उनकी सोई भावना और उनमें अन्तर्निहित श्रेष्ठ पूर्वजों की अन्तरात्माओं को पुनर्जाग्रत करना होगा। दुःख–दारिद्रय, रोग–शोक में सहयोगी बनकर हृदयों में बन चुकी दरारों में स्नेह और सद्भाव का सीमेन्ट लगाना होगा। इसके लिए शहरों की हर गली, घर और गाँव की हर झोपड़ी में प्रेम और सौहार्द की ज्योति जलानी होगी। पुराने घावों पर मरहम लगाना होगा। सन्देह और भ्रम का निवारण करना होगा। उनकी प्रगति में सहभागी बनना होगा। कन्धे से कन्धा मिलाकर **"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्"** का मंत्र जन–जन के हृदय में जगाना होगा। भारत में ऐसे करोड़ों तथाकथित ईसाई–मुसलमान परिवार हैं जिन्हें सच्चा स्नेह, समानता का व्यवहार और सुरक्षा की गारण्टी दी जाये तो वे अत्याचारी इस्लामी और ईसाई मनोवृत्ति के आक्रमणकारियों के आतंक से घबराकर, जिन आसुरी विचारधारा के आगे नतमस्तक हो गये थे, उनका गन्दा और भद्दा पाशवी लबादा सहर्ष उतारकर फेंक देंगे। आओ हम फिर जागृति का शंख फूँकें। देश में फिर गंगा–गीता–गौमाता का गौरवगान हो। भारत माता फिर जगद्गुरु के सिंहासन पर विराजमान हो। इस लक्ष्य को लेकर लाखों नवयुवक ग्राम–ग्राम, घर–घर जायें। संतों का आशीर्वाद मिले। भारत की दैवी संस्कृति का सूर्य फिर विश्व गगन पर प्रचण्ड रूप से प्रकाशमान हो। आज इसकी महती आवश्यकता है। इस प्रयास को राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा, आन्ध, तमिलनाडु, बिहार आदि २० प्रान्तों में भरपूर सहयोग मिल रहा है। गत् कुछ वर्षों में ३ लाख से अधिक विदेशी संस्कृति के जाल में फँसे व्यक्तियों ने सवेच्छा से पूर्वजों के मूलधर्म में प्रवेश किया है। देश के सभी प्रदेशों में अब एक नई चेतना का संचार हो रहा है। रक्तपात, युद्ध, दुःख–दैन्य से परिपूर्ण नारकीय जीवन से मुक्त होने के लिए आज कोटि–कोटि जनसमुदाय इस लोककल्याणकारी विश्व बन्धुत्व की विचारधारा के महान अक्षयवट की छाया में एकत्र होने लगा है। भविष्य उज्ज्वल है। **"कार्यं वा साध्यामि देहं वा पातयामि"** का संकल्प लेकर हम कल नहीं आज ही इस महान अनुष्ठान में जुट जायें। यही भारत की महान आत्माओं का आवाहन है।

□

विश्व का अद्वितीय एवं अनोखा संगठन

□ वीरेन्द्र कुमार 'वीरू'

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की संस्थापना, उसकी आर्थिक नीति एवं स्रोत, उसकी कार्यशैली, उसका अनुशासन, उसके स्वयंसेवकों में अपनी संस्था के प्रतिनिष्ठा और अपने नेतृत्व के प्रति विश्वास, उनकी सेवाभावना, उनकी आत्मीयता, उनकी राष्ट्र–भक्ति सभी कुछ तो अनोखा है।

संस्थापना

अधिकांश संस्थाओं से भिन्न राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की संस्थापना का विचार उसके संस्थापक डा० केशवराम बलिराम हेडगेवार के मस्तिष्क में किसी आकस्मिक घटना अथवा किसी प्रतिक्रिया के स्वरूप नहीं उपजा था, वरन् वह उनके शैशव काल से ही अंकुरित राष्ट्र–भक्ति की तीव्र राष्ट्रीय भावना का साकार तथा रचनात्मक प्रकटीकरण ही था। यही कारण है कि उसकी आवश्यकता और प्रासांगिकता आज भी उसी प्रकार अनुभव की जा रही है जैसी कि आज से ७५ वर्ष पूर्व की जाती थी। किसी घटना की प्रतिक्रियास्वरूप उपजे संगठन की प्रासांगिकता शनैः–शनैः समाप्त हो जाती है। चूँकि रा०स्व०संघ प्रतिक्रियाहीन सकारात्मक कालजयी संगठन है अतएव उसकी प्रासांगिकता आज भी पूर्ववत है।

संघ की पहली शाखा एवं विस्तार

प्रायः जहाँ अन्य संगठन जन्म लेते ही अखिल भारतीय बन जाते हैं यद्यपि उनमें से कितनों का तो किसी एक प्रदेश में भी सुदृढ़ आधार नहीं बन पाता है परन्तु संघ ने अपने को पहले एक स्थान पर सुदृढ़ बनाने के बाद ही दूसरे क्षेत्र में विस्तार की योजना बनाई और उसे अपने संस्कारित प्रशिक्षित तथा समर्पित कार्यकर्त्ताओं द्वारा कार्यान्वित किया। समर्पित कार्यकर्त्ता निर्माण कर उन्हें प्रशिक्षण देने के बाद अन्य स्थानों पर संघ की शाखाएँ खोलने के लिए भेजा जाता है।

संघ की पहली शाखा की स्थापना सन् १९२५ में विजयदशमी के दिन नागपुर में हुई। नागपुर के बाहर पहली शाखा वाराणसी में खोली गयी। संस्कारित एवं प्रशिक्षित कार्यकर्त्ता भैय्या जी दाणी को संघ की शाखा खोलने के उद्देश्य से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिये भेजा गया, यद्यपि नागपुर में भी उनके पढ़ने की सुविधा थी। भइया जी दाणी ने वहाँ पर संघ की शाखा खोली। अगले ५–७ साल में श्री भाऊराव देवरस, श्री वसंत राव ओक, श्री राजाभाऊ पातुरकर आदि अनेक तरुण उत्तर प्रदेश, दिल्ली, पंजाब में पढ़ाई करने के साथ–साथ संघ–कार्य करने के लिए भेजे गये। इस प्रकार से छात्रों को प्रचारक बनाकर दूसरे प्रान्तों में भेजना संघ की अनोखी शैली है।

मनोभावों पर संयम और कार्यकर्ता से सम्पर्क रखना

मानव स्वभाव की महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रत्येक संगठन में रहती है। मानव को अपने स्वाभाव को बदलना दुष्कर होता है। अतएव कभी–कभी, विशेष कर विषम परिस्थितियों में कार्यकर्त्ताओं के मनोभाव टकराते हैं और टकराने की आवाज भी सुनाई पड़ती है। कभी–कभी रा.स्व.संघ में कुछ–कुछ इसी प्रकार के अवसर आए हैं जब अनेक वरिष्ठ कार्यकर्त्ता भी उससे प्रभावित हुए और उन्होंने सक्रिय सहयोग करना बंद कर दिया। परन्तु संघ की यह विशेषता है कि वह अपने कार्यकर्त्ताओं को भूलता नहीं है। एक बार जो स्वयंसेवक बन गया उसका नाम सदा के लिए कार्यकर्ताओं की सूची में लिख जाता है। संघ 'रहीम' के कथन :

"टूटे स्वजन मनाइये, जो टूटे सौ बार।
रहिमन फिर–फिर पोइये टूटे मुक्ताहार।।"

का अनुयायी है और उस कथन को व्यवहार में उतारता है वह अपने संगठन को मुक्ताहार का रूप मानता है और अपने छिटक गये स्वयंसेवकों को बार–बार अथक परिश्रम करके संगठन रूपी माला की लड़ी में पिरोने का प्रयास करता है। जहाँ अन्य संगठनों से कार्यकर्त्ता दूर हटते रहते हैं, वहीं संघ में एक बार जुड़ने के बाद कार्यकर्त्ता उससे अलग नहीं हो पाता है।

संयम एवं अनुशासन की पराकाष्ठा

गांधी जी की हत्याकाण्ड के बाद कांग्रेसी संघ के कार्यालयों तथा निर्दोष स्वयंसेवकों के घरों पर हमले करके तोड़फोड़ तथा लूट–मर किया करते थे। सरसंघचालक श्री गुरु जी ने उन

उत्तेजक परिस्थितियों में भी निर्देश दिया कि "कुछ भी हानि हो रही हो पर प्रतिवाद के लिए हाथ न उठाना।" यद्यपि उस समय भी संघ के पास इतनी शक्ति थी कि वह दंगाइयों को लूट–पाट का मजा चखा सकते थे परन्तु फिर भी उन्होंने अनुशासित कार्यकर्ताओं की भाँति संयम रखा और अत्याचार सहन किया।

ध्यान देने योग्य है कि गांधी जी अपने अहिंसक आन्दोलनों में भी अपने कार्यकर्त्ताओं को संयम और अनुशासन में नहीं रख पाये। संघ का अनुशासन ही उसकी विशेषता है जो अन्य संगठनों से उसे अलग पहचान प्रदान करता है।

व्यक्ति निर्माण पर ध्यान केन्द्रित

संघ की यह प्रबल इच्छा रही है कि संघ का स्वयंसेवक जीवन के सभी क्षेत्रों में प्रवेश करे और अपने संस्कारयुक्त आचरण से राष्ट्र–जीवन के सभी क्षेत्रों में राष्ट्रोपकारी परिवर्तन लाकर राष्ट्र को परम वैभव पर पहुँचाए।

इस इच्छा की पूर्ति करने के लिए संघ ने संस्कारयुक्त व्यक्ति–निर्माण के कार्य पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है। संघ सर्वत्र प्रामाणिक, सुपात्र, कर्त्तव्य–दक्ष तथा त्यागी कार्यकर्त्ताओं की अखण्ड परम्परा निर्मित कर उनके द्वारा कार्य करता है जबकि अन्य संगठन समाज में उपलब्ध व्यक्तियों के द्वारा संगठन का कार्य करते हैं।

अन्य संगठन जहाँ, संगठन का निर्माण कर, उसकी शक्ति का लाभ अपने जीवन में उठाते हैं वहीं संघ के कार्यकर्ता व्यक्ति निर्माण में अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर, अगली पीढ़ी के लिए राष्ट्र को समर्पित त्यागी, बलिदानी एवं क्षमतायुक्त सुयोग्य कार्यकर्त्ताओं की द्वितीय पंक्ति खड़ी करने में लगे रहते हैं।

व्यक्ति निर्माण की अनोखी शैली

व्यक्ति का निर्माण केवल भाषण और उपदेश से नहीं होता है। भाषण और उपदेश देने वालों की इस देश में कमी संघ–स्थापना से पूर्व भी नहीं थी, कमी थी तो उन उपदेशों पर आचरण करने वालों की। संघ के कार्यकर्ता अपने भाषण से नहीं वरन् अपने दैनिक जीवन के आचरण से नवागन्तुक स्वयंसेवक को प्रभावित कर संस्कारों में ढालते हैं। संस्कारों में ढालने का साँचा दैनिक शाखा है जहाँ पर खेल–खेल कर, खेल–खेल में परस्पर सहयोग की भावना उपजती है। प्रतिदिन निश्चित समय पर शाखा जाने से समयबद्धता, भ्रातृत्व भावना, एक–दूसरे की चिन्ता, किसी का स्वास्थ्य खराब होने पर उसके घर जाकर उसका हाल–चाल लेना और हर संभव सहायता करना; उसके सुख–दुःख में भागीदार बनना, संघ का स्वयंसेवक दिन–प्रतिदिन की शाखा में ही सीखता है। शाखा में राष्ट्र–भक्ति से ओत–प्रोत गीतों के गायन से दृढ़ राष्ट्र–भक्ति की भावना जाग्रत होती है।

शाखा के चन्दन कार्यक्रमों (जलपान अथवा सह–भोजन) में जाति–पाँति का भेद–भाव संघ के स्वयंसेवकों के पास भी नहीं फटकता। उससे उनमें हिन्दुत्व, विश्व–बन्धुत्व और समरसता की भावना दृढ़ होती है, जिसे महात्मा गांधी जैसे आचरणशील नेता भी लाख प्रयास करने के बावजूद अपने संगठन में पनपा न सके। ये सभी गुण संघ की शाखा में खेल–खेल में सहज रूप से ढलकर संघ के स्वयंसेवक आत्मसात कर लेते हैं।

संघ की विशेषता

बहुत से स्वयंसेवक जिनका विदेशों में व्यापारिक संबंध था, १६४७ में देश–विभाजन के बाद विदेशों में जाकर बस गये। उन विषम परिस्थितियों में भी वे संस्कारित संघ के स्वयंसेवक न तो संघ को भूले और न हिन्दुत्व को। उन्होंने वहाँ पर भी भारतीय स्वयंसेवक संघ, हिन्दू स्वयंसेवक संघ, विश्व हिन्दू परिषद आदि संस्थाएँ स्थापित कीं और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य का विदेशों में भी विस्तार किया। संघ के प्रति उसके स्वयंसेवकों में इतनी निष्ठा होना संघ की ही विशेषता है जो अन्यत्र दृष्टिगोचर नहीं होती।

संघ का निधि–संग्रह भी अनोखा है

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अतिरिक्त जितनी भी संस्थाएँ है वह सभी अपनी संस्था के संचालनार्थ निधि संग्रह, सदस्यता शुल्क दान आदि के रूप में करती हैं। धन पूर्ति के लिए चन्दा एकत्रित करने की रीति प्रतिष्ठा प्राप्त भी है। परन्तु संघ को वह रीति मान्य नहीं है। संघ की सोच है कि जिस कार्य को हम उचित एवं आवश्यक समझते हैं उसके लिए हमें ही त्याग करके अपने पास का ही धन लगाकर संघ कार्य चलाना चाहिये और यह तरीका स्वयंसेवकों में सर्वस्व अर्पण की भावना भी जाग्रत करता है।

मात्र चन्दा देकर अपने योगदान को पूरा समझने वालों की आवश्यकता संघ को नहीं है। संघ ने निधि–संग्रह हेतु एक अनोखी शैली अपनायी है।

निश्चित तिथि और समय पर उस शाखा के सारे स्वयंसेवक एकत्र होते है और गुरु–दक्षिणा के रूप में धन–राशि भगवाध्वज को अर्पित करते हैं। स्वयंसेवक अपनी गुरुदक्षिणा को एक लिफाफे में रख कर अर्पित करता है जिससे अन्य स्वयंसेवकों को ज्ञान न हो कि किसने कितना धन अर्पित किया है और उसकी प्रतिक्रिया भी किसी पर न हो सके। यह गुरु–दक्षिणा पर्व प्रत्येक शाखा पर वर्ष में एक ही बार होता है। संघ ने किसी व्यक्ति को गुरु न मानकर भगवाध्वज को ही अपना मार्गदर्शक तथा गुरु माना है अतएव गुरु दक्षिणा उसी को अर्पित की जाती है।

संघ में वित्तीय अनुशासन भी अनुकरणीय है। गुरु दक्षिणा निधि में अर्पित एक–एक पैसे का हिसाब रखा जाता है और उसका सदुपयोग किया जाता है।

संघ का उद्देश्य सत्ता प्राप्त करना नहीं है जबकि अन्य संस्थाएँ शक्तिशाली बनने पर सत्ता के लिए लालायित हो उठती हैं। संघ की सोच है कि सत्ता में आने से शाखाओं की उपस्थिति तो अवश्य बढ़ जायेगी परन्तु वह संघ की सोच के स्वयंसेवकों की न होकर जी–हुजूरी करने वाले स्वार्थ–परायण लोगों की होगी और संघ यह नहीं चाहता।

स्वार्थी, कायर, जी–हूजूरों ने कभी इतिहास नहीं बनाया ओर वे यदि कोई इतिहास बनाते भी हैं तो वह अवनति का इतिहास ही होता है।

संघ अन्य संस्थाओं की लालसा के विपरीत सत्ता भोग की इच्छा न रखकर राष्ट्र को परमवैभव के स्थान पर स्थापित करने के उद्देश्य से समर्थ, गुणसम्पन्न, मनोहारी, चरित्रवान, प्रामाणिक, निर्भय, कर्त्तव्य–कठोर, त्यागी तथा विजिगीषु वृत्ति के लोगों की परम्परा निर्माण कर सम्पूर्ण समाज में इन्हीं गुणों को निर्मित करना चाहता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ मात्र भारत ही नहीं अपितु विश्व में एक अनोखी सोचवाला किन्तु व्यावहारिक और अद्वितीय संगठन है। □

अस्पृश्यता ढह गई

बार–बार अनुभव ने बताया है कि आडम्बरपूर्ण उपदेश या प्रचार नहीं वरन् शांत भाव से अनुरोधपूर्ण व्यवहार ही कोई वास्तविक परिवर्तन कर सकता है। कर्नाटक में गंगापुर 'दत्त उपासकों' का परम पावन तीर्थ है। वहाँ केवल रूढ़िवादिता का राज चलता है। मंदिर पर अनेक पंडों तथा पुजारियों का पूर्ण नियंत्रण है। शांत भाव से अथक प्रयास के पश्चात् ही अन्ततः वहाँ की हरिजन–बस्ती में एक शाखा प्रारम्भ की जा सकी। एक स्वयंसेवक ने, जो स्वयं मुख्य पुजारी का पुत्र था, नगर में अस्पृश्यता की दीवार तोड़ने का निश्चय किया। किन्तु जब वह पहली बार हरिजन–बस्ती में गया तो वहाँ के लोगों ने तुरन्त अपना मस्तक उसके चरणों में रखते हुए कहा, "कृपा करके लौट जाइए, अन्यथा आपके लोग हम पर आक्रमण कर देंगे।" स्वयंसेवक ने उन्हें आश्वासन दिया कि वैसा कुछ नहीं होगा और वह उनके घरों में गया। धीरे–धीरे संपर्क घने होते गये। उन झोपड़ी वालों को स्तब्ध करने वाला उनके जीवन का वास्तविक अनुभव तो उस समय हुआ जब उस स्थान पर एक प्रचारक–गोष्ठी का आयोजन किया गया। वे इस अनुरोध पर न तो विश्वास कर सके और न ही उसे स्वीकार कर पाये कि प्रचारकों को उनके घरों में भोजन कराया जाये। उन्हें बहुत समझा–बुझाकर बड़ी कठिनाई से आश्वस्त किया जा सका कि इससे उन्हें कोई पाप नहीं लगेगा और अतिथियों को भोजन कराना तो धर्म का कार्य है। किन्तु प्रचारकों के सहज तथा विनोदपूर्ण व्यवहार ने शीघ्र ही उन्हें सहज बना दिया और वे सच्चे भाईचारे तथा स्नेह की उस भावना का अनुभव करने लगे जिसे लेकर संघ के लोग उनके अति साधारण घरों पर गये थे। ऐसे अनेक सतत प्रयासों के बाद अब पुजारी वर्ग तथा हरिजन बिना संकोच तथा भेदभाव के आपस में मिलने–जुलने लगे हैं।

विद्या भारती

किसी भी देश में कैसे व्यक्ति निर्मित होंगे, यह वहाँ की शिक्षा–प्रणाली पर निर्भर होता है। भारत में मेकाले–प्रणीत शिक्षा–प्रणाली के स्थान पर अपनी प्राचीन संस्कृति से नाता जोड़ने वाली शिक्षा–प्रणाली होनी चाहिए, ऐसा सब लोग कहते हैं। संघ के स्वयंसेवकों की यह विशेषता है कि वे कैसा होना चाहिये, कैसा नहीं होना चाहिये, केवल इतना सोच कर ही रुकते नहीं, अपितु वैसा हो, ऐसी व्यवस्था भी करते हैं। इसी कारण आदर्श शिक्षा–प्रणाली का उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए १९५२ में उत्तर प्रदेश के गोरखपुर नगर में 'सरस्वती शिशु मन्दिर' नामक विद्यालय की स्थापना की गयी। धीरे–धीरे ऐसे विद्यालय उत्तर प्रदेश के अनेक स्थानों पर और बाद में अन्य प्रदेशों में भी प्रस्थापित होने लगे।

१९५८ में शिशु–मन्दिरों के मार्गदर्शन और समुचित विकास के लिए उत्तर प्रदेश में 'शिशु–शिक्षा प्रबन्ध–समिति' का गठन किया गया। बाद में अन्य प्रदेशों में भी इस प्रकार की समितियों का गठन हुआ।

उद्देश्य

जैसे–जैसे शिशु–मन्दिरों का विस्तार होने लगा, वैसे–वैसे सारे देश के कार्य को मार्गदर्शन देने के लिए एक अखिल भारतीय संस्था की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। अतः १९७७ में 'विद्या भारती' का गठन किया गया। उस समय १५ प्रान्तों में ६५० विद्यालय थे जिनमें ६५०० आचार्यों के मार्गदर्शन में सवा दो लाख भय्या–बहिन (बालक–बालिका) शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। विद्या भारती के उद्देश्य निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया गया है :

"हमारा लक्ष्य इस प्रकार की शिक्षा–प्रणाली का विकास करना है कि जिसके द्वारा ऐसी युवा पीढ़ी का निर्माण हो सके जो हिन्दुत्वनिष्ठ एवं राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत हो, शारीरिक, प्राणिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि से पूर्ण विकसित हो तथा जो जीवन की वर्तमान चुनौतियों का सामना सफलतापूर्वक कर सके और उसका जीवन ग्रामीण, वनवासी, गिरि–कन्दराओं एवं झुग्गी–झोपड़ियों में निवास करने वाले अपने दीन–दुःखी, अभाव–ग्रस्त बान्धवों को सामाजिक कुरीतियों, शोषण एवं अन्याय से मुक्त कराकर राष्ट्रजीवन को समरस, सुसम्पन्न एवं सुसंस्कृत बनाने के लिए समर्पित हो।"

वर्तमान स्थिति

वर्तमान में विद्या भारती द्वारा प्राथमिक से उच्चतर माध्यमिक स्तर तक के विद्यालयों के अतिरिक्त महाविद्यालय, प्रशिक्षण–विद्यालय और प्राविधिक (तकनीकी) प्रशिक्षण विद्यालय भी संचालित किये जाते हैं। इनके अतिरिक्त एकल शिक्षक विद्यालय योजना भी प्रारम्भ की गयी है। विद्या भारती द्वारा शिशु–वाटिका और संस्कार–केन्द्र भी चलाये जाते हैं। इन सब को मिलाकर इस समय लगभग १३ हजार शिक्षण–संस्थाएँ हैं जिनमें से आधी से अधिक संस्थाएँ ग्रामीण और वनवासी–पर्वतीय क्षेत्रों में हैं। आचार्यों की संख्या लगभग ७३ हजार है जिनके द्वारा १७ लाख से अधिक विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। विद्या भारती के पूर्णकालिकों की संख्या २०० से अधिक है। संपूर्ण देश में ६ क्षेत्र बनाये गये हैं जिनमें कुल ५५ समितियों द्वारा उपर्युक्त शिक्षा–संस्थाएँ चलायी जाती हैं। इस प्रकार विद्या भारती देश का सबसे बड़ा गैर सरकारी शिक्षा–संगठन है।

विद्या भारती ने शारीरिक शिक्षा, योग–शिक्षा, नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा, संस्कृत भाषा–शिक्षण तथा संगीत–शिक्षण, इन पाँच विषयों में प्राथमिक से उच्चतर माध्यमिक तक कक्षाओं के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम बनाये हैं। इनके माध्यम से छात्र की सर्वांगीण उन्नति का प्रयास किया जाता है। १९९५ से विद्यालयों में वैदिक गणित की भी शिक्षा दी जाती है।

आधुनिक गुरुकुल

विद्या भारती द्वारा इस समय कुल ६६ आवासीय विद्यालय चलाये जा रहे हैं जिनमें लगभग २४ हजार छात्र अध्ययनरत हैं। इनमें व्यवस्थित अध्ययन के अतिरिक्त प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में जागरण से रात्रि १० बजे तक आदर्श दिनचर्या के द्वारा उनके सर्वांगीण विकास का प्रयास किया जाता है। अतः इन्हें आधुनिक गुरुकुल माना जा सकता है।

कार्यक्रम आयोजन

विद्यालयों में सरस्वती–पूजा (वसंतपंचमी), गुरु–पूर्णिमा, गीता–जयंती, अखण्ड भारत स्मृति–दिवस इत्यादि के कार्यक्रम आयोजित किये

जाते हैं और मकर–संक्रमण के अवसर पर वनवासी बन्धुओं के लिए खिचड़ी संकलन द्वारा छात्रों के मन में उनके प्रति अपनत्व का भाव उत्पन्न किया जाता है।

खेलों के माध्यम से बड़े ही स्वाभाविक ढंग से छात्रों में अनेक गुणों का विकास किया जा सकता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए विद्या भारती विभिन्न स्तरों पर खेलकूद–प्रतियोगिताएँ आयोजित करती हे। १६८८ से अखिल भारतीय खेलकूद समारोह आयोजित किये जा रहे हैं।

विद्या भारती ने १६७८ में दिल्ली में 'शिशु–संगम' नाम से अखिल भारतीय शिशु–शिविर आयोजित किया जिसमें १६ हजार शिशुओं ने भाग लिया। इसके बाद अनेक प्रान्तों में हजारों की संख्या वाले शिशु–संगम हुए।

संस्कृति–ज्ञान परीक्षा

१६८० से विद्या भारती के कुरुक्षेत्र केन्द्र से संस्कृति–ज्ञान परीक्षा संचालित की जाती है। इसके माध्यम से छात्रों को भारतीय संस्कृति, धर्म, इतिहास, पर्वों, तीर्थस्थानों एवं महापुरुषों की जानकारी अत्यंत रोचक एवं सहज रूप से प्राप्त होती है। इस परीक्षा में विद्या भारती के अतिरिक्त अन्य विद्यालयों के छात्र तथा अन्य लोग भी सम्मिलित होते हैं। लाखों लोग इस योजना का लाभ उठा रहे हैं।

प्रश्नमंच

१६६० से विद्यालय से लेकर अखिल भारतीय स्तर तक प्रश्नमंच के कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। इनमें संस्कृति–ज्ञान–परीक्षा और रामायण–महाभारत की कथाओं पर आधारित प्रश्न पूछे जाते हैं।

आचार्यों की भूमिका

विद्यालयों में छात्रों को शिक्षित और संस्कारित करने का प्रत्यक्ष दायित्व आचार्यों का होता है। इस दृष्टि से आचार्यों को सुयोग्य बनाने के लिए विद्या भारती १० दिन से लेकर २ मास की अवधि तक के आचार्य–प्रशिक्षण वर्ग आयोजित करती है।

छात्रों की सर्वांगीण उन्नति में उनके परिवार की पृष्ठभूमि का ज्ञान अत्यंत सहायक होता है तथा अभिभावक–संपर्क योजना के अन्तर्गत सभी आचार्य छात्रों के परिवारों से सतत संपर्क बनाये रखते हैं।

आचार्यों द्वारा शिक्षण में नये–नये प्रयोग एवं शोध करने के लिए १६८० में लखनऊ में 'भारतीय शिक्षा शोध संस्थान' स्थापित किया गया है तथा अनेक स्थानों पर शोध–केन्द्र खोले गये हैं। शिक्षक–सहायता–सामग्री के रूप में श्रव्य स्फीति–मुद्रिकाएँ (audio cassettes) एवं दृश्य–श्रव्य स्फीति–मुद्रिकाएँ (video cassettes) भी विद्या भारती के 'शिक्षण–प्रविधि (तकनीक) विभाग' द्वारा तैयार की गयी हैं तथा इन का आगार (लाइब्रेरी) लखनऊ में है।

विद्वत्–परिषद्

विद्या भारती ने प्रादेशिक, क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर विद्वत्–परिषदें गठित की हैं जो इसमें परामर्श देने का कार्य करती हैं। देश के विख्यात शिक्षाविदों एवं शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को इन परिषदों में मानसेवी सदस्य के रूप में रखा जाता है। समय–समय पर इनकी गोष्ठियाँ एवं सम्मेलन आयोजित किये जाते हैं जिनके द्वारा विद्या भारती को परामर्श प्राप्त होता रहता है जिसके कारण कार्य को गति प्राप्त होती है।

शिशु–वाटिका

नगरीय क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालय में प्रवेश से पूर्व बालकों को ३ से ६ वर्ष की आयु में माण्टेसरी या किण्डरगार्टन या नर्सरी स्कूलों में भरती करने की पद्धति बन गयी है। विद्या भारती ने इन बालकों के लिए भारतीय संस्कृति और स्वदेशी परिवेश के अनुरूप शिशु–शिक्षा–पद्धति 'शिशु–वाटिका' का विकास किया है। इसमें अनौपचारिक पद्धति से पुस्तक–कापियों के बिना शिशुओं को अक्षर–ज्ञान, अंक–ज्ञान, इन्द्रिय–विकास, भाषा–कौशल, चित्रकला–हस्तकला, विज्ञान के अनुभव इत्यादि बातें सिखायी जाती हैं।

संस्कार–केन्द्र

विद्या भारती द्वारा देश में लगभग २ हजार संस्कार–केन्द्र चार प्रकार के क्षेत्रों में चलाये जा रहे हैं :

(१) नगरों में कान्वेंट या अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों के स्थानों पर इन केन्द्रों के माध्यम से बालक–बालिकाओं को भारतीय संस्कृति के संस्कार दिये जाते हैं। (२) नगरों की सामान्य बस्तियों में। (३) नगरों की झुग्गी बस्तियों में। (४) ग्रामीण क्षेत्रों में (५) वनवासी–क्षेत्रों में।

वनवासी–क्षेत्र

देश के पूर्वांचल में वनवासियों की १८२ जनजातियाँ हैं और उन सबकी अपनी भाषाएँ हैं। परन्तु उनकी कोई लिपि नहीं है। अंग्रेजी शासन के समय ईसाइयों ने इन भाषाओं को रोमन में लिपिबद्ध किया। अब विद्या भारती ने

इन बोलियों को देवनागरी लिपि प्रदान की है जिसका जनजातियों में स्वागत हो रहा है।

पूर्वांचल के सात राज्यों के मध्य में स्थित हाफलोंग नामक स्थान पर एक आवासीय विद्यालय की स्थापना १९८३ में की गयी। यह पूर्णतः निःशुल्क विद्यालय है और गुरुकुल पद्धति से चल रहा है। इसमें छात्रों को उनकी भाषा में ही शिक्षा दी जाती है। यहाँ के छात्र अपने परिवार और ग्रामों में हिन्दूभाव और राष्ट्रीयता के भाव जाग्रत करते हैं। डॉ० हेडगेवार–जन्मशताब्दी के समय १९८९ में यहाँ के छात्रों ने अपनी १८ जनजातीय भाषाओं में डॉक्टर जी की जीवनी का अनुवाद किया और विद्या भारती ने देवनागरी लिपि में इन पुस्तकों को छपवाया। उस समय तक इन भाषाओं में केवल बाइबिल ही छपी थी, वह भी रोमन लिपि में। इस प्रकार इन भाषाओं में देवनागरी में छपी प्रथम पुस्तक डॉक्टर जी की जीवनी है। इसका वनवासियों में बहुत स्वागत हुआ। हाफलोंग विद्यालय के समान कुछ और भी विद्यालय पूर्वांचल में प्रारम्भ हो चुके हैं।

प्रकाशन

विद्या भारती के विद्यालयों के लिए पाठ्यपुस्तकों का प्रकाशन मथुरा एवं कुरुक्षेत्र से होता है। वार्षिक पत्रिकाएँ स्थान–स्थान पर छपती हैं। नयी दिल्ली से छपने वाली त्रैमासिक पत्रिका 'विद्या भारती प्रदीपिका' में विद्या भारती की देशभर की गतिविधियाँ एवं शैक्षिक लेख छपते हैं। इन्दौर से छपनेवाला बाल–मासिक 'देवपुत्र' अपनी रोचक एवं संस्कारक्षम सामग्री के कारण अत्यन्त लोकप्रिय है। लखनऊ से 'भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका' छपती है जिसमें शिक्षण के क्षेत्र में होने वाले और हो सकने वाले प्रयोगों की जानकारी होती है। विद्या भारती ने 'जन्मदिवसोत्सव विधि' पर पुस्तक व गीत–स्फीति–मुद्रिकाएँ भी बनायी हैं।

□

क्रान्तिकारी हृदय

और श्रृंगेरी ने स्वयं एक क्रांतिकारी दृश्य देखा। अवसर था पर्वत–शिखर पर स्थित श्री मल्लिकार्जुन मंदिर के जीर्णोद्धार तथा कुंभाभिषेक का। स्वयं शंकराचार्य ने इस बारे में पहल की कि इस दुर्लभ अवसर के लिए उपयुक्त स्तर का समारोह सम्पन्न हो। उन्होंने मठ के विश्वासपात्र भक्त एक वरिष्ठ अधिवक्ता को बुलाकर उनसे कहा कि वे समारोह का भार अपने कंधों पर लें। आचार्य को पता था कि मँजे तथा तपे हुए संघ–कार्यकर्ता होने के कारण उनमें संगठन की अद्भुत क्षमता थी।

कार्यकर्ता ने उत्तर दिया कि वह साभार उनके आदेश को स्वीकार करेगा। फिर उसने बताया कि समारोह के लिए जन–सहयोग वह किस प्रकार जुटायेगा। उसने यह भी बताया कि जाति के किसी भेदभाव के बिना मठ में प्रसाद–वितरण समेत सभी कार्यक्रमों में मठ के सभी भक्तों के साथ समान व्यवहार किया जायेगा। आचार्य को पता था कि इस बारे में अधिवक्ता महोदय अडिग थे। किन्तु आचार्य को निजी आशंका थी कि संभव है कि मठ–भक्तों में से रूढ़िवादी वर्ग की प्रतिक्रिया प्रतिकूल हो। फिर भी अधिवक्ता ने स्वामी जी को आश्वासन दिया कि वह प्रयास करेगा कि वैसा कुछ भी न हो। उन्होंने योजना बनायी कि श्रृंगेरी के आसपास के सभी हिन्दुओं को समारोह के साथ जोड़ा जाये। उन सभी को न्यौता तथा निमंत्रण भेजा गया कि वे अपनी भेंट–पूजा लेकर समारोह में उपस्थित हों। अहा ! जनता के सभी वर्गों की कैसी अद्भुत प्रतिक्रिया थी। जलूस के रूप में अनाज, शाक–सब्जियों, नारियलों आदि से लदी बैलगाड़ियों की लम्बी–लम्बी पंक्तियाँ सभी दिशाओं से श्रृंगेरी में प्रवेश करने लगीं। इसे देखकर तो स्वामीजी अवाक रह गये। उन्हें असीम आनंद भी प्राप्त हुआ। नगरवासियों के लिए भी यह जीवन का अभूतपूर्व दृश्य था। और अधिक आश्चर्य की बात तो यह थी कि मठ के ठीक भीतर रूढ़िवादी वर्गों ने भी समग्र रूप से सामूहिक भोज में हरिजनों सहित अन्य सभी के साथ सम्मिलित होने में किसी प्रकार की घृणा अथवा द्वेष का प्रदर्शन नहीं किया।

मठ–कार्यक्रम में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ, समाचारपत्रों ने उसकी भूरि–भूरि प्रशंसा की। किन्तु बाह्य जगत् में कितने लोग यह जानते हैं कि यह सब उस मौन सामाजिक क्रांति का परिणाम है जो तीस वर्ष से भी अधिक समय से श्रृंगेरी में तथा उसके आसपास हो रही है ?

विश्व हिन्दू परिषद्

भारत तथा विदेशों में रहने वाले संपूर्ण हिन्दू समाज को एक सूत्र में आबद्ध करते हुए उसे शक्तिशाली बनाना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि तभी मानवता के कल्याण के लिए उपयुक्त हिन्दुत्व के सिद्धान्त विश्व में मान्यता प्राप्त कर सकेंगे। परन्तु ऐसा होने के लिए सर्वसामान्य हिन्दू जिन्हें मानता है ऐसे धर्माचार्यों का आशीर्वाद आवश्यक है। इसी दृष्टि से २६ अगस्त, १९६४ को जन्माष्टमी के शुभ अवसर पर प०पू० गुरुजी की प्रेरणा और मार्गदर्शन तथा स्व० शिवराम शंकर (दादासाहब) आप्टे के प्रयासों से मुम्बई के सन्दीपनि आश्रम में एक बैठक हुई। उसमें हिन्दुओं के समस्त मत, पन्थ एवं संप्रदायों के धर्माचार्य और प्रमुख महानुभाव उपस्थित हुए जिनमें पूज्य स्वामी चिन्मयानंद, शृंगेरी, द्वारिका, कामकोटि, ज्योतिर्मठ एवं गोवर्धन पीठ के पूज्य शंकराचार्य, जैन मुनि सुशील कुमार जी, मास्टर तारासिंह जी, पूज्य दलाई लामा, पूज्य सत्यमित्रानन्द जी, सद्गुरु प्रताप सिंह जी महाराज, सन्त तुकड़ोजी महाराज, भाई हनुमान प्रसाद जी पोद्दार, स्वामी शंकरानन्द जी, ज्ञानी भूपेन्द्र सिंह जी, सर सी.बी. रामस्वामी अय्यर के अतिरिक्त डा० कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी इत्यादि प्रमुख व्यक्ति थे। इन समस्त महानुभावों की उपस्थिति में विश्व हिन्दू परिषद् का गठन हुआ।

उद्देश्य

- विश्व भर के हिन्दुओं में क्षेत्र, मत, भाषा आदि के कारण उत्पन्न भेदों को मिटाकर उन्हें एक सुदृढ़ समाज के रूप में खड़ा करना।
- हिन्दुओं में धर्म और संस्कृति के प्रति निष्ठा और भक्ति उत्पन्न करना।
- हिन्दुओं के नैतिक और आध्यात्मिक जीवन–मूल्यों को सुरक्षा प्रदान करके उनका विकास करना।
- उपेक्षित वर्ग और शेष हिन्दू समाज में समरसता उत्पन्न करना।
- मानवता के कल्याण के लिए विश्व भर में हिन्दू समाज के सिद्धान्तों और व्यवहारों की युगानुकूल व्याख्या करना।

मान्यताएँ

- हिन्दू समाज में कोई वर्ग अस्पृश्य नहीं है।
- भिन्न–भिन्न उपासना–पद्धतियों को मानने वाले होने पर भी सभी हिन्दू इसी विशाल समाज के घटक हैं।
- धार्मिक केन्द्रों को केवल भक्ति, उपासना और पूजा के ही नहीं अपितु सेवा, सामाजिक प्रगति और शक्ति–केन्द्रों के रूप में विकसित किया जाय।
- भारत के जिन क्षेत्रों में हिन्दू अल्पसंख्या में आ चुके हैं अथवा आने वाले हैं, ऐसे क्षेत्रों में उत्पीड़ित बन्धुओं के प्रति पूरे विश्व का हिन्दू समाज भ्रातृत्व–भाव प्रकट करे।
- मतान्तरित बन्धुओं को परावर्तित करके उनका पुनर्वास किया जाय।

धर्माचार्यों और प्रमुख महानुभावों का मार्गदर्शन

विश्व हिन्दू परिषद् की स्थापना के पश्चात् १९६६ में कुंभ के शुभ अवसर पर प्रयागराज में प्रथम विश्व हिन्दू सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें २२ देशों के २५००० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें हिन्दुओं के समस्त प्रमुख संप्रदायों के आचार्य एक मंच पर विराजमान हुए। इससे समस्त हिन्दू समाज में एकात्मता की भावना बढ़ने में बहुत सहायता हुई। इस सम्मेलन में युगानुकूल संस्कार–विधि का निर्माण करने के लिए एक विद्वत् परिषद् का गठन किया गया।

१९६६ के प्रथम विश्व हिन्दू सम्मेलन के तत्काल पश्चात् केन्द्रीय मार्गदर्शक मण्डल की स्थापना हुई। इसमें सभी प्रमुख संप्रदायों के आचार्य और विचारक तथा दार्शनिक सम्मिलित थे और इसी के मार्गदर्शन में विश्व हिन्दू परिषद् का कार्य बढ़ता है। प्रथम केन्द्रीय मार्गदर्शक मण्डल में २५ वरिष्ठ धर्माचार्य थे। बाद में समय–समय पर इसका विस्तार किया गया और वर्तमान में इनकी संख्या २०० से अधिक है।

धर्म–संसद

विश्व हिन्दू परिषद् ने १९८४ में धर्म–संसद् का गठन किया। इसमें विभिन्न संप्रदायों के धर्माचार्यों, धर्मगुरुओं और सन्तों का समावेश होता है। साथ ही केन्द्रीय तथा प्रान्तीय मार्गदर्शक मण्डलों के सभी सदस्य भी इसमें सम्मिलित होते हैं। प्रथम धर्म–संसद् विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आयोजित की गयी जिसमें ७६ पन्थ–सम्प्रदायों के ५५८ धर्माचार्य और सन्त सम्मिलित हुए। इसके पश्चात् निम्नलिखित

धर्म–संसद् अधिवेशन हुए :

१९८५– उडुपी (कनार्टक) द्वितीय धर्म–संसद्।

१९८९–संगम–तट, प्रयागराज– तृतीय धर्म–संसद्।

१९९१– तालकटोरा स्टेडियम, नई दिल्ली– चतुर्थ धर्म–संसद्।

१९९२– केशवपुरम्, दिल्ली– पंचम धर्म–संसद्।

श्रीराम और श्रीकृष्ण–जन्मभूमि–मुक्ति तथा विश्वनाथ–मन्दिर का उद्धार, रामशिला–पूजन, शिलान्यास, कारसेवा इत्यादि से संबंधित निर्णय इन्हीं धर्मसंसदों ने लिए जिनके अनुसार विश्व हिन्दू परिषद् ने विभिन्न कार्यक्रम–अभियान हाथ में लिये। षष्ठ धर्म–संसद् एक स्थान पर न बुलाकर अंचलीय स्तर पर पाँच स्थानों पर १९९९ में बुलायी गयी। इनमें कुल मिलाकर लगभग ११००० संत–महात्मा उपस्थित हुए।

संगठनात्मक स्थिति

विश्व हिन्दू परिषद् में कार्य को धर्म–प्रसार, सेवा, गोरक्षण, पौरोहित्य और अर्चक, पर्व–समन्वय, विदेश–कार्य, संस्कृत, मठ–मन्दिर, प्रकाशन इत्यादि २९ विभागों में बाँटा गया है तथा अखिल भारतीय और प्रान्तीय स्तर पर इनके प्रमुख निर्धारित होते हैं। साथ ही युवक–युवतियों में कार्य की दृष्टि से बजरंग दल और दुर्गावाहिनी का गठन किया गया है।

वर्तमान में वि०हि०प० की इकाइयाँ कुल ७४० में से ६५० जिलों में और ७४५० में से ४००० प्रखण्डों में हैं। बजरंग दल और दुर्गा वाहिनी का गठन क्रमशः २७०० और ११०० स्थानों पर हो चुका है। वि०हि०प० में पूर्णकालिकों की संख्या वर्तमान में ११५० है।

वि०हि०प० का कार्य विदेशों में भी फैल चुका है। विश्व विभाग के कार्य को पाँच खण्डों में विभाजित किया गया है। वे हैं– (१) अमरीका, (२) यूरोप, (३) अफ्रीका तथा मध्य एशिया, (४) दक्षिण–पूर्व एशिया और (५) भारत से संलग्न देश।

वि०हि०प० का कार्य लगभग ७० देशों में है जिनमें से लगभग ३० में मासिक, पाक्षिक या साप्ताहिक बैठकें होती हैं। अन्य में वर्ष में १–२ कार्यक्रम होते हैं। अब तक अमरीका, इंग्लैण्ड, डेनमार्क, हालैण्ड, दक्षिण अफ्रीका, नेपाल, सिंगापुर, त्रिनीदाद इत्यादि देशों में विशाल हिन्दू सम्मेलन हो चुके हैं।

वि०हि०प० की ओर से प्रचुर मात्रा में हिन्दुत्व के प्रचार की सामग्री छपती है। साथ ही विविध भाषाओं में लगभग २० पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है।

सेवा–समरसता

वि०हि०प० की ओर से वंचित वर्ग के लोगों के बीच २००० से अधिक सेवा–प्रकल्प चलाये जाते हैं। १९९९ में कर्नाटक वि०हि०प० का प्रान्तीय सम्मेलन उडुपी में संपन्न हुआ। इसमें सभी पंथ–संप्रदायों के धर्माचार्यों ने स्पष्ट रूप से दो घोषणाएँ कीं– "हिन्दुत्वः सोदराः सर्वे" और "न हिन्दुः पतितो भवेत्"। इस कारण सामाजिक समरसता प्रस्थापित करने का कार्य सुगम हो गया। अनेक मठाधीश और धर्माचार्य सेवा–समरसता का सन्देश लेकर वंचित वर्ग के लोगों के बीच जाने लगे। इनके प्रयासों के कारण मुस्लिम या ईसाई बने हिन्दू बड़ी संख्या में फिर से हिन्दू बनने लगे हैं।

विशेष आयोजन

हिन्दू समाज में जनजागरण करने की दृष्टि से वि०हि०प० ने समय–समय पर विभिन्न स्थानों पर बड़े–बड़े हिन्दू सम्मेलन आयोजित किये हैं।

१९८१ में तमिलनाडु के मीनाक्षीपुरम् में जो सामूहिक मत–परिवर्तन हुआ उसके बाद वि०हि०प० ने हिन्दुओं में जागृति लाने के लिए देश भर में 'संस्कृति रक्षा अभियान' चलाया और हिन्दुत्व को शक्तिशाली बनाने के लिए निधिसंग्रह करके अक्षय कोष बनाया। इसके पश्चात् देश में हिन्दुत्व का ज्वार उभरना प्रारम्भ हुआ।

वि०हि०प० के अर्चक विभाग की ओर से मार्च १९९९ में तमिलनाडु में ग्रामपुजारियों का सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें हजारों की उपस्थिति रही। इनमें से अधिकांश ग्रामपुजारी अनुसूचित वर्ग से सम्बन्धित थे।

गोवंश–रक्षा एवं गोवंश–सेवा

विश्व हिन्दू परिषद् गोवंश–रक्षा का कार्य 'गोरक्षा आन्दोलन समिति' के माध्यम से करती है। स्थान–स्थान पर बजरंग दल के नौजवान गोरक्षण–वाहिनी बनाकर चौकसी रखते हैं और हत्या के लिए ले जायी जानेवाली गायों की रक्षा करते हैं। साथ ही यांत्रिक वधशालाओं (कत्लखानों) का प्रभावी विरोध किया जाता है। इस दृष्टि से आन्ध्र के अलकबीर कत्लखाने के विरुद्ध चलाया गया आन्दोलन उल्लेखनीय है। गोवंश–सेवा की दृष्टि से गोशालाएँ, उनके लिए चारा–घास–भण्डारण की व्यवस्था और गोशाला बनने तक अस्थायी गोरक्षण–केन्द्र–निर्माण इत्यादि कार्य किये जाते हैं।

एकात्मता–यात्राएँ

सारे भारत के हिन्दुओं में एकात्मता की भावना बढ़ाने के लिए

वि०हि०प० ने एकात्मता–यात्रा के दो अनूठे आयोजन किये हैं। १९८३ में प्रथम एकात्मता–यात्रा आयोजित की गयी। भारतमाता और गंगामाता की मूर्तियों के साथ तीन प्रमुख यात्राएँ और अनेक उपयात्राएँ निकलीं।

१९९५ में द्वितीय एकात्मता–यात्रा का आयोजन हुआ। इसमें भारतमाता, गंगामाता और गोमाता की मूर्तियों के साथ १० मुख्य यात्राएँ और अनेक उपयात्राएँ तथा लघु यात्राएँ थीं। इन दोनों यात्राओं के हजारों कार्यक्रमों में करोड़ों हिन्दू सम्मिलित हुए।

रामजन्मभूमि मुक्ति आन्दोलन

अप्रैल १९८४ में नयी दिल्ली में आयोजित प्रथम धर्म–संसद् ने अयोध्या की श्री राम–जन्मभूमि की मुक्ति का संकल्प लिया। सितम्बर–अक्टूबर १९८४ में उत्तर प्रदेश व बिहार में इस विषय पर जन जागृति करने के लिए श्री रामजानकी रथयात्राओं का आयोजन किया गया जिसमें लाखों लोगों ने भाग लिया।

अक्टूबर १९८५ में उडुपी में आयोजित द्वितीय धर्म–संसद् में निर्णय लिया गया कि यदि आगामी शिवरात्रि तक जन्मभूमि पर लगा अवैध ताला नहीं खोला गया तो सन्तगण गिरफ्तारी देंगे। १ फरवरी, १९८६ को न्यायालय के आदेश से ताला खुला। इसके बाद श्री राम–जन्मभूमि–मन्दिर पर निर्माण आदि के लिए श्री राम–जन्मभूमि–न्यास का गठन हुआ।

फरवरी, १९८९ में प्रयागराज में आयोजित तृतीय धर्म–संसद ने रामशिला–पूजन तथा श्रीराम–जन्मभूमि के शिलान्यास का निर्णय लिया। तदनुसार स्थान–स्थान पर रामशिलाओं का पूजन करके उन्हें अयोध्या भेजने का कार्यक्रम हाथ में लिया गया। इन्हीं रामशिलाओं से जन्मभूमि–मन्दिर का निर्माण होना है। देश के लगभग ३ लाख स्थानों पर रामशिला–पूजन हुआ जिसमें लगभग ११ करोड़ों लोगों ने भाग लिया। विश्व के अन्य २९ देशों से भी पूजित रामशिलाएँ आयीं।

समस्त बाधाओं को पार करते हुए निश्चित कार्यक्रम के अनुसार ९ नवम्बर, १९८९ को देवोत्थान एकादशी के शुभ अवसर पर भूमि–पूजन करके प्रस्तावित मंदिर के सिंहद्वार पर नींव खनन का कार्यक्रम संपन्न हुआ। १० नवम्बर, १९८९ को शिलान्यास का कार्यक्रम संपन्न हुआ और प्रथम शिला रखने का सम्मान प्राप्त हुआ बिहार के रामभक्त हरिजन युवक श्री कामेश्वर चौपाल को। सामाजिक समरसता की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कार्य सहजता से संपन्न हो गया।

जून १९९० में हरिद्वार में हुई मार्गदर्शक–मण्डल की बैठक के निर्णयानुसार १९९० की दीपावली के अवसर पर श्री राम–ज्योति कार्यक्रम और ३० अक्टूबर की कारसेवा के कार्यक्रम निर्धारित हुए। श्रीराम–शिलाएँ अनेक स्थानों से अयोध्या गयी थीं। अरणि–मन्थन द्वारा जाग्रत श्रीराम–ज्योति अयोध्या की ओर चल पड़े। समस्त बाधाओं को पार करते हुए वे अयोध्या पहुँचे और ३० अक्टूबर को कारसेवा करके जन्मभूमि पर भगवा ध्वज फहरा दिया। इस कारण २ नवम्बर को कारसेवकों पर गोलियाँ बरसायी गयीं जिनमें अनेक कारसेवक बलिदान हो गये। बाद में ४० दिन का सत्याग्रह किया गया जिसमें देशभर से आये लाखों लोगों ने गिरफ्तारी दी। राम जन्मभूमि पर मन्दिर–निर्माण की माँग को लेकर ४ अप्रैल, १९९१ को दिल्ली के बोट क्लब पर रामभक्तों का ऐतिहासिक प्रदर्शन हुआ जिसमें २५ लाख लोग सम्मिलित हुए। यह देश का अब तक का सबसे बड़ा प्रदर्शन है।

६ दिसम्बर, १९९२ को कारसेवा का आह्वान हुआ। समस्त प्रमाण दिये जाने के बाद भी मन्दिर–निर्माण की बात न स्वीकार करना, वचन देकर फिर जाना, जन्मभूमि आन्दोलन में फूट डालने का प्रयास करना इत्यादि कुटिल चालों के कारण कारसेवकों के धैर्य का प्याला भर चुका था। उसका विस्फोट ६ दिसम्बर को हुआ और संगठन की कोई योजना न होते हुए भी उन्होंने बाबरी ढाँचा ध्वस्त कर दिया।

विश्व धर्म सम्मेलन

विश्व के प्रायः समस्त राज्यों का संगठन कहे जाने वाले संयुक्त राष्ट्र संघ ने सितम्बर मास में संसार के सभी पंथों, सम्प्रदायों आदि के धर्माचार्यों का एक विश्व–धर्म सम्मेलन अमेरिका में बुलाया था। विश्व हिन्दू परिषद् के प्रयासों से भारतवर्ष से प्रायः ३०० से अधिक संतों–धर्माचार्यों का एक अत्यन्त प्रभावशाली प्रतिनिधिमंडल इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए गया था। इस विश्व धर्म सम्मेलन पर ईसाइयत के रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के लोग हावी थे तथा उन्होंने इसका प्रयोग ईसाइयत के पोपशाही कैथोलिक मत के प्रचार–प्रसार करने के प्रयास में किया। किन्तु उन्हें अपनी इस दुरभिसंधि में सफलता प्राप्त नहीं हो सकी और अन्य धर्मावलम्बियों के प्रवक्ताओं के साथ–साथ ईसाइयत के गैर रोमन कैथोलिक

आचार्यों ने भी उनके इस दावे को ठुकरा दिया कि "रोमन कैथोलिक संप्रदाय द्वारा बताए गए मार्ग से ही व्यक्ति को मुक्ति मिल सकती है तथा विश्व में शांति प्रस्थापित की जा सकती है।" वि०हि०प० के उद्देश्यों की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्व उपलब्धि है। इसके साथ ही इसी कालखंड के मध्य भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी की अमेरिका यात्रा के मध्य वहाँ के संसद भवन (कांग्रेस) में हिन्दू मंत्रों का उच्चारण किया जाना विश्व में हिन्दू जीवनादर्शों की बढ़ती हुई लोकप्रियता का परिचायक है। वि०हि०प० के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अशोक सिंहल भी इस भारतीय प्रतिनिधि मंडल में सम्मिलित थे।

इस प्रकार विश्व हिन्दू परिषद् ने समाज में हिन्दुत्व की भावना जगायी है। एकात्मता–समरसता के भाव को बढ़ाया है और जनजागरण के माध्यम से राष्ट्रीय मानविन्दुओं के संदर्भ में हिन्दुओं को आग्रही (Assertive) बनाने में सफलता प्राप्त की है। इस सम्मेलन से एक महत्त्वपूर्ण लाभ यह हुआ कि हिन्दू धर्म एवं बौद्ध मतावलंबी संतों में स्नेहपूर्ण संबंध प्रस्थापित होने का शुभारंभ हो सका है। □

(पृष्ठ ४६ का शेष)

संघ की अभूतपूर्व ...

संघ और अधिक प्रभावी होकर उभरा है। यह सभी देन संघ की इस अभूतपूर्व कार्यपद्धति की है जिसे अत्यन्त वैज्ञानिक ढंग से गठित किया गया है। आज देश में कोई भी संगठन संघ का मुकाबला नहीं कर सकता। जो संघ के प्रबल विरोधी थे अब उनके स्वर भी नक्कार–खाने में तूती की आवाज बनकर रह गये हैं।

छोटा मार्ग नहीं

दैनिक शाखा के अतिरिक्त समय–समय पर होने वाले अन्यान्य कार्यक्रम जैस नैपुण्य वर्ग, एकत्रीकरण, सम्मेलन, श्रेणीशः बैठकें, प्रशिक्षण वर्ग, उत्सव आदि कार्यक्रमों के माध्यम से अनुशासन, लोकसंग्रही जीवन, समर्पण व कर्त्तव्यपरायणता के भाव जाग्रत होते हैं। कभी–कभी लगता है कि संघ की उपर्युक्त कार्यपद्धति अत्यन्त कठिन है। परन्तु संघ के महान् लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कोई छोटा मार्ग– (शार्ट कट मैथड) हो भी नहीं सकता। हमारी प्रार्थना में संघ का लक्ष्य घोषित किया गया है। संघस्थान पर स्वयंसेवक नित्यप्रति इस लक्ष्य का स्मरण करते है और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सभी आवश्यक गुणों की याचना भी प्रभु से करते हैं। इन सारे गुणों का अपने अंदर संचय करते हुए ही स्वयंसेवक लक्ष्य को प्राप्त कर सकते है। परन्तु इसके लिए हमें अपने पद्धति का कदापि विस्मरण नहीं होना चाहिए। जितनी प्रखरता के साथ हम अपनी अभूतपूर्व गट पद्धति तथा गण–पद्धति को व्यावहारिक रूप देंगे लक्ष्य उतनी जल्दी ही प्राप्त हो सकेगा। संघ सम्पूर्ण हिन्दू समाज का संगठन है– समाज में संगठन नहीं है। इसे सर्वव्यापक तथा सर्वस्पर्शी स्वरूप देना है। इसलिए हमें सभी प्रकार के जाति–पाँति, वर्ण, वर्ग या क्षेत्र आदि के भेदभावों से ऊपर उठकर कार्य करना होगा। सभी हिन्दू भारतमाता की संतान हैं और सब एक हैं– इसी भाव को हृदयंगम करके ही हम संघ को सर्वव्यापी, सर्वस्पर्शी व सार्थक रूप प्रदान कर सकेंगे। आज संघ की प्रेरणा से विविध कार्य चल रहे है। सभी अपने–अपने क्षेत्रों में प्रखरता से यश प्राप्त कर रहे हैं। फिर भी आज अनेक चुनौतियाँ हमारे सामने हैं। ऐसा लगता है कि इस हिन्दू राष्ट्र को अगले कुछ वर्षों में कुछ कठिन संघर्ष भी करने पड़ सकते हैं। इन संकटों पर यदि विजय पाना है तो संघ के विचारों को दृढ़तापूर्वक हृदयंगम कर अडिग खड़े होना पड़ेगा।

लोक व्यवस्था

जब गट–पद्धति तथा गणपद्धति के माध्यम से 'व्यक्ति–निर्माण' हो जाता है तो फिर ऐसे कार्यकर्ताओं को उनकी योग्यता, क्षमता, रुचि तथा उपयोगिता के आधार पर विभिन्न दायित्वों से जोड़ा जाता है। यह चरण 'लोक–व्यवस्था' का होता है। संघ के विचारों और संस्कारों से युक्त स्वयंसेवकों को अनेकानेक क्षेत्रों, विविध कार्यों में समायोजित करना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। उचित व्यक्ति को उचित स्थान पर समायोजित करके उसके द्वारा अधिकाधिक कार्य कराना संगठन को अपेक्षित है। अतः 'लोक व्यवस्था' के महत्व को समझना भी अत्यन्त आवश्यक है। □

– एच. २/२३२, जानकीपुरम्

लोकतंत्र का रक्षक-संघ

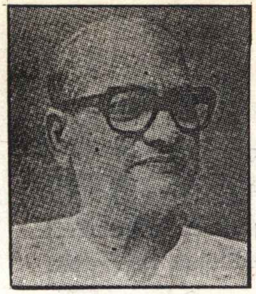

माधवराव मुल्ये
आपात्-संघर्ष के नेता

मँहगाई, भ्रष्टाचार और कुशिक्षा के विरुद्ध गुजरात से प्रारम्भ हुआ छात्र–आन्दोलन बिहार पहुँचा और फिर जयप्रकाश जी का नेतृत्व प्राप्त कर राष्ट्रव्यापी बन गया। भ्रष्टाचार के आरोपों में घिरी तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी, इस आन्दोलन को कुचलने में जुट गयीं। विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र में लोकतांत्रिक पद्धति से चुनी गयी प्रधानमंत्री ने लोकतंत्र के सभी स्तम्भ ध्वस्त कर दिये।

२५ जून, १९७५ से २१ मार्च १९७७ तक के काल में भारत के स्वातंत्र्य सूर्य को ग्रहण लगा था। आन्तरिक आपात्काल की जंजीरों में सम्पूर्ण देश को बाँध दिया गया था। लोकनायक जय प्रकाश सहित विपक्षी नेता–कार्यकर्ता सभी को कारागारों में बन्द कर, असहमति के स्वर को कुचल दिया गया। संविधान स्तब्ध और न्यायपालिका को प्रतिबद्ध तथा संसद को पंगु बना दिया गया। प्रचार माध्यम क्रूर सेन्सरशिप का शिकार हो गये। बलिदानों द्वारा अर्जित स्वतंत्रता और संविधान द्वारा प्रदत्त मानवाधिकार सब छीन लिये गये थे। नेतृत्व के अभाव में समाज किंकर्त्तव्यविमूढ़ था।

श्रीमती इन्दिरा गांधी के आक्रमण के प्रमुख छह मोर्चे थे :

१. विपक्ष की गतिविधियों को अचानक ठप कर देना।
२. आतंक का वातावरण तैयार कर देना जिससे कोई आगे आने का साहस न करे।
३. समाचार–पत्र व अन्य सभी प्रकार के सम्पर्क तथा जानकारी के सूत्रों को नियंत्रित करना।
४. प्रशासन, पुलिस और जनता को यह समझाना कि विपक्ष ने भारत विरोधी शक्तियों की सहायता से हिंसक षड्यंत्र रचा है, जिसे इन्दिरा जी ने कठोर पग उठाकर कुचल दिया।
५. जनता को अपने समर्थन में लाने के लिए जादुई कार्यक्रम सरकार लागू करेगी।
६. देशव्यापी प्रतिरोध नष्ट करने के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबन्ध लगा कर, उसके कैडर को छिन्न–भिन्न कर देना।

सबसे बड़ा शिकार संघ

लोकतंत्र पर हुए इस अभूतपूर्व हमले का सबसे बड़ा शिकार संघ हुआ क्योंकि अ.भा. विद्यार्थी परिषद्, भारतीय जनसंघ आदि संगठनों के कार्यकर्त्ताओं की जय प्रकाश आन्दोलन में प्रमुख भूमिका थी। राष्ट्रीय प्रश्नों पर संघ के स्वयंसेवक भी सक्रिय थे, अतः वे दमन के सर्वाधिक शिकार बने। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। पू० सरसंघचालक श्री बालासाहब देवरस सहित अनेकों प्रमुख कार्यकर्त्ता बन्दी बना लिये गए। कार्यालय जो सामान्यतः प्रचारकों के निवास भी होते है, बन्द करा दिये गये। लाखों पुस्तिकाएँ बाँट कर संघ के विरुद्ध मनगढ़ंत आरोप लगाये गये। स्थान–स्थान पर पुलिस द्वारा स्वयंसेवकों का शारीरिक उत्पीड़न किया गया।

संघ ने इस चुनौती को स्वीकार किया और उसके स्वयंसेवक सभी प्रकार से लोकतंत्र को तानाशाही के चंगुल से मुक्त कराने में जुट गये। भूमिगत आन्दोलन, प्रत्यक्ष सत्याग्रह, जेल में गये कार्यकर्ताओं की चिन्ता, उनके परिवारों का सहयोग, जन–जागरण हेतु साहित्य निर्माण, भूमिगत प्रकाशन वितरण, संगठन के तंत्र को बनाये रखने के लिए कार्यकर्ताओं की बैठकें, मिलन और सम्पर्क, इसके लिए अधिकारियों के दौरे, अवसर मिलने पर बड़े एकत्रीकरण आदि कार्यक्रम अपने हाथ में लिए। संसद और विधान सभाओं के साथ ही न्यायालय के द्वारा भी आपात्काल का विरोध किया। अनेकों साहित्यिक सार्वजनिक मंचों का उपयोग किया गया।

संघ ने योजनापूर्वक समाज के निष्पक्ष बुद्धिजीवियों और अन्य दलों तथा विचारधाराओं के व्यक्तियों को एक साथ लाकर खड़ा कर दिया। अपने–अपने संगठन की बड़ाई करने वालों के सम्मुख संघ का आदर्श रखा। सबसे बड़ा संगठन तंत्र और सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका होने पर भी संघ ने सभी कार्यक्रम लोकनायक जयप्रकाश जी द्वारा घोषित 'लोक संघर्ष समिति' और 'छात्र युवा संघर्ष समिति' के नाम से ही किये।

विदेशों में भी प्रतिरोध

भारत के बाहर भी लोकतंत्र की हत्या के विरुद्ध जनमत निर्माण करने के लिए प्रयास हुआ। वहाँ भी गोष्ठी, सम्मेलन, साहित्य के माध्यम से प्रचार किया गया। कई प्रमुख कार्यकर्त्ता भारत से बाहर जाकर इस कार्य में लगे। फ्रेन्डस ऑफ इण्डिया सोसायटी और भारतीय स्वयंसेवक संघ आदि संगठनों

की भूमिका महत्वपूर्ण थी।

सरकारी अत्याचारों के शिकार निरपराध नागरिक बने। कुख्यात आन्तरिक सुरक्षा अधिनियम (मीसा) के अन्तर्गत २५ हजार से भी अधिक व्यक्ति बन्दी बनाये गये जिन पर मुकदमा भी नहीं चलाया गया। इनके अतिरिक्त एक लाख से अधिक वे थे, जिन्होंने स्वयं सत्याग्रह करके गिरफ्तारी दी थी। इन सवा लाख वीरव्रतियों में १० हजार से अधिक पुलिस की अमानुषिक शारीरिक प्रताड़ना के शिकार बने। इनमें सभी आयु वर्ग, व्यवसाय, सामाजिक स्तर के स्त्री–पुरुष और बच्चे भी शामिल थे।

संघ द्वारा प्रतिरोध

इस दमन और अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष के कालखण्ड में लोकसंघर्ष समिति के महामंत्री श्री नाना जी देशमुख और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह श्री माधव राव मुल्ये का सर्वमान्य नेतृत्व था। उस समय देश में संघ के १३५६ पूर्णकालिक संगठन कर्ता (प्रचारक) थे, जिसमें से अन्त तक १८६ पकड़े गये। शेष सब भूमिगत आन्दोलन की रीढ़ बने हुए थे। तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने देश भर के पुलिस महानिरीक्षकों के सम्मेलन में अपना आक्रोश प्रकट करते हुए कहा : **"आर.एस.एस. के १० प्रतिशत कार्यकर्ता भी पकड़े नहीं जा सके है। वे भूमिगत हो गये हैं। प्रतिबन्ध लगने पर भी संघ विश्रृंखलित नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त केरल के समान नये–नये क्षेत्रों में वह जड़ें जमा रहा है।"**

'दि इंडियन रिव्यु' के सम्पादक एम.सी. सुब्रह्मण्यम् ने लिखा– "जिन लोगों ने आपात्काल के दौरान संघर्ष को वीरतापूर्वक जारी रखा, उनमें राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लोगों का विशेष उल्लेख करना आवश्यक है। सत्याग्रह का सफल संचालन करके सम्पूर्ण देश भर में सम्पर्क–सूत्र कायम रखकर आन्दोलन के लिए धन की व्यवस्था कर गुप्त साहित्य का बिना किसी अवरोध के वितरण की व्यवस्था जमाकर तथा बिना भेदभाव के सभी बंदियों तथा उनके परिवारों को सहायता जारी रखकर उन्होंने सिद्ध कर दिया कि वे सचमुच में स्वामी विवेकानन्द ने देश के सामाजिक और राजनीतिक कार्य के लिए संन्यासियों की जिस सेना की कल्पना की थी, उसके वे निकटतम उत्तर हैं। उन्होंने अपने व्यवहार से न केवल अपने राजनीतिक सहयोगी कार्यकर्ताओं की प्रशंसा प्राप्त की है, वरन् कभी जो उनके राजनीतिक विरोधी थे, उनसे भी आदर प्राप्त किया है।"

प्रसिद्ध पत्रकार श्री दीनानाथ मिश्र ने लिखा– "भूमिगत आन्दोलन किसी न किसी विदेशी सरकार की मदद से चलते हैं, पर भारत का यह भूमिगत आन्दोलन सिर्फ स्वदेशी शक्ति, साधन और प्रेरणा से चलता रहा। मानवीय शक्ति और समर्थन के पैमाने पर भारत का यह भूमिगत आन्दोलन दुनिया का सबसे बड़ा भूमिगत आन्दोलन था।"

लोकतांत्रिक शक्तियों को एक किया

जनवरी १९७७ में अन्तर्राष्ट्रीय दबाव के चलते जब इन्दिरा जी ने चुनाव की घोषणा की तो केवल भूमिगत आन्दोलन और सत्याग्रह ही नहीं लोकतंत्र की रक्षा के लिए लोकतांत्रिक शक्तियों को एकजुट करने का कार्य भी संघ के स्वयंसेवकों ने किया।

श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी और प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया) के प्रयास रंग लाये। चार बड़े राजनीतिक दल एक जुट, एक दल जनता पार्टी के रूप में चुनाव में उतरने को तैयार हो सके।

इसके बाद भी जनता पार्टी आशंकित थी। उस भीषण उत्तरदायित्व को भी संघ ने वहन किया। ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित, प्रतिष्ठित साहित्यकार डा० शिवराम कारंत ने कहा : "यह संदेश सामान्य जनता तक कौन पहुँचायेगा, यह मेरी सबसे बड़ी चिन्ता थी। मेरी इस चिन्ता को दूर किया संघ के कार्यकर्ताओं ने। इसके पहले भी आपात्स्थिति के विरुद्ध संघर्ष की जिम्मेवारियाँ सँभालने वाले और लोक जागृति करने वालों में ८० प्रतिशत लोग संघ के ही थे। इस प्रकार अपने लिए किसी प्रकार की कोई अपेक्षा न करते हुए ध्येय के लिए सब प्रकार से कष्ट उठाने वाले ऐसे हजारों युवकों को मैंने देखा है।"

संघ के लाखों स्वयंसेवकों के अनवरत प्रयास से देश का माहौल बदलने लगा। हाथ से बाजी जाती देख कर प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने संघ के नेतृत्व से समझौते का प्रयास किया। उन्होंने संदेश भेजा कि "संघ से प्रतिबन्ध हटा कर सभी एक लाख से अधिक स्वयंसेवकों को जेलों से मुक्त किया जा सकता है, यदि संघ इस आन्दोलन से अलग हो जाये।" संघ ने आपात्काल हटाकर लोकतंत्र बहाली से कम कुछ भी स्वीकार नहीं किया।

लाखों स्वयंसेवकों और उनके परिवारों, सहयोगियों के संबल से आपात्काल में कुचली सतायी जनता ने अपना आक्रोश व्यक्त किया। चुनावों में इन्दिरा जी और कांग्रेस पार्टी के साथ ही आपात्काल में उनको समर्थन

दे रही कम्युनिस्ट पार्टी बुरी तरह से हारी। यहाँ तक कि स्वयं श्रीमती इंदिरा गांधी और उनके पुत्र संजय गांधी भी चुनाव हार गए। जनता पार्टी की विजय ने इस देश को फिर लोकतंत्र लौटा दिया।

जेलों में बन्दी नेता छूट कर सांसद और मंत्री बनने की होड़ में लगे थे। परन्तु २२ मार्च १९४७ को संघ से प्रतिबन्ध हटते ही स्वयंसेवक यश पद की होड़ में न पड़कर अपने–अपने संघ स्थान पर शाखा में पहुँच गये। सरसंघचालक श्री बालासाहब देवरस ने इसका उल्लेख करते हुए कहा : **"जब मैं शाम को बम्बई पहुँचा, तब मुझे पता लगा कि आज बम्बई में शाखा लगी, प्रार्थना हुई। लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। बीस मास तक इनको धर दबाया, जेल में ठूँसा, सब प्रकार के अत्याचार किये। लेकिन ये अजब ही लोग हैं। दोपहर को प्रतिबन्ध हटता है और शाम को उनकी शाखा भी लगती है।"**

क्योंकि स्वयंसेवक की प्रेरणा सत्ता नहीं थी। लोकतंत्र पर आया संकट हटते ही, वह फिर अपनी शाखा पर पहुँच गया, क्योंकि उसकी तो प्रेरणा है :

"तेरा वैभव अमर रहे माँ,
हम दिन चार रहें न रहें।" □

स्वयंसेवक के संबंध में चर्चा

दिनांक २६ दिसम्बर, १९३४ को वर्धा में श्री जमनालाल बजाज के निवास पर रात्रि ८.३० से ९.३० तक संघ–संस्थापक डॉ. हेडगेवार तथा महात्मा गांधी की भेंटवार्ता में स्वयंसेवक शब्द के अर्थ एवं भावना पर निम्न चर्चा हुई :

महात्मा जी : डॉक्टर ! आपका संगठन अच्छा है। मुझे पता चला है कि आप बहुत दिनों तक कांग्रेस में काम करते थे। फिर कांग्रेस जैसी लोकप्रिय संस्था के अन्दर ही इस प्रकार का स्वयंसेवक संगठन क्यों नहीं चलाया ? बिना कारण ही अलग संगठन क्यों बनाया ?

डाक्टरजी : मैंने पहले कांग्रेस में ही यह कार्य प्रारम्भ किया था। १९२० की नागपुर कांग्रेस में मैं स्वयंसेवक–विभाग का कार्यवाह था तथा मेरे मित्र डॉ. परांजपे अध्यक्ष थे। इसके बाद हम दोनों ने इस बात के लिए प्रयत्न किया कि कांग्रेस में ऐसा संगठन हो। किन्तु सफलता नहीं मिली। अतः यह स्वतंत्र प्रयत्न किया है।

महात्माजी : कांग्रेस में आपके प्रयत्न सफल क्यों नहीं हुए ? क्या पर्याप्त आर्थिक सहायता नहीं मिली ?

डाक्टरजी : नहीं, नहीं पैसे की कोई कठिनाई नहीं थी। पैसे से अनेक बातें सुकर हो सकती हैं किन्तु पैसे के भरोसे ही संसार में कोई बात सफल नहीं हो सकती। यहाँ तो प्रश्न पैसे का नहीं, अन्तःकरण का है।

महात्माजी : क्या आपका यह कहना है कि उदात्त अन्तःकरण के व्यक्ति कांग्रेस में नहीं थे अथवा नहीं हैं ?

डॉक्टरजी : मेरे कहने का यह अभिप्राय नहीं है। कांग्रेस में अनेक अच्छे व्यक्ति हैं। किन्तु प्रश्न तो मनोवृत्ति का है। कांग्रेस की मनोरचना एक राजनीतिक कार्य को सफल करने की दृष्टि से हुई है। कांग्रेस के कार्यक्रम इस बात को ध्यान में रखकर ही बनाये जाते हैं तथा उन कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए उसे स्वयंसेवकों की आवश्यकता होती है। स्वयंप्रेरणा से कार्य करने वालों के बलशाली संगठन से सभी समस्याएँ हल हो सकेंगी इस पर कांग्रेस का विश्वास नहीं है। कांग्रेस के लोगों की धारणा तो स्वयंसेवक के संबंध में सभा–परिषदों में बिना पैसे के मेज–कुर्सी उठाने वाले मजदूर की है। इस धारणा से राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति करनेवाले स्वयंस्फूर्त कार्यकर्ता कैसे उत्पन्न हो सकेंगे ? इसलिए कांग्रेस में कार्य नहीं हो सका।

महात्माजी : फिर स्वयंसेवक के विषय में आपकी क्या कल्पना है ?

डाक्टरजी : देश की सर्वांगीण उन्नति के लिए आत्मीयता से अपना सार–सर्वस्व अर्पण करने के लिए सिद्ध नेता को हम स्वयंसेवक समझते हैं तथा संघ का लक्ष्य इस प्रकार के स्वयंसेवकों के निर्माण का है। इस संगठन में स्वयंसेवक और नेता में यह भेद नहीं है। हम सभी स्वयंसेवक हैं यह जानकर ही हम एक–दूसरे को समान समझते हैं तथा सबसे समान रूप से प्रेम करते हैं। हम किसी प्रकार के भेद को प्रश्रय नहीं देते। ... वार्ता जारी रही ...।

संघ और राजनीति

□ डॉ. दिलीप अग्निहोत्री

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना करने से पूर्व डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और हिन्दू महासभा के माध्यम से सक्रिय राजनीति में थे। देश को ब्रिटिश दासता से मुक्त कराने के अभियान में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। स्वतंत्रता प्राप्त करने संबंधी मान्यता और कटिबद्धता तो उनकी हमेशा रही लेकिन उन्हें यह विश्वास भी हो गया था कि देश की अनेक समस्याओं का समाधान केवल राजनीतिक मार्ग का अनुसरण करके नहीं किया जा सकता। समाज, धर्म, संस्कृति के प्रति हीन भावना हमारे पतन का कारण थी अतः इन क्षेत्रों में भी जागृति लाना आवश्यक है। यद्यपि सर्वांगीण विकास का एक अंग राजनीति भी है अतः इसकी भी अवहेलना नहीं की जा सकती। इसी आधार पर यह तय हुआ कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपने को सामाजिक–सांस्कृतिक गतिविधियों तक सीमित रखेगा, जबकि देश की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयंसेवक राजनीतिक क्षेत्र में भी अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करने के प्रति उदासीन नहीं रहेगा। इसी दृष्टिकोण का परिणाम है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपने घोषित लक्ष्य की ओर अग्रसर है। यह पूरी तरह सामाजिक-सांस्कृतिक संगठन है। जबकि स्वयंसेवक राजनीति के क्षेत्र में अपने दायित्वों को पूरा करते हुए देश का प्रधानमंत्री भी बन सकता है।

व्यक्ति–निर्माण

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का लक्ष्य देश को पुनः परम वैभव के पद पर आसीन कराना है। इसके लिए 'व्यक्ति निर्माण' का प्रयास किया जा रहा है। ऐसा संस्कारित मानव जिसे अपनी मातृभूमि, धर्म, संस्कृति पर गर्व हो, और वह हमेशा इसी स्वाभिमान के अनुरूप कार्य करे। ब्रिटिश काल में अंग्रेजों की परेशानी का एक बड़ा कारण यह भी था। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ राजनीति में भागीदार न होते हुए भी अंग्रेजों के लिए परेशानी का कारण बना हुआ था।

गांधी जी की हत्या से शिक्षा

स्वतंत्रता के बाद भी ऐसे अवसर आए जब संघ के स्वयंसेवकों को बिना किसी अपराध के प्रताड़ना झेलनी पड़ी। गांधीजी की हत्या के बाद संघ पर प्रतिबंध लगा और बड़ी संख्या में स्वयंसेवकों को जेलों में बन्द किया गया। ऐसे अवसरों के लिए यह आवश्यक था कि राजनीतिक क्षेत्र में भी संघ के दृष्टिकोण को रखने का प्रयास किया जाता। इसीलिए भारतीय जनसंघ की स्थापना हुई। इसे मजबूत बनाने में संघ के स्वयंसेवकों ने अपना योगदान किया लेकिन संघ दलीय राजनीति से अलिप्त रहा। जनसंघ के संस्थानक डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी के बलिदान के बाद भी संघ ने राजनीति में प्रवेश नहीं किया और वह व्यक्ति–निर्माण के अपने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रचनात्मक कार्य में लगा रहा।

राजनीति के संबंध में दृष्टिकोण

राजनीति में भागीगारी के संबंध में संघ का दृष्टिकोण पूरी तरह स्पष्ट है कि उसके स्वयंसेवक किसी भी ऐसे राजनीतिक दल की गतिविधियों में भागीदार बन सकते हैं जो राष्ट्रवादी हो तथा जिनका हिंसा में विश्वास न हो। इससे दो बातें स्पष्ट हैं कि संघ के लिए देशहित सर्वोच्च है और उसका साधन की पवित्रता में विश्वास है।

संघ का योगदान

अपनी इस राष्ट्रवादी सोच के आधार पर ही संघ के स्वयंसेवकों ने १९५२–५३ के कालखंड में जम्मू–कश्मीर की प्रजा परिषद्, तथा जनसंघ के संस्थापक डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी के कश्मीर अभियान में उनकी पूर्ण सहायता की किन्तु संगठन के रूप में संघ उक्त आंदोलन में प्रत्यक्ष शामिल नहीं हुआ। यह तथ्य सर्वविदित है कि अक्तूबर, १९४७ में जम्मू–कश्मीर रियासत का विलय भारतीय संघ में कराने के लिए तत्कालीन सरसंघचालक श्री गुरुजी ने गृहमंत्री सरदार पटेल के अनुरोध पर महाराजा हरिसिंह से १८ अक्तूबर, १९४७ को भेंट कर उन्हें इसके लिए सहमत किया था। भारत का अविभाज्य अंग बनाने वाले कश्मीर आन्दोलन में स्वयंसेवकों की सक्रियता होनी स्वाभाविक थी। इसी प्रकार दादरा–नागर हवेली को स्वतंत्र कराने तथा गोवा मुक्ति आन्दोलन में संघ स्वयंसेवकों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। स्वयंसेवकों की इस सक्रियता के कारण ही भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों के गर्हित मंसूबे सफल नहीं हो सके हैं और वहाँ के हिन्दू समाज में अद्भुत राष्ट्रीय जागरण उत्पन्न हुआ है। उसी का परिणाम है कि अब असम में भी बंगलादेशी घुसपैठियों को निकाल बाहर करने का दबाव बढ़ता जा रहा है।

आपातकाल और संघ

१६७५–७७ के आपात्काल में स्वयंसेवकों ने राजनीतिक क्षेत्र में अपने दायित्व का बखूबी निर्वाह किया। उस समय विपक्ष के सभी बड़े नेता जेलों में बन्द थे। कहीं से भी कोई राजनीतिक विरोध की गतिविधियाँ संचालित करना संभव नहीं था। ऐसे में स्वयंसेवकों ने ही सशक्त प्रतिरोध आन्दोलन के लिए लोगों को जाग्रत एवं संगठित किया। इसके परिणामस्वरूप निरंकुश शक्ति को सत्ता से बेदखल होना पड़ा और देश में लोकतंत्र की स्थापना पुनः संभव हो सकी। केरल के वरिष्ठ मार्क्सवादी नेता ए.के. गोपालन को भी कहना पड़ा कि "रा. स्व. संघ में अवश्य ऐसी कोई बात है जो जीवन–मूल्यों के लिए संघर्ष तथा बलिदान के लिए नवयुवकों (स्वयंसेवकों) को प्रेरणा देती है।"

यद्यपि जून १६७५ से मार्च १६७७ तक देश में लागू रहे कुख्यात आपात्काल के विरुद्ध संघ ने जबर्दस्त संघर्ष किया था और अपने जीवन–काल में प्रथम बार उद्घोषित रूप से उसने राजनीतिक क्षेत्र में अपनी सक्रियता दिखाई थी, फिर भी यह स्थिति एक अपवाद थी। इसी कारण उसने आपात्काल के विरुद्ध यदि यह संघर्ष लोकनायक जयप्रकाश नारायण की लोक संघर्ष समिति के अन्तर्गत किया तो मार्च, १६७७ के चुनाव में उसने कुख्यात आपात्काल को नष्ट करने के लिए गठित जनता पार्टी के उम्मीदवारों को विजयी बनाने में अपनी संपूर्ण संगठन शक्ति का उपयोग किया। यहाँ तक कि जब इस संघर्ष–काल के दौरान संघ की कार्यक्षमता से भयभीत होकर तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने संघ–अधिकारियों को यह संदेश भेजा कि उस पर से अविलम्ब प्रतिबंध हटाया जा सकता है बशर्ते संघ अपने– आपको इस संघर्ष से अलग कर ले। किन्तु संघ ने उक्त प्रस्ताव को तुरन्त ठुकरा दिया क्योंकि उसके लिए राष्ट्रहित ही सर्वोपरि था, संगठन–हित नहीं।

फिर भी संघ का नेतृत्व अपनी आधारभूत भूमिका को भूला नहीं था। यही कारण है कि मार्च १६७७ के चुनाव में आपात्काल समर्थक फासिस्ट–वादी कांग्रेस नेतृत्व तथा कम्युनिस्टों की संघ तक पराजय होने के उपरान्त संघ राजनीतिक गतिविधियों से अलग होकर राष्ट्र–निर्माण के अपने कार्य में संलग्न हो गया।

उँधर जनता पार्टी के माध्यम से राजनीतिक क्षेत्र में कार्य करने वाले संघ के स्वयंसेवकों ने जब यह देखा कि वहाँ उनके मूल से ही विलग करने की षड्यंत्रकारी गर्हित राजनीति की जा रही है, तब संघ के स्वयंसेवक जनता पार्टी से अलग हो गए और उन्होंने अप्रैल १६८० में भारतीय जनता पार्टी का गठन कर लिया।

गुणात्मक परिवर्तन

संघ स्वयंसेवकों के इन भगीरथी प्रयासों का ही यह परिणाम है कि पिछले कुछ वर्षों में भारतीय राजनीति में गुणात्मक परिवर्तन हुआ है और अब हिन्दुत्ववादी अवधारणा को राजनीतिक क्षेत्र में अस्पृश्य नहीं समझा जाता। उल्टे इसी सकारात्मक संकल्पना के आधार पर आज भारतीय जनता पार्टी देश का सबसे बड़ा एवं प्रभावशाली राजनीतिक दल बनकर केन्द्रीय सरकार का नेतृत्व कर रहा है और अन्तर्राष्ट्रीय जगत में उसने भारत की प्रतिष्ठा में महत्वपूर्ण अभिवृद्धि की है। संक्षेप में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अब देश के राष्ट्रीय जीवन का केन्द्र–बिन्दु बन गया है। □

जब संघ ने दरबार साहब की रक्षा की

३ मार्च १६४७ को होली से एक दिन पूर्व जब अमृतसर के बहुत से हिन्दू–सिख आनन्दपुर साहब में इस अवसर पर आयोजित होने वाले होला मोहल्ला के पर्व पर गये हुए थे, मास्टर तारासिंह सहित गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी के सब नेता भी आनन्दपुर साहब में थे। दोपहर में एक बजे शहर में दंगा शुरू हो गया। ३ बजे हजारों मुसलमान चौक बाबा फरीद पर स्वर्ण मन्दिर (दरबार साहब) पर आक्रमण के लिए एकत्र हुए। उस समय १० बल्लमधारी सेवादारों के अतिरिक्त लगभग १०० लोग ही दरबार साहब में उपस्थित थे। सभी में सुरक्षा को लेकर चिन्ता थी।

इसी समय गणवेषधारी स्वयंसेवकों की टोलियाँ एकत्र होने लगी। लाठियों के अतिरिक्त कुछ कृपाण और दो बन्दूकधारी भी उनके साथ थे। उन्होंने पूरे क्षेत्र की मोर्चाबन्दी कर ली। स्वयंसेवकों ने कहा– "चिन्ता न करें, सभी ओर संघ के कार्यकर्ता तैयार खड़े हैं। उनकी लाशों पर होकर ही उपद्रवी दरबार साहब में प्रवेश कर सकेंगे।"

रात्रि में ८ बजे तक आस–पास के गाँवों से हिन्दू–सिख स्वर्ण मन्दिर की रक्षा के लिए पहुँचने प्रारम्भ हो गये। परन्तु प्रारम्भिक ६ घंटों तक उपद्रवियों को स्वयंसेवकों ने अपना जीवन संकट में डाल कर रोके रखा। इससे अपने श्रद्धा केन्द्र की रक्षा संभव हो सकी। □

संघ और प्रचार माध्यम

□ सर्वेश कुमार सिंह

ब्यूरो प्रमुख 'पाञ्चजन्य' उ०प्र०

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने सूचना एवं जनसंचार के क्षेत्र में विविध आयाम स्थापित किये हैं। हिन्दी में देश की सबसे बड़ी व सर्वप्रथम संवाद समिति 'हिन्दुस्थान समाचार' का गठन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की प्रेरणा से हुआ। इसके अलावा आज ६ दैनिक, १२ साप्ताहिक, ५ पाक्षिक, १० मासिक, एक द्वैमासिक एवं दो त्रैमासिक पत्रों का संचालन संघ की प्रेरणा व योजना से हो रहा है। आज देश के सभी प्रान्तों से संघ विचार से प्रेरित पत्रों का प्रकाशन हो रहा है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही संघ ने हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित करने वाले तीन पत्र 'दैनिक स्वदेश', साप्ताहिक 'पाञ्चजन्य' व मासिक 'राष्ट्रधर्म' का उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ से प्रकाशन प्रारम्भ किया। संयोग से इन तीनों पत्रों के प्रथम सम्पादक श्री अटलबिहारी वाजपेयी रहे। 'स्वदेश' का प्रकाशन कुछ वर्ष तक होने के बाद यह ग्वालियर चला गया। आज झाँसी के अतिरिक्त मध्य प्रदेश के कई प्रमुख नगरों से इसके संस्करण प्रकाशित होते हैं। 'पाञ्चजन्य' का प्रकाशन वर्तमान में नई दिल्ली से हो रहा है। आपात्काल तक यह पत्र भी लखनऊ से ही प्रकाशित होता था। प्रसार संख्या की दृष्टि से यह इस समय देश का सबसे बड़ा साप्ताहिक समाचार पत्र है। गत दो वर्ष पूर्व 'पाञ्चजन्य' ने अपनी स्वर्ण जयन्ती मनायी है। मासिक 'राष्ट्रधर्म' का प्रकाशन लखनऊ से यथावत जारी है। इसके अतिरिक्त लखनऊ से सांध्य दैनिक 'तरुण भारत' व साप्ताहिक 'हिमालय' एवं 'देशभक्त' का प्रकाशन भी हुआ था। उत्तर प्रदेश में वर्तमान में संघ की दृष्टि से गठित चारों प्रान्तों से एक–एक पाक्षिक पत्र प्रकाशित हो रहा है। लखनऊ व प्रयाग से 'पथ संकेत', मेरठ व बरेली से 'राष्ट्रदेव' का प्रकाशन होता है।

महाराष्ट्र में दैनिक 'तरुण भारत' के संस्करणों की श्रृंखला है। 'तरुण भारत' मराठी भाषी समाचार पत्र है तथा प्रसार संख्या की दृष्टि से प्रमुख पत्रों के रूप में इसकी गणना होती है। 'तरुण भारत' का प्रकाशन मुम्बई, नागपुर, औरंगाबाद और सोलापुर से हो रहा है। केरल के एरनाकुलम् व कालीकट से मलयालम भाषा में 'दैनिक जन्मभूमि' का प्रकाशन होता है। बंगलौर से कन्नड़ भाषा में 'होसदिगन्त' दैनिक का प्रकाशन हो रहा है। साप्ताहिक पत्रों में मलयालम भाषा में कोच्चि से 'केसरी', तमिल में चेन्ने से 'विजय भारतम्', कन्नड़ में बंगलौर से 'विक्रम', तेलगु में हैदराबाद से 'जागृति', उड़िया में कटक से 'राष्ट्रदीप', मराठी में मुम्बई से 'विवेक', कर्णावती से गुजराती में 'साधना', कलकत्ता से बंगला में 'स्वास्तिका', गुवाहाटी से असमिया में 'आलोक', बेलगाँव से मराठी में 'चीरवाणी', पणजी से भी मराठी में 'गोमंत शक्ति' तथा नई दिल्ली से अंग्रेजी में 'आर्गनाइजर' का प्रकाशन हो रहा है। पाक्षिक पत्रो में नई दिल्ली से हिन्दी में 'हिन्दू चेतना', जयपुर से 'पाथेय कण' का प्रकाशन हो रहा है। मासिक पत्रों में बंगलौर से कन्नड़ में 'उत्थान' व संस्कृत में 'संभाषण संदेश', मंगलौर से अंग्रेजी में 'असीमा', विजयवाड़ा से तेलुगु में 'हिन्दू राष्ट्र', पुणे से मराठी में 'एकता', जयपुर से संस्कृत में 'भारती', नई दिल्ली से हिन्दी व अंग्रेजी में 'वनबन्धु', लखनऊ से हिन्दी में 'राष्ट्रधर्म', हैदराबाद से अंग्रेजी में 'भारतीय प्रज्ञा' तथा इंदौर से हिन्दी में बाल पत्रिका 'देवपुत्र' का प्रकाशन होता है। संघ की प्रेरणा से द्वैमासिक व त्रैमासिक पत्रों का भी प्रकाशन हो रहा है। जम्मू से अंग्रेजी में द्वैमासिक 'वॉयस ऑफ जम्मू–कश्मीर', नई दिल्ली से हिन्दी व अंग्रेजी में 'मंथन' तथा लखनऊ से त्रैमासिक 'विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका' का प्रकाशन हो रहा है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की प्रेरणा से चलने वाले अंग्रेजी के दैनिक 'मदरलैण्ड' का प्रकाशन नई दिल्ली से होता था। यह पत्र खोजपूर्ण व तीखी खबरों के लिए अत्यधिक लोकप्रिय था। आपात्काल की काली छाया पड़ने से प्रतिबन्ध के कारण 'मदरलैण्ड' का प्रकाशन बन्द हो गया। इसी प्रकार 'हिन्दुस्थान समाचार' देश की प्रमुख

संवाद समिति थी। देश भर में समाचार प्राप्त करने व समाचार पत्रों को प्रेषण करने के लिए इसके टेलीप्रिंटर लगे थे। 'हिन्दुस्थान समाचार' व 'समाचार भारती' के बन्द होने के बाद से आज तक हिन्दी में कोई भी संवाद समिति स्वतन्त्र रूप से प्रारम्भ नहीं हो सकी है। दो अन्य जो संवाद समितियाँ कार्य कर रही हैं वे अंग्रेजी के अनुवाद पर आधारित हैं। 'हिन्दुस्थान समाचार' प्रचार माध्यम के क्षेत्र में संघ की हिन्दी भाषा को बहुत बड़ी देन थी। इसकी क्षतिपूर्ति आज तक संभव नहीं हो सकी है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने प्रचार के महत्व को ध्यान में रखते हुए देश भर में आधुनिक संचार सुविधाओं से युक्त विश्व संवाद केन्द्रों की स्थापना की है। प्रथम विश्व संवाद केन्द्र की स्थापना रामजन्मभूमि आन्दोलन के समय लखनऊ में १९९२ में हुई। आज यहाँ से फीचर एजेंसी एवं समाचार एजेंसी के रूप में समाचार व लेख विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं को प्रेषित किये जा रहे हैं। विश्व संवाद शीघ्र ही आधुनिकतम साइबर न्यूज एजेंसी भी प्रारम्भ करने जा रहा है। यह देश की पहली साइबर संवाद समिति होगी, जो कि "संवाद भारती डाट काम" के रूप में कार्य करेगी। लखनऊ विश्व संवाद केन्द्र की सफलता के बाद देश भर में विश्व संवाद केन्द्र स्थापत किये गये हैं। नई दिल्ली, कलकत्ता, मुम्बई, चेन्नई, जम्मू, गुवाहाटी, कोच्चि, बंगलौर, हैदराबाद भुवनेश्वर, पुणे, नागपुर, कर्णावती, भोपाल, रायपुर, जबलपुर, जयपुर, उदयपुर, चण्डीगढ़, पटना, वाराणसी, आगरा, मेरठ तथा अल्मोड़ा में विश्व संवाद केन्द्र स्थापित हो गये हैं। □

...और 'वह' प्रश्नोत्तर

सन् १९७३ में सरसंघचालक पूज्य श्री गुरुजी के दिवंगत हो जाने पर श्री बालासाहब देवरस नूतन सरसंघचालक बनाये गये (पूज्य गुरुजी द्वारा लिख कर छोड़े गये पत्र के अनुसार)। श्री एकनाथ जी उस समय तक पूर्णरूपेण विवेकानन्द केन्द्र (कन्याकुमारी) के काम में तल्लीन हो गये थे और उन संघ का कोई प्रत्यक्ष दायित्व नहीं था। फिर भी विभिन्न अवसरों पर संघ कार्य की दृष्टि से भी उनके कुछ न कुछ कार्यक्रम देश भर में होते ही रहते थे और उनके गतिशील व दृढ़निश्चयी व्यक्तित्व की छाप स्वयंसेवकों के मानस पर पड़े बिना नहीं रहती थी।

इसी क्रम में जून १९७३ में ही कानपुर के संघ शिक्षा वर्ग में एकनाथ जी का कार्यक्रम हुआ। संयोग से नूतन सरसंघचालक श्री बालासाहब देवरस भी उनके बौद्धिक कार्यक्रम में उपस्थित थे। 'पूजनीय सरसंघचालक' संबोधन से प्रारम्भ उनका बौद्धिक अत्यन्त प्रभावी रहा।

अगले दिन वर्ग के सभी शिक्षकों और प्रचारकों की बैठक थी (सनातन धर्म कालेज की व्यायामशाला में)। परिचय और प्रारम्भिक पूछताछ के बाद बैठक का एक चरण पूरा हो गया और एकनाथ जी अगला विषय प्रारम्भ करने के पूर्व कुछ सोच ही रहे थे कि इसी बीच वर्ग कार्यवाह डॉ. कन्हैयासिंह ने एक प्रश्न पूछकर वातावरण में सन्नाटा ला दिया। डॉ. सिंह द्वारा किञ्चित घुमा–फिराकर किये गये प्रश्न का आशय इस प्रकार था कि वर्त्तमान परिस्थिति में संगठन को यदि आपका मार्गदर्शन मिलता, तो बहुत अच्छा होता। अर्थात् संघ की बागडोर उनके हाथ में होनी चाहिए थी। एकनाथ जी ने एक क्षण की भी देरी किये बिना उत्तर दिया, 'देखो जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मेरा तो होल्डाल हमेशा बँधा रहता है, उधर से इधर आने में दो मिनट का भी समय नहीं लगेगा। किन्तु यदि पूज्य गुरुजी के अलौकिक व्यक्तित्व में तुम्हारा विश्वास है तो यह मानकर चलो कि उनके द्वारा बनाई हुई योजना संगठन के लिए पूर्ण लाभकारी सिद्ध होगी।' ऐसा दो–टूक और बेबाक उत्तर सुनकर सभी कार्यकर्त्ताओं को अत्यन्त सुखानुभूति हुई।

यही समर्पण और अनुशासन संघ का प्राण है। हम भी 'प्राणों' को पुष्ट करने वाले इसी पथ पर चलें और सतत चलते रहें।

भारतीय किसान संघ के बढ़ते चरण

□ संकटाप्रसाद सिंह

संगठनमंत्री, भा०कि०संघ

भारतीय किसान संघ प्रारम्भ होने के पूर्व विभिन्न प्रान्तों में किसानों के संगठन में रुचि रखने वाले कार्यकर्त्ताओं द्वारा अलग–अलग नाम से कार्य प्रारम्भ हुआ था। जैसे भारतीय किसान परिषद, खेडुत समाज, शेतकरी संगठन, रैयत संघ आदि। इनके बनने का कारण यह था कि स्वतंत्रता के पश्चात् किसानों का राजनीतिक शोषण हो रहा था। राजनीतिक क्षेत्र में कार्यरत बन्धु किसानों को जुटा कर राजनीतिक लाभ लेते थे किन्तु उससे किसानों का हित सम्भव न था। इस स्थिति का आँकलन कर अलग–अलग प्रान्तों में विभिन्न नामों से संगठन प्रारम्भ हुये।

भारतीय किसान संघ की मान्यताएँ

१६७८ में माननीय दत्तोपन्त ठेंगड़ी ने देश में चलने वाले इन संगठनों के कार्यकर्ताओं से भेंट कर यह विचार किया कि देश में किसानों का एक प्रबल संगठन बनना आवश्यक है। इस दृष्टि से किसान प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन कोटा, राजस्थान में ३, ४ व ५ मार्च १६७६ को सम्पन्न हुआ। इसमें देश के सभी प्रदेशों से ६५० प्रतिनिधि एकत्रित हुये। परस्पर वार्ता होकर सर्वसम्मत निर्णय से भारतीय किसान संघ नाम से संगठन प्रारम्भ हुआ। उसी समय सभी के विचार से कुछ मान्यताएँ भी निश्चित हुईं। जैसे :–

१. भारतीय किसान संघ एक अराजनीतिक संगठन है।
२. स्वयं खेती करने वाला, खेती कराने वाला, खेती में मजदूरी करने वाला तथा खेती के उपकरण व औजार बनाने वाला, सभी किसान हैं।
३. सामूहिक नेतृत्व के आधार पर संगठन चलेगा।
४. राजनीतिक दलों के पदाधिकारी किसान संघ के पदाधिकारी नहीं बन सकते।
५. किसान संघ का कोई कार्यकर्त्ता चुनाव नहीं लड़ेगा।
६. किसान के नाते सभी किसान संघ के सदस्य बन सकते हैं।
७. भा० किसान संघ का झण्डा भगवा रंग का तथा मध्य में गोले के अन्दर दक्षिण भारत के नक्शे में हल–चिह्न होगा।
८. भगवान बलराम किसानों के देवता होंगे।

ऐसी प्रमुख मान्यताओं के आधार पर भारतीय किसान संघ सम्पूर्ण किसानों का संगठन कर रहा है। किसान संघ की शाखायें इस समय देश के सभी प्रदेशों में हैं। सभी प्रदेशों में किसान स्वेच्छा से जुड़ रहे हैं। सबको किसान संघ आकर्षित कर रहा है।

संगठन, संघर्ष, संगठन

उत्तर प्रदेश के सभी जनपदों में भारतीय किसान संघ स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सतत प्रयत्नशील है। भारतीय किसान संघ का मुख्य कार्य संगठन है, किन्तु आवश्यकतानुसार वह आन्दोलन भी करता है। इसीलिए हमारा समीकरण है, 'संगठन, संघर्ष, संगठन'। रचनात्मक कार्य भी संगठन का अंग है। दैवी आपदाओं में भारतीय किसान संघ एकमात्र संगठन है जो अपनी शक्ति से किसानों को राहत पहुँचाता है। जैसे आन्ध्र व उड़ीसा का समुद्री तूफान गुजरात व राजस्थान में सूखे के समय किसान कार्यकर्ता सबसे आगे रहे।

सफलतायें

वर्तमान परिस्थिति में मिथ्या प्रचार से खेती के प्रति रुचि घटी है। भारतीय किसान संघ के प्रयत्न से इस पर रोक लगी है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा भी खेती को नष्ट करने का प्रयास हो रहा है। वे किसानों को बेकार बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। गुजरात में कच्छ जिले में १७ हजार एकड़ भूमि, जिससे १० हजार खेतिहर मजदूर परिवार नमक बनाकर अपनी जीविका चलाते थे, एक अमेरिकन कम्पनी ने उस भूमि को चिमनभाई पटेल के मुख्यमंत्री रहते उनसे पट्टा करा लिया था। भारतीय किसान संघ ने आन्दोलन करके उस कम्पनी को अमेरिका वापस भेज दिया तथा भूमि मजदूरों को वापस दिलायी। राजस्थान में थार रेगिस्तान की नहर के किनारे की भूमि का पाकिस्तान के मुसलमान नागरिकों ने पट्टा करा लिया था। किसान संघ ने वहाँ आन्दोलन

करके वह सब पट्टा समाप्त कराया तथा भूमि वापस ली। १९५५ से बिना आयोडीन वाले नमक पर रोक लगी थी। किसान संघ ने २ अक्टूबर से सत्याग्रह का बिगुल बजाया। वह रोक समाप्त हो गई।

इस समय देश आर्थिक गुलामी की ओर झुक रहा है। देश में १९९४ से १९९९ के बीच जो समझौते हुए उनका कुप्रभाव दिखने लगा है। विदेशी कम्पनियों का जाल बढ़ रहा है। भारतीय किसान संघ खाद, बीज, औषधि के स्वदेशीकरण हेतु प्रयत्नशील है।

हस्ताक्षर अभियान

इस समय देश में १४२९ वस्तुओं को विदेश से मँगाया जाता है। यह सब उन्हीं समझौतों के अन्तर्गत है। इसके लिए भारतीय किसान संघ ने योजना बनाई है। विजयादशमी पर विश्व व्यापार संगठन का सम्पूर्ण देश में पुतला दहन होगा। हस्ताक्षर करा कर आगामी १५ अप्रैल को सभी प्रान्तों में ज्ञापन के माध्यम से प्रधानमन्त्री से आग्रह होगा कि भारत विश्व व्यापार संगठन से अलग हो, अमेरिकी पेटेण्ट के प्रभाव से मुक्त हो। विदेशी वस्तुओं का आयात बन्द हो। □

उन्होंने क्या कहा था?

कुछ वर्ष पहले, जब संघ के संस्थापक जीवित थे, आपके शिविर में गया था। वहाँ पर आपके अनुशासन, अस्पृश्यता का पूर्णरूप से अभाव और कठोर, सादगीपूर्ण जीवन देखकर काफी प्रभावित हुआ। सेवा और स्वार्थ त्याग के उच्च आदर्शों से प्रेरित कोई भी संगठन दिन–प्रतिदिन अधिक शक्तिवान हुए बिना नहीं रहेगा।

□ **महात्मा गांधी,**
१६–०९–१९४७, भंगी कालोनी, दिल्ली

"नए भारत के निर्माण की चुनौती को स्वीकार किए हुए इस क्रांतिकारी संगठन से मुझे बहुत आशा है। आज हमारी आँखों के सामने घटित हो रहे सामाजिक परिवर्तन के भी अग्रपंक्ति में आप लोग हैं। मुझे रत्ती मात्र भी संदेह नहीं कि सेवा और त्याग की भावना से आपका हृदय भरा हुआ है। गरीबी के प्रति आपके मन में अत्यन्त करुणा का भाव है एवं आपका आचरण उदात्त है।"

□ **श्री जयप्रकाश नारायण,**
०३–११–१९७७, पटना, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एवं प्रबुद्ध जनता के समक्ष

"अपने पास के स्वयंसेवकों की जाति को जानने की उत्सुकता तक नहीं रखकर परिपूर्ण समरसता एवं भ्रातृभाव के साथ यहाँ व्यवहार करनेवाले स्वयंसेवकों को देखकर मुझे आश्चर्य होता है।"

□ **डा० बाबासाहब अम्बेडकर,**
मई, १९३९, पुणे के संघ शिविर में

"केवल यहीं पर हमारे दिल एवं दिमाग दोनों पूर्णरूप से संतोष एवं उदात्त भाव से भरे हुए अनुभव होते हैं।"

□ **श्री हिप्सन राय,**
खासी जनजाति नेता– १९८२ में जशपुर (मध्यप्रदेश) के वनवासी कल्याण आश्रम शिविर में

"स्वयं भगवान ने इस संगठन को अपनी मातृभूमि के वैभव और अखिल मानवजाति के उद्धार के लिए जन्म दिया है। संघ में आपको मिल रहे शिक्षण एवं संस्कार पूर्णरूप से वही हैं जो स्वामी विवेकानन्द ने अपने देश के युवकों के लिए हों, ऐसा स्वप्न देखा था।"

□ **स्वामी चिद्भवानन्द,**
१९८०, तिरूवेडगम कार्यकर्ता शिविर, तमिलनाडु

'नामूलं लिख्यते किञ्चित'

□ डा० उदयनारायण उपाध्याय
(उपाध्यक्ष–अवध प्रान्त) भारतीय इतिहास संकलन समिति

उपर्युक्त उद्घोषणा है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से प्रेरणा प्राप्त महत्त्वपूर्ण संगठन 'अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना' का। ज्ञातव्य है कि यह योजना वास्तव में बाबा साहब आप्टे स्मारक–समिति का प्रकल्प है। उल्लेखनीय है कि इस समिति की स्थापना महान चिन्तक, मनीषी, प्रखर राष्ट्रभक्त स्वर्गीय उमाकान्त केशव आप्टे उपाख्य बाबा साहेब आप्टे की पुण्य स्मृति में युगाब्द–५०७५ तदनुसार सन् १६७३ ई. में नागपुर में हुई थी। बाबा साहब आप्टे संस्कृत, मराठी, हिन्दी तथा इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान्, भारतीय संस्कृति के पुजारी एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अखिल भारतीय प्रचार प्रमुख थे। निःसन्देहरूप से वे भारतीय इतिहास के विकृत–स्वरूप से अत्यन्त खिन्न थे और उनकी प्रबल इच्छा थी कि राष्ट्रीय विचारधारा के भारतीय विद्वानों द्वारा **'भारत के इतिहास'** की मौलिक रचना की जाये। दैववश उनकी इच्छा उनके जीवन में पूर्ण नहीं हो सकी परन्तु राष्ट्र के लिए 'प्रेरणा–स्रोत' बन गई। बाबा साहेब आप्टे स्मारक समिति ने अपने प्रारम्भिक अवस्था में प्रथमतः दो प्रकल्प अपने हाथों में लिए :

(१) संस्कृत का प्रचार एवं प्रसार एवं

(२) भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन

संस्कृत के प्रचार–प्रसार के उद्देश्य से सर्वप्रथम सन् १६६३ में इन्दौर में 'अखिल भारतीय संस्कृत प्रशिक्षण शिविर' का आयोजन किया गया तदन्तर सम्पूर्ण देश में ऐसे १५ प्रशिक्षण–शिविर लगाये गये जिसमें अनेक लोगों को संस्कृत–भाषा का ज्ञान कराया गया। १६६५ ई. में सुप्रसिद्ध शिक्षण–संस्था 'विद्या–भारती' को इस महान् एवं पुनीत कार्य का दायित्व सौंप दिया गया।

समिति का दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रकल्प भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन है। हमारा इतिहास विश्व में सबसे प्राचीन एवं दीर्घकालीन है। अस्तु इसका प्रामाणिक साक्ष्यों के आधार पर पुनर्लेखन साधारण कार्य नहीं है। इस कार्य की महत्ता एवं प्रासांगिकता के परिप्रेक्ष्य में समिति के अध्यक्ष श्री मोरोपन्त नीलकण्ठ पिंगले ने सन् १६७८–७६ की मध्यावधि में भारत के सुविख्यात इतिहासकारों, पुरातत्त्वविदों अन्य विषयों के विशेषज्ञों तथा विद्वानों की दो बैठकें नागपुर में आहूत कीं जिसमें यह सर्वसम्मिति से निर्णय लिया गया कि राष्ट्रहित में इतिहास के 'पुनर्लेखन–कार्य' को विधिवत सम्पादित करने की दृष्टि से इस समिति के स्थान पर– "अखिल भारतीय इतिहास संकलन–योजना" को प्रतिष्ठापित किया जाय जिसका मुख्य केन्द्र एवं कार्यालय दिल्ली में हो। तदनुसार इस योजना का प्रधान–कार्यालय– बाबा साहेब आप्टे स्मृति–भवन, नई दिल्ली में संचालित हुआ, जो आज भी श्री मोरोपन्त के मार्ग–दर्शन में निष्ठापूर्वक कार्यरत है।

अखिल भारतीय इतिहास संकल्प योजना के दो प्रमुख पक्ष हैं– वैचारिक पक्ष तथा संगठनात्मक पक्ष। सम्प्रति दोनों पक्षों को अपने–अपने कार्यक्षेत्र में आशातीत उपलब्धि प्राप्त हुई है। संगठनात्मक दृष्टि से सम्पूर्ण योजना को प्रान्तों, विश्वविद्यालयों तथा जनपदीय इकाइयों में विभक्त किया गया है और कार्य की दृष्टि से प्रान्त एवं जनपद ही भारतीय इतिहास योजना की इकाइयाँ हैं। प्रतिवर्ष वार्षिक अधिवेशनों में वैचारिक एवं संगठनात्मक पक्षों का मूल्यांकन होता है।

उद्देश्य

अखिल भा० इति० संकलन योजना का मुख्य उद्देश्य है :

"भारतिय इतिहासकारों द्वारा भारतीय दृष्टिकोण से सम्पूर्ण राष्ट्र के समग्र जीवन का तथ्यपरक, कालक्रमानुसार पूर्वाग्रहरहित एवं मौलिक इतिहास की रचना करना, जो आधुनिकतम प्रामाणिक–साक्ष्यों पर आधारित हो; जिसमें भारत के अतीत के सभी गौरवशाली पक्षों को पूर्णरूपेण प्रतिबिम्बित किया गया हो और यह

सर्वमान्य एवं सर्वग्राह्य हो। अर्थात् सभी विवादास्पद बिन्दुओं का तर्कपूर्ण तथा प्रामाणिक साक्ष्यों द्वारा समुचित निराकरण कर दिया गया हो।" इसी महान लक्ष्य की पूर्ति हेतु भारत के अनेकों विद्वान् एवं शोधकर्ता 'इतिहास के पुर्नलेखन' की सामग्री संकलित करने में सन्नद्ध हैं।

कार्य–योजना

१. भारत के मौलिक इतिहास की रचना

२. 'भारतीय काल–गणना' हेतु कलि संवत को लोकप्रिय बनाना जिसका प्रारम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को २ बजकर २७ मिनट ३० सेकेण्ड पर १७/१८ फरवरी ३१०२ ई०पू० में महाभारत युद्ध के ३६ वर्ष पश्चात् भगवान श्रीकृष्ण के देहावसान के दिन हुआ था।

३. १८५७ की जन–क्रान्ति तथा स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास का जनपदीय संकलन एवं लेखन।

४. महाभारत–काल से १६५० ई० तक की अवधि का प्रामाणिक इतिहास-रचना। यहाँ उल्लेखनीय है कि भारतीय इतिहासकारों द्वारा सम्प्रति 'महाभारत कालीन भारत' एक बृहद् एवं विशिष्ट ग्रन्थ का लेखन कार्य चल रहा है।

५. विलुप्त वैदिक–सरस्वती के प्रवाह पथ का खोज। इस अभियान का सर्वप्रथम श्रीगणेश भारत के मूर्धन्य विद्वान पद्मश्री विष्णु श्रीधर वाकणकर जी के नेतृत्व में नवम्बर १६८५ में हुआ था। सम्प्रति कई राज्यों के इतिहासकारों, पुरातत्ववेत्ताओं की टोलियाँ उस अभियान में लगी हैं। इस सम्पूर्ण अभियान का प्रधान कार्यालय एवं सरस्वती शोध–संस्थान जबलपुर में स्थित है और उस कार्य में निरन्तर उल्लेखनीय उपलब्धियाँ प्राप्त हो रहीं हैं। यदि इस कार्य में सफलता मिल गई तो हम निश्चितरूप से प्रतिपादित कर सकेंगे कि– आज की सैन्धव–सभ्यता, "सारस्वत–संस्कृति" ही थी।

अखिल भारतीय इतिहास संकलन का अपना प्रकाशन भी है। यहाँ से प्रतिवर्ष अनेकों महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हिन्दी, अंग्रेजी तथा अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशित की जाती हैं। इसके अतिरिक्त योजना वर्ष में दो बार "इतिहास दर्पण" नामक शोध–पत्रिका निकलती हैं जिसके सम्पादक–मण्डल में भारत के मूधर्न्य विद्वान् सम्मिलित हैं। इस शोध–पत्रिका का वितरण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर है जो निश्चय ही राष्ट्र को नव–निर्माण एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की संवाहिका का कार्य कर रही है। उत्तर प्रदेश की प्रान्तीय इकाइयों ने भी युग–युगीन काशी, युगयुगीन– ब्रज, युग–युगीन कोशल, युग–युगीन उज्जयिनी आदि अनेक महत्त्वपूर्ण प्रकाशन करके जनमानस की बौद्धिक आवश्यकताओं की पूर्ति की है। इस प्रकार सभी दृष्टि से अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना अपने विद्वत परिषद् तथा श्री मोरोपन्त पिंगले के मार्ग–दर्शन में 'बाबा साहब आप्टे' की इच्छाओं के अनुरूप अपने मूल उद्देश्य की पूर्त्ति की ओर अग्रसर हो रही है।

अस्तु आज राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ७५वें वर्ष पूर्ण होने के पुनीत–ऐतिहासिक अवसर पर अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना की मूल–भावना, कार्य–पद्धति तथा वांछित उपलब्धियों के परिदृश्य में हम इस योजना के 'प्रणेता एवं मूल–प्रेरणा स्रोत' श्रद्धेय बाबा साहब आप्टे को शत–शत् नमन करते हैं जिनका अभीष्ट मूल–मन्त्र 'नामूलं लिख्यते किञ्चित' में परिलक्षित होता है। □

–दुर्गापुरी, लखनऊ

२५ अगस्त १६६८ को बंगलौर के श्रीगुरुदक्षिणा उत्सव में अध्यक्षता करते हुए भारत के पूर्व प्रधान न्यायाधीश श्री कोका सुब्बाराव ने कहा– "राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इस देश की राष्ट्रीय चेतना के जागरण के महान् कार्य में लगा हुआ है और मुझे पूरा विश्वास है कि यह राष्ट्र की एकता और अखण्डता को अक्षुण्ण बनाए रखने में एक सशक्त साधन बनेगा।" आगे चलकर, उन्होंने यह भी कहा कि, "उदार और समन्वयवादी हिन्दू संस्कृति के आधार पर हिन्दुओं को संगठित करने के लिए संघ समर्पित है। इसलिए उस पर यह टिप्पणी करना कि संघ सेक्युलरिज्म के खिलाफ प्रचार करता है– बिल्कुल अर्थ हीन है।"

विद्यार्थियों को दिशा बोध

□ आशुतोष भटनागर

छात्र शक्ति–राष्ट्र शक्ति उद्‌घोष अथवा संकल्पना अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् ने देश के सम्मुख प्रस्तुत की है। यह संकल्पना अभाविप के सम्पूर्ण चिंतन का निचोड़ भी है और उसके प्रयत्नों का लक्ष्य भी। अभाविप की सारी सार्थकता इस संकल्पना में समाहित है।

महत्त्वपूर्ण भूमिका

छात्र समाज का एक ऐसा ऊर्जावान घटक है जो परिवर्तन को साकार करने के लिऐ आगे आता है, किसी भी चुनौती को स्वीकार करता है। सामाजिक दण्ड शक्ति के रूप में अपनी भूमिका निभा सकता है। युवा होने के कारण आदर्शों से अनुप्राणित होता है, शक्ति का उपासक होता है, संघर्ष की क्षमता रखता है।

एक साथ इतनी विशेषताएँ धारण करने के कारण सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में विद्यार्थी की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। इतिहास गवाह है कि जब–जब आवश्यकता पड़ी, विद्यार्थियों ने अपनी निर्णायक भूमिका निभायी है।

परम पूज्य डा० केशवराव बलिराम हेडगेवार ने १९२५ में जब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की तो वर्तमान पीढ़ी के स्थापित नेतृत्व के स्थान पर भावी पीढ़ी को संस्कारित करने, उसमें राष्ट्रभाव का जागरण करने का निश्चय किया। उनकी कल्पना में शक्तिशाली, बुद्धिमान, सुशील, सर्वश्रेष्ठ व अजेय गुणों से युक्त युवाओं की एक ऐसी टोली का चित्र था जो जीवन के विविध क्षेत्रों में, देश के विभिन्न अंचलों में अनादि, अनंत, अखंड भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति और परमवैभवशाली भारत के राष्ट्रमंदिर में भारत माँ की दिव्य मूर्ति की प्राणप्रतिष्ठा हेतु प्रयत्न करेगी।

दिशाबोध का कार्य

डा० हेडगेवार के सम्मुख वैभवशाली भारत के निर्माण का सपना था और थी समर्पित छात्र–युवाओं की एक टोली जो राष्ट्र भक्ति एवं दृढ़ इच्छाशक्ति से ओत–प्रोत थी। उन्होंने अनेक युवा कार्यकर्ताओं को देश के विभिन्न भागों में संघकार्य के लिए भेजा। अधिकांश कार्यकर्ताओं ने विश्वविद्यालयों में प्रवेश लिया तथा विद्यार्थियों के बीच संघ कार्य का विस्तार प्रारम्भ हुआ। संघ की शाखाओं पर शारीरिक व बौद्धिक विकास के विविध कार्यक्रमों के माध्यम से विद्यार्थियों के दिशाबोध का कार्य गतिमान हुआ।

१९४७ का वर्ष भारत विभाजन की विभीषिका लेकर आया। साथ ही स्वातंत्र्य का नवप्रभात भी। रक्तरंजित भारत के अभ्युत्थान का गुरुतर भार तत्कालीन नेतृत्व पर आया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जिसने स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, ने देश की सत्ता संभाली। आजादी की लड़ाई के दिग्गज नेताओं ने सरकार में काम–काज सम्भाला। निश्चित ही उनके मन में देश के विकास की स्पष्ट कल्पना थी और उसी के अनुरूप उन्होंने विभिन्न योजनाओं को आकार देना प्रारम्भ किया।

राष्ट्रभक्त एवं विचारशील लोगों का एक समूह ऐसा भी था जिसे विश्वास था कि देश की प्रगति के लिए चहुमुखी प्रयास करने होंगे। पवित्र उद्देश्य, श्रेष्ठ योजना और सरकार की शक्ति का संयोग भी तब तक सफलता प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि सम्पूर्ण देश की शक्ति उसके साथ न लगे। इसके लिए विभिन्न संगठनों, सामाजिक वर्गों एवं जन–सामान्य को इसमें भागीदारी के लिए तैयार करना होगा।

विद्यार्थी परिषद् का गठन

देश इस समय एक विशिष्ट स्थिति से गुजर रहा था। स्वतंत्रता प्राप्ति को एक वर्ष भी नहीं बीता था। विभाजन की त्रासदी से देश उबर भी नहीं पाया था कि पूज्य महात्मा गांधी की हत्या ने देश को हिला दिया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, जो राष्ट्रीय पुनर्रचना के महायज्ञ में अपने योगदान को और अधिक सशक्त बनाने के लिए प्रयत्नशील था, केन्द्र सरकार की अदूरदर्शिता तथा राजनीतिक नासमझी का शिकार बन गया। महात्मा जी की हत्या का आरोप जो न्यायालय में झूठा साबित हुआ, संघ पर लगा कर उसे प्रतिबंधित कर दिया गया।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने अपनी गतिविधियों पर विराम लगा दिया था परन्तु संघ की राष्ट्रवादी विचारधारा से प्रेरित छात्रों और शिक्षकों के समूहों ने

स्थान–स्थान पर विद्यार्थियों को संगठित करने एवं उनके दिशाबोध का प्रयास जारी रखा। समान उद्देश्य को लेकर भिन्न–भिन्न नामों से सक्रिय इन समूहों को जोड़कर एक राष्ट्रव्यापी स्वरूप प्रदान किये जाने का विचार कुछ प्रमुख कार्यकर्त्ताओं ने किया। परिणामस्वरूप अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद की स्थापना हुई और ९ जुलाई १९४९ को उसका पंजीयन हुआ।

रचनात्मक गतिविधियाँ

यद्यपि संस्थापकों को राष्ट्रनिर्माण का अपना उद्देश्य स्पष्ट था किन्तु उसे प्राप्त करने का मार्ग उन्हें खोजना पड़ा। यह मार्ग उन्होंने अनेक प्रयत्नों एवं अनुभवों से खोजा और इसमें समय भी लगा। चूँकि संगठन की स्थापना राष्ट्रनिर्माण हेतु हुई थी और निर्माण एक सकारात्मक कार्य होता है इसलिए रचनात्मक गतिविधियों से परिषद् का कार्य प्रारम्भ हुआ।

सामाजिक जीवन में समाज हित विरोधी व नकारात्मक तत्त्व भी रहा करते हैं जिनके कारण समस्याएँ एवं कठिनाइयाँ सामने आती हैं। इसलिए परिषद् ने उनके निराकरण हेतु प्रयत्न करने एवं आवश्यकतानुसार आन्दोलन करने को भी अपना कार्य माना। परिषद् का कार्य महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में प्रारम्भ हुआ था तथा कई महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में छात्रसंघों के चुनाव होते थे तो परिषद् ने छात्रों को योग्य नेतृत्व प्रदान करने हेतु छात्र संघ चुनावों में भी भाग लेना प्रारम्भ किया। इस प्रकार अभाविप का मार्ग व गतिविधियाँ आकार लेने लगे।

स्वतंत्रता पश्चात के भारत में राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लक्ष्य के साथ छात्र–युवाओं को जोड़ने का काम परिषद् ने सफलतापूर्वक किया है। इस महत्वाकांक्षी लक्ष्य की पूर्ति हेतु आदर्शवादी, योग्य, प्रतिभाशली एवं समर्पित राष्ट्रवादी युवाओं का एक प्रभावी समूह स्थान–स्थान पर विकसित होना अपरिहार्य है। ऐसे नौजवानों को एकत्रित लाने, उनमें सामाजिक संवेदना का जागरण करने, उनमें आदर्श नागरिक के अनुकूल गुणों का विकास करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों की एक अटूट मालिका वर्षानुवर्ष से चली आ रही है।

परीक्षा में सफल

विद्यार्थियों को दिशाबोध प्रदान करने की जिम्मेदारी परिषद् ने सफलतापूर्वक निभायी है। इसका प्रमाण गत वर्षों में अनेक बार मिला है। जो कुछ भी गलत है उसे ठीक करने अथवा उसे बदल डालने के लिए सदैव प्रस्तुत रहे, यही युवा की परिभाषा है। छात्रों में युवकोचित कर्मठता, तेजस्विता और संघर्षशीलता को बनाये एवं जगाये रखने का कार्य परिषद् ने किया है। स्वतन्त्र भारत के इतिहास में तीन ऐसे अवसरों का उल्लेख अभाविप सगर्व कर सकती है जबकि उसके इन प्रयत्नों को कसौटी पर परखा गया और परिषद् उस परीक्षा में पूरी तरह सफल सिद्ध हुई।

पहला अवसर था १९७३ में गुजरात में नवनिर्माण आन्दोलन का, जहाँ एक इंजीनियरिंग कॉलेज के छात्रावास में की गई भोजन शुल्क वृद्धि के विरुद्ध प्रारम्भ हुआ आन्दोलन आनन–फानन में मँहगाई, भ्रष्टाचार व कुशासन के विरुद्ध प्रदेश व्यापी आंदोलन बन गया जिसका नेतृत्व विद्यार्थियों ने किया। यह आंदोलन प्रारंभिक दौर में स्वतः स्फूर्त था परन्तु इसे व्यापक, प्रभावी स्वरूप विद्यार्थी परिषद् के प्रयत्नों से मिला।

छात्र आंदोलन का यह ज्वार गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री चिमन भाई पटेल के इस्तीफे के बाद ही थमा। यह एक अभूतपूर्व घटना थी। छात्र आंदोलन का ऐसा उभार तथा ऊर्जा का ऐसा प्रकटीकरण समाज के समक्ष पहली बार हुआ था। पच्चीस वर्ष से चले आ रहे कांग्रेस के एकछत्र साम्राज्य को न केवल चुनौती दी गई थी अपितु उसे पदत्याग के लिए विवश भी होना पड़ा था। अनेकों के लिए जहाँ यह हतप्रभ करने वाली घटना थी वहीं जनसामान्य को लोकतांत्रिक समाज में लोकशक्ति के सर्वोपरि होने का विश्वास दिलाती थी। वस्तुतः यह घटना छात्र राजनीति और भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुई।

स्वर्णिम गाथा

गुजरात के आंदोलन की सफलता ने पूरे देश में परिवर्तन के पक्ष में वातावरण बनाया। अगले ही वर्ष अभाविप के प्रयासों से मँहगाई, भ्रष्टाचार, कुशासन, बेरोजगारी, कुशिक्षा आदि के विरोध में बिहार में आंदोलन प्रारम्भ हो गया। यही आंदोलन आगे चल कर राष्ट्रीय आंदोलन में परिवर्तित हो गया और श्री जयप्रकाश नारायण के सक्रिय सहभाग व नेतृत्व के कारण जयप्रकाश आंदोलन कहलाया। देश पर आपात्–काल थोपे जाने एवं उसके विरुद्ध छात्रशक्ति के नेतृत्व में सफल जनसंघर्ष, परिणामस्वरूप श्रीमती इंदिरा गाँधी की तानाशाह सरकार को उखाड़ फेंकने

की यह स्वर्णिम गाथा है।

तीसरा अवसर था असम में बंगलादेशी घुसपैठ के विरुद्ध आंदोलन का। १९७९ से १९८५ तक चले आंदोलन को प्रादेशिक दायरे से निकाल कर राष्ट्रीय प्ररिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने का श्रेय भी अभाविप को जाता है। उपर्युक्त तीनों आंदोलन स्वाधीन भारत के सबसे बड़े छात्र आंदोलन थे और तीनों में विद्यार्थी परिषद् की भूमिका महत्वपूर्ण रही। विद्यार्थी परिषद् की यह ऐतिहासिक भूमिका स्वर्णिम पृष्ठों में लिखी जाने योग्य है।

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् इन राष्ट्रव्यापी आंदोलनों का सफल नेतृत्व कर सकी क्योंकि उसे अपने लक्ष्य और दिशा के विषय में कोई संभ्रम नहीं था। स्वयंपूर्ण, स्वायत्त, स्वावलंबी संगठन होने के नाते उसका नेतृत्व अपनी भूमिका निर्धारित करने में सक्षम था एवं किसी भी निर्णय के लिए उसकी एकमात्र कसौटी राष्ट्रहित थी।

समर्पित कार्यकर्ता

वैचारिक स्पष्टता के साथ–साथ संगठन की पूँजी है समर्पित कार्यकर्ताओं की ऊर्जावान टोली। व्यक्ति निर्माण की निरंतर प्रक्रिया से निकलने वाला प्रत्येक कार्यकर्ता इस पद्धति में जो दिशाबोध प्राप्त करता है वह आजीवन उसे सामाजिक और राष्ट्रीय सरोकारों से जोड़े रखता है। इसलिए जब भी कभी देश की स्वतंत्रता, संप्रभुता, लोकतंत्र अथवा जीवन मूल्यों के समक्ष चुनौती उत्पन्न होती है, कार्यकर्ता संघर्ष के लिए प्रस्तुत होता है।

राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए विद्यार्थी परिषद् सम्पूर्ण छात्र–युवा समाज को अपने साथ लेना चाहती है, इसके लिए प्रयत्नशील है। शिक्षा का क्षेत्र स्वाभाविक रूप से अपना कार्यक्षेत्र है। इसलिए परिषद् ने शिक्षा क्षेत्र को अपनी कर्मभूमि और प्रयोगभूमि बनाया है। शैक्षिक पुनर्रचना ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की आधारभूमि बनेगी एवं इस हेतु छात्रशक्ति का नियोजन आवश्यक है यह मानते हुए परिषद् ने इसके लिए सजग छात्र–जीवन परिसर का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का कार्य

यद्यपि लोकतांत्रिक व्यवस्था में राजनीति समाज जीवन का एक महत्वपूर्ण भाग होती है परन्तु वह एकमात्र गतिविधि नहीं हो सकती। कोई भी राष्ट्र मानव जीवन के सारे पहलुओं का संयुक्त, समग्र स्वरूप होता है। उसकी शक्ति का केन्द्र समाज होता है न कि कोई वर्ग, दल अथवा राजनीतिक सत्ता। अतः राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने के लिए समाज को मजबूती देनी होगी। इस दर्शन के आधार पर ही दल एवं सत्ता की राजनीति से ऊपर रहकर राष्ट्रीय पुनर्निर्माण हेतु कार्य करने की मान्यता को परिषद् ने स्वीकार किया है।

आन्दोलन तथा छात्रसंघ चुनाव, दोनों ही गतिविधियों में संगठन ने हमेशा भूमिका निभाई है। साथ ही यह भी सुनिश्चित किया है कि दोनों ही गतिविधियाँ शिक्षा व्यवस्था को बल प्रदान करने के लिए हों। निर्माण का लक्ष्य विध्वंसक मार्ग पर चल कर प्राप्त नहीं किया जा सकता है। रचनात्मक दृष्टिकोण और सृजनात्मक गतिविधियों के माध्यम से ही यह उद्देश्य प्राप्त किया जा सकता है। परिषद् ने सदैव इसी मार्ग का अवलम्बन किया है एवं यह रचनात्मक दृष्टिकोण एक सीमा तक विद्यार्थियों को समझाने में भी सफल रही है।

राष्ट्रवाद का राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का विचार जो वस्तुतः इस भूमि से निःसृत मूल विचार है, को विद्यार्थियों के मध्य प्रसारित करने तथा राष्ट्र के परम वैभव के लिए इसी देह को उपकरण बनाकर इन्हीं चक्षुओं के समक्ष साकार होते देखने का जो स्वप्न प०पू० डा० हेडगेवार ने देखा था, उसे पूरा करने के लिए, राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के व्यापक संदर्भ में शिक्षा क्षेत्र में एक सशक्त छात्र आन्दोलन खड़ा करने के लिए अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् कार्यरत है, संकल्पबद्ध है। छात्रशक्ति को राष्ट्रशक्ति के रूप में विकसित एवं प्रतिष्ठित करने के सुदीर्घ मार्ग पर संघ से प्राप्त दिशाबोधा ही विद्यार्थियों का पाथेय बनेगा। □

"मैं आत्मसाक्ष्य के साथ कह सकता हूँ कि संघ और जनसंघ वालों के बारे में– कि वे फासिस्ट लोग हैं, सांप्रदायिक हैं– ऐसे सारे आरोप सर्वथा बेबुनियाद हैं। देश के हित में ली जाने वाली किसी भी कार्ययोजना में वे लोग किसी से पीछे नहीं हैं। उन लोगों पर ऐसे आरोप लगाना उन पर कीचड़ फेंकने के नीच प्रयत्न मात्र हैं।"

□ **श्री जयप्रकाश नारायण,**
आपात्काल में कारागृह से मुक्त होने पर मुम्बई से पटना जाते समय प्रबुद्ध नागरिकों के मध्य

भारतीय मजदूर संघ

श्रम के क्षेत्र में विशुद्ध भारतीय दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है। अतः प०पू० श्री गुरुजी की प्रेरणा से श्री दत्तोपन्त जी ठेंगड़ी ने २३ जुलाई १९५५ को भोपाल में 'भारतीय मजदूर संघ' की स्थापना की।

भारतीय दृष्टिकोण

भारतीय मजदूर संघ की प्रत्येक बात में भारतीय दृष्टिकोण दिखता है। इसलिए इस के ध्वज का रंग भगवा है जबकि सारे श्रमिक (मजदूर) क्षेत्र में लाल रंग का प्रचलन है। प्रतीक चिह्न निश्चित करते समय सभी गतिविधियों के केन्द्रबिन्दु 'मानव' को ध्यान में रखा गया है। मानव अपने हाथ से सृजन करता है। अतः उद्योग और कृषि के प्रतीक चक्र और अनाज की बाली के साथ संकल्पबद्ध मानव का प्रतिनिधित्व करने वाली मानव की बन्द मुट्ठी को भी प्रतीक चिह्न में सम्मिलित किया गया है।

भारतीय चिन्तन की मान्यता है कि प्रकृति में संघर्ष नहीं, समन्वय है। इसलिए मजदूर संघ श्रम–जगत् में कार्य करते समय उसके घटक श्रमिक (मजदूर), प्रबंधक और पूँजीपति– इन तीनों को मिलाकर औद्योगिक परिवार की संकल्पना को सामने रखता है और इनमें समन्वय रहे, इसका प्रयास करता है। साथ ही यह औद्योगिक परिवार इससे भी बड़े परिवार अर्थात् समाज का एक अंग है, इस बात को ध्यान में रखता है। इन विचारों को व्यवहार में उतारने के लिए वह भारतीय चिन्तन के अनुरूप 'अधिकार के साथ कर्त्तव्य' में विश्वास रखता है। इसलिए १९६९ में राष्ट्रपति के सामने राष्ट्रीय माँगपत्र प्रस्तुत करते समय उसमें 'कर्त्तव्य और अनुशासन–क्रम' पर विशेष बल दिया था।

विश्वकर्मा जयन्ती

श्रमिक–जगत् में मजदूर संघ के आगमन से पूर्व १ मई को श्रम–दिवस के रूप में मान्यता मिली हुई थी। १ मई का भारतीय संस्कृति और परम्परा से कोई संबंध नहीं है, इसलिए श्रमिक–जगत् के आद्यपुरुष विश्वकर्मा जी की जयन्ती (कन्या संक्रांति, १७ सितम्बर) को मजदूर संघ ने श्रम–दिवस के रूप में अपनाया।

उद्घोषों (नारों) में भारतीयता

श्रमिक–जगत् में मजदूर संघ के आगमन से पहले राष्ट्रीय भाव जागृत करने के बारे में कोई प्रयास नहीं किया जाता था। परन्तु मजदूर संघ ने 'भारत माता की जय' और 'वन्दे मातरम्' के उद्घोषों के माध्यम से श्रमिकों में राष्ट्रीय भाव जागृत करते हुए, वर्गीय दृष्टिकोण और राष्ट्रीय दृष्टिकोण के बीच जो दीवार खड़ी की गयी थी उसे गिरा दिया।

औद्योगिक क्षेत्र देश का ही एक अंग है, अतः श्रमिक–हित का विचार करते समय देश–हित का भी विचार करना आवश्यक है, इस बात पर बल देने के लिए पहले से प्रचलित नारे "चाहे जो मजबूरी हो, हमारी माँगें पूरी हों" के स्थान पर "देश के हित में करेंगे काम, काम के लेंगे पूरे दाम" का उद्घोष प्रारंभ किया।

भारतीय मजदूर संघ के संस्थापक

राष्ट्र के पुनर्निर्माण के लिए राष्ट्रहित, उद्योगहित और श्रमिकहित परस्परविरोधी न होकर परस्परपूरक हैं, यह बात स्पष्ट करने के लिए मजदूर संघ ने "राष्ट्र का औद्योगीकरण, उद्योगों का श्रमिकीकरण, श्रमिकों का राष्ट्रीयकरण"– यह त्रिसूत्री सिद्धान्त अपनाया।

कम्युनिस्टों का नारा है– "दुनिया के मजदूरो! एक होओ।" मजदूर संघ का घोष–वाक्य है– "मजदूरो! दुनिया को एक करो" जो "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" और "स्वदेशो भुवनत्रयम्" के भारतीय चिन्तन के निकट है। मजदूर संघ द्वारा "कमाने वाला खायेगा" के स्थान पर "कमानेवाला खिलायेगा" को मान्यता दिया जाना भी इसके भारतीय चिन्तन को प्रकट करता है।

संगठनात्मक विकासयात्रा

संगठनात्मक दृष्टि से भारतीय मजदूर संघ केन्द्रीय श्रम–संगठन है। श्रमिक–जगत् के प्रत्येक अंग में कार्यरत महासंघ इससे संबद्ध होते हैं जिनके श्रमिक–संघ (यूनियन) स्थान–स्थान पर कार्यरत होते हैं। श्रमिक इन श्रमिक–संघों (यूनियनों) की सदस्यता लेते हैं।

भारतीय मजदूर संघ का प्रथम अखिल भारतीय अधिवेशन १९६७ में दिल्ली में हुआ। उस समय तक सात

महासंघ स्थापित हो चुके थे जिनके ५४१ श्रमिक–संघों (यूनियनों) की कुद सदस्य–संख्या २,४६,६०२ थी। उत्तरोत्तर प्रगति करते हुए १६६६ में भोपाल में हुए ग्यारहवें अखिल भारतीय अधिवेशन के समय २६ महासंघों के ३७३६ श्रमिक–संघों (यूनियनों) की कुल सदस्य–संख्या ४७,१८, ८३१ थी। भारतीय मजदूर संघ के पूर्णकालिक कार्यकर्त्ताओं की संख्या २०० से अधिक है।

श्रमिक–क्षेत्र में कार्यरत श्रम–संगठनों की सदस्यता के सत्यापन के आधार पर भारत सरकार उनके स्थान निर्धारित करती है। इसके अनुसार भारतीय मजदूर संघ १६८४ में दूसरे क्रमांक पर और १६६६ में दिए गए सत्यापन निर्णय के अनुसार १६८६ से सबसे बड़े श्रम–संगठन के रूप में प्रथम क्रमांक पर आया।

असंगठित मजदूर क्षेत्र

कुटीर व लघु उद्योग, हथकरघा, बीड़ी उद्योग, तेंदूपत्ता संग्रहण, मच्छीमार, हम्माल, घरेलू कामगार, होटल मजदूर इत्यादि असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत लोगों की ओर अन्य श्रमिक–संगठन ध्यान नहीं देते, परन्तु भारतीय मजदूर संघ इस क्षेत्र में भी सक्रिय है। विशेष रूप से बीड़ी उद्योग, मच्छीमार, कुटीर व लघु उद्योग और कुछ स्थानों पर घरेलू कामगारों के बीच इसका अच्छा कार्य है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के कारण बीड़ी उद्योग और मच्छीमार क्षेत्रों को बहुत आघात लगा है। छोटी सिगरेट के कारण बीड़ी और बड़े जहाजों से मच्छीमारी के कारण मच्छीमार व्यवसाय प्रभावित हुआ है। मजदूर संघ 'स्वदेशी जागरण मंच' के साथ मिलकर इनके लिए काम करता है।

दूसरे स्वधीनता–संग्राम में भूमिका

बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से जो आर्थिक दासता लादने का प्रयास हो रहा है उसके विरुद्ध होने वाले संघर्ष में मजदूर संघ 'स्वदेशी जागरण मंच' के साथ अग्रणी है और इस दृष्टि से जनजागरण से लेकर अन्य संगठनों को साथ लेकर संघर्ष करने तक के सब प्रकार के प्रयास वह करता है। डंकल–प्रस्तावों के विरोध में मजदूर संघ ने २० अप्रैल १६६३ को दिल्ली के लालकिले पर अखिल भारतीय प्रदर्शन किया जिसमें सारे देश से १ लाख से अधिक श्रमिक (मजदूर) सम्मिलित हुए। मजदूर संघ के प्रयासों से डंकल–प्रस्ताव के अत्यंत घातक बौद्धिक संपदा अधिकारों का विरोध करने के लिए 'National Parliamentarian Forum on Interllectual Property Act' का गठन हुआ जिसमें डॉ० मुरली मनोहर जोशी (भाजपा), श्री इन्द्रजीत गुप्त (कम्युनिस्ट), श्री अरुण अरोड़ा (मार्क्सवादी कम्युनिस्ट), श्री जयपाल रेड्डी (जनता दल) और जॉर्ज फर्नांडीस (समता पार्टी) सदस्य हैं। इसी दृष्टि से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर गठित मंच (फोरम) में ८३ देश सम्मिलित हैं। डंकल–प्रस्तावों का विरोध करने के लिए मजदूर संघ के प्रयासों से अनेक श्रमिक–संगठनों ने मिलकर 'राष्ट्रीय अभियान समिति' (National Campaign Committee) बनायी है जिसमें इंटक को छोड़कर अन्य सभी प्रमुख श्रमिक–संगठन सम्मिलित हैं। इस प्रकार बाह्य संकटों का सामना करने के लिए मजदूर संघ "वयं पंचाधिकं शतम्" वाली कहावत को चरितार्थ कर रहा है।

प्रभाव

अंतरराष्ट्रीय श्रम–संगठन (International Labour Organization, I.L.O.) के सम्मेलनों में मजदूर संघ को १६७७ से आमंत्रित किया जा रहा है। जून १६६४ के जिनेवा सम्मेलन में अंतर्राष्ट्रीय पारिश्रमिक मानक (uniform wages) लाने का प्रयास किया गया। विभिन्न देशों की स्थिति भिन्न–भिन्न होने के कारण इससे विकासशील और अविकसित देशों को हानि तथा विकसित देशों को लाभ होने वाला था। परन्तु उस प्रस्ताव पर सब प्रतिनिधि मौन बैठे रहे। ऐसे में भारतीय मजदूर संघ के प्रतिनिधि ने उस प्रस्ताव का विरोध किया जिसे बाद में अन्य प्रतिनिधियों का भी समर्थन मिला और विकसित देशों का यह प्रयास विफल रहा।

मजदूर संघ की मान्यता है कि श्रमिक-संगठनों का स्वरूप अराजनीतिक होना चाहिये। १६६० में मास्को में हुए श्रम–संगठनों के विश्व–सम्मेलन में भारतीय मजदूर संघ को विशेष आमंत्रित के रूप में बुलाया गया। इसमें मजदूर संघ के विचार को मान्यता मिली और श्रम–संगठनों का स्वरूप अराजनीतिक हो, इस प्रकार का प्रस्ताव पारित हुआ।

चीन के एकमात्र श्रम–संगठन के निमंत्रण पर मजदूर संघ के पाँच सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल ने अप्रैल १६८५ में चीन की यात्रा की। विशेष बात यह है कि उस समय चीनी सरकार ने प्रतिनिधिमंडल के नेता श्री दत्तोपंत जी को रेडियो से भाषण देने के लिए

आमंत्रित किया और उनका भाषण बीजिंग रेडियो से प्रसारित हुआ।

अन्य कार्य

श्रमिकों को अनेक बार ऋण लेने की आवश्यकता होती है और इस कारण उनका शोषण होता है। अतः मजदूर संघ ने 'क्रेडिट को–ऑपरेटिव सोसाइटी' के नाम से श्रमिकों की सहकारी संस्थाएँ बनाकर सरल शर्तों पर ऋण की व्यवस्था प्रारम्भ की। इस समय देश में ऐसी ६०० से अधिक सहकारी संस्थाएँ हैं।

श्रम–विषयक प्रश्नों पर विचार करने के लिए श्रमिक (मजदूर), स्वामी (मालिक) और सरकार के प्रतिनिधियों को एक मंच पर लाने के उद्देश्य को लेकर १९८० में 'भारतीय श्रम शोध मंडल' बनाया गया। इसके अन्तर्गत वार्तालाप के साथ सर्वेक्षण और प्रकाशन का कार्य भी किया जाता है।

श्रमिकों को उनके कर्तव्य, अधिकार इत्यादि महत्त्वपूर्ण विषयों पर प्रशिक्षित करने की दृष्टि से १९८३ में 'विश्वकर्मा श्रमिक शिक्षा संस्थान' का कार्य प्रारंभ किया गया। श्रमिक (मजदूर) स्वामी (मालिक) और सरकार के प्रतिनिधियों को एक मंच पर लाने के उद्देश्य को लेकर १९८० में 'भारतीय श्रम शोध मंडल' बनाया गया। इसके अन्तर्गत वार्तालाप के साथ सर्वेक्षण और प्रकाशन का कार्य भी किया जाता है।

भारत में लगभग २ करोड़ बाल श्रमिक हैं। इनके लिए मजदूर संघ ने कुछ उपक्रम चलाये हैं जिनके अन्तर्गत बाल श्रमिकों को मुक्त करने के लिए उनके अभिभावकों को समझाने का प्रयास और उनकी शिक्षा के लिए सायं–रात्रि–विद्यालय चलाना सम्मिलित है।

विभिन्न राष्ट्रीय समस्याओं पर भारतीय मजदूर संघ रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाता है। समाज को एक करने की दृष्टि से १९९४ में उसने 'सर्वपंथ समादर मंच' का गठन किया। इसके स्थापना अधिवेशन का उद्घाटन मुस्लिम मतानुयायी मौलाना वहीदुद्दीन ने किया और अध्यक्षता पारसी मतानुयायी श्री जाल पी. जिमी (नागपुर विश्वविद्यालय के पूर्व–कुलपति) ने की। हिन्दू–मुस्लिम एकता के प्रयास में बलिदान हुए स्व० गणेश शंकर विद्यार्थी के बलिदान–दिवस २५ मार्च को यह मंच 'एकात्म दिवस' के रूप में मनाता है।

१९९५ में 'पर्यावरण–मंच' स्थापित किया गया। इसके द्वारा वृक्षारोपण, वृक्ष–संवर्धन, पर्यावरण–रक्षा इत्यादि पर प्रबोधन किया जाता है। भोपाल गैस त्रासदी दिवस ३ दिसम्बर को 'और भोपाल नहीं दिवस' ('No More Bhopal day') के रूप में मनाया जाता है।

मजदूर संघ द्वारा 'विश्वकर्मा चेतना' नामक हिन्दी और 'विश्वकर्मा संकेत' नामक अंग्रेजी मासिक का प्रकाशन केन्द्रीय स्तर पर किया जाता है। प्रान्तीय स्तर पर १५ पत्रिकाएँ भी निकलती हैं। □

स्वदेशी का अर्थ

स्वदेशी की भावना का अर्थ है हमारी वह भावना, जो हमें दूर का छोड़कर अपने समीपवर्ती परिवेश का ही उपयोग और सेवा करना सिखाती है। उदाहरण के लिए इस परिभाषा के अनुसार धर्म के संबंध में यह कहा जाएगा कि मुझे अपने पूर्वजों से प्राप्त धर्म का पालन करना चाहिए (क्योंकि उससे मुझे धार्मिक वातावरण सहज ही प्राप्त हो जाता है)। यदि मैं उसमें दोष पाऊँ तो मुझे उन दोषों को दूर करके उस धर्म की सेवा करना चाहिए। इसी तरह राजनीति के क्षेत्र में मुझे स्थानीय संस्थाओं को महत्त्व देना तथा उनका उपयोग करना चाहिए और उनके जाने–माने दोषों को दूर करके उनकी सेवा करना चाहिए। अर्थ के क्षेत्र में मुझे अपने पड़ोसियों द्वारा बनाई गई वस्तुओं का ही उपयोग करना चाहिए और उन उद्योगों की कमियाँ दूर करके, उन्हें ज्यादा संपूर्ण और कार्यक्षम बनाकर उनकी सेवा करनी चाहिए।

□ महात्मा गाँधी, १९२३

विदेशों में संघ

□ योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

संघ के एक–दूसरे से अपरिचित दो स्वयंसेवक श्री जगदीश शास्त्री और श्री सहाणी नवम्बर १६४६ में पानी के जहाज से केन्या जा रहे थे। एक दिन सायंकाल जहाज के डेक पर दोनों ने संघ की प्रार्थना की। यही भारत की धरती के बाहर संघ की प्रथम प्रार्थना हुई। बाद में केन्या के नगर मोम्बासा में १६४७ की मकर–संक्रांति के दिन 'भारतीय स्वयंसेवक संघ' के नाम से संघ की शाखा प्रारम्भ हुई। तत्पश्चात् संघ की शाखाएँ केन्या के अन्य स्थानों पर और तंजानिया, युगांडा इत्यादि अन्य अफ्रीकी देशों में भी प्रारम्भ हुईं।

इंग्लैण्ड में गुरुपूर्णिमा के अवसर पर १६६६ में संघ–कार्य 'हिन्दू स्वयंसेवक संघ' नाम से प्रारम्भ हुआ और धीरे–धीरे अन्य पूरोपीय देशों में फैल गया। अमरीका और कनाडा में १६७५ में 'हिन्दू स्वयंसेवक संघ, का काम प्रारम्भ हुआ। पूर्वी देशों में यह कार्य 'हिन्दू सेवा संघ' और ब्रह्मदेश में 'सनातन धर्म स्वयंसेवक संघ' नाम से चलता है।

इस प्रकार विश्व में संघकार्य शुरू हुआ और वर्तमान में २७ देशों में कुल २०० उपशाखाएँ लगती हैं। इनके अतिरिक्त २० अन्य देशों में संघमंडली जैसा कार्य चलता है। विश्व विभाग का कार्य देखने के लिए वर्तमान में कुल २० प्रचारक हैं।

इंग्लैण्ड, अमरीका, केन्या, दक्षिण अफ्रीका, त्रिनिदाद, आस्ट्रेलिया, ब्रह्मदेश और मलयेशिया में कार्यकर्त्ताओं के लिए वार्षिक प्रशिक्षण–वर्ग लगते हैं। दो–तीन दिन के शिविर अनेक देशों में लगते हैं।

सात देशों से नियतकालिक सूचना–संवाद–पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है जिनमें से दिल्ली से निकलने वाला पाक्षिक 'संवाद' ६२ देशों में पहुँचता है।

विशेष आयोजन

१६८४ में अमरीका में हिन्दू–सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें २५ देशों से ५००० प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। इसमें अमरीकी राष्ट्रपति के दो प्रतिनिधियों ने भाग लिया। भारत से जैन मुनि सुशीलकुमार जी, स्वामी चिन्मयानन्द जी और तत्कालीन सह–सरकार्यवाह श्री हो०वे० शेषाद्रि जी का मार्गदर्शन सम्मेलन को प्राप्त हुआ।

१६८४ में इंग्लैण्ड में हिन्दू मैराथन (दौड़) का प्रारम्भ हुआ। प्रथम आयोजन ब्रेडफोर्ड में हुआ जिसमें १२०० लोगों ने भाग लिया। तब से प्रतिवर्ष बर्मिंघम, लंदन, लीसेस्टर, मैंचेस्टर, मिल्टन केन्स, रग्बी इत्यादि विभिन्न स्थानों पर इस का आयोजन होता है। प्रतिवर्ष भाग लेने वालों की संख्या बढ़ती गयी और यह इंग्लैण्ड में इस प्रकार की दूसरे क्रमांक की प्रतियोगिता बन गयी है। इसमें इंग्लैण्ड के अतिरिक्त अन्य यूरोपीय देश तथा भारत, केन्या, मोरक्को, इथोपिया के एथलीट भी भाग लेते हैं। १६६७ में यह प्रतियोगिता ब्रेडफोर्ड में हुई जिसमें ३५ देशों के ११ हजार से अधिक लोगों ने भाग लिया।

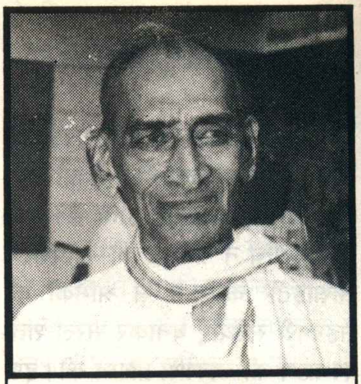

लक्ष्मण श्रीकृष्ण भिड़े,
विदेश विभाग प्रमुख

केन्या में संघ–कार्य के ४० वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष में वहाँ १६८७–८८ में एक बड़ा आयोजन हुआ जिसमें स्व० यादवराव जोशी पधारे थे। केन्या जाते समय चार दिन उनका मारीशस में प्रवास हुआ।

१६८६ में डॉ० हेडगेवार जन्म–शताब्दी के अवसर पर अनेक देशों में कार्यक्रम हुए। इंग्लैण्ड में हुए एक कार्यक्रम में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती मार्गरेट थैचर पधारीं। उन्होंने प०पू० डॉक्टर जी की प्रतिमा को माल्यार्पण किया और भगवा ध्वज फहराया (इससे स्वयंसेवकों को डॉक्टर जी के बचपन की दो घटनाओं का बरबस स्मरण हो आया। डॉक्टर जी द्वारा इंग्लैण्ड की महारानी के राज्याभिषेक की जयन्ती के अवसर पर बँटी मिठाई को फेंक दिया जाना और नागपुर के सीताबर्डी किले पर फहराने वाले अंग्रेजों के झंडे को उखाड़कर वहाँ भगवा ध्वज फहराने के लिए सुरंग खोदना)। मिल्टन केन्स में विराट हिन्दू सम्मेलन हुआ

जिसमें संख्या थी १,२०,००० । यह भारत के बाहर का अब तक का सबसे बड़ा हिन्दू सम्मेलन था।

अन्य कार्य

विदेशस्थ स्वयंसेवक स्थानीय स्तर के सेवाकार्यों में *'सेवा इंटरनेशनल'* के तत्त्वावधान में सदैव सक्रिय रहते हैं और स्थानीय जनता से उनके आत्मीय संबंध रहते हैं।

इंग्लैण्ड में 'Hindu Vigil' के नाम से स्वयंसेवक सक्रिय और जागरूक हैं। इसके माध्यम से वे हिन्दू समाज के बारे में फैली गलत धारणाएँ दूर कर सही चित्र प्रस्तुत करते हैं और शासन तथा जन–प्रतिनिधियों को हिन्दू समाज की आकांक्षाओं के बारे में बताते रहते हैं। अयोध्या–प्रकरण के समय हिन्दू समाज के लिए प्रयुकत होने वाले शब्द 'fundamentalist' का हिन्दू विजिल ने विरोध किया और कहा कि उसके स्थान पर 'assertive' (आग्रही) शब्द होना चाहिये। लंदन के सनराइज रेडियो से २० दिसम्बर १९९४ के प्रसारण में संघ को महात्मा गाँधी का हत्यारा बताये जाने पर हिन्दू विजिल ने इसका विरोध किया जिसके कारण उक्त रोडियो ने क्षमायाचना की।

ब्रह्मदेश में श्री रामप्रकाश धीर द्वारा संचालित 'बौद्ध प्रदर्शनी' अत्यंत लोकप्रिय है। इससे वहाँ के बौद्धों को हिन्दू संस्कृति से उनकी निकटता का ज्ञान हो रहा है। थाईलैण्ड की राजधानी बैंकाक में भी भगवान् बुद्ध के जीवन पर प्रदर्शनी बनायी गयी है।

विश्व–संघ–शिविर एवं विश्व–संघ–शिक्षा–वर्ग

दिसम्बर १९९० में प्रथम विश्व–संघ–शिविर बंगलूर में संपन्न हुआ जिसमें २० देशों के कार्यकर्ता सपरिवार सम्मिलित हुए। दिसम्बर १९९५ में दूसरा विश्व–संघ–शिविर बड़ोदरा में लगा जिसमें २६ देशों से ३७६ संख्या थी जिनमें ७५ महिलाएँ भी थीं। विश्व–संघ–शिक्षा–वर्ग का आयोजन भी बंगलूर में १९९२ और १९९७ में हो चुका हे। १९९७ के वर्ग में ८ देशों से ६२ शिक्षार्थी उपस्थित हुए।

प०पू० सरसंघचालक जी का विदेश–प्रवास

संघ के इतिहास में प्रथम बार किसी सरसंघचालक का विदेश–प्रवास १९९५ में हुआ जब मा० रज्जूभय्या यूरोप के प्रवास पर गये। (वैसे इससे पूर्व वे १९८२ में सरकार्यवाह के रूप में इंग्लैण्ड ओर १९८६ में सहसरकार्यवाह के रूप में अफ्रीका का प्रवास कर चुके थे।) १४ से २४ अप्रैल तक हुए इस प्रवास में वे इंग्लैण्ड और हालैण्ड गये। अन्यान्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त उन्होंने लेस्टर (इंग्लैण्ड) में कार्यालय का उद्घाटना किया और रॉटरडम (हालैण्ड) में यूरोपीय संघ–शिविर में गये। 'फ्रेंड्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी इंटरनेशनल' (FISI) द्वारा लंदन में आयोजित आम्बेडकर–जयन्ती कार्यक्रम में भी १४ अप्रैल को सरसंघचालक जी का भाषण हुआ।

सरसंघचालक जी का दूसरा विदेश–प्रवास ११ से २८ जनवरी १९९७ में केन्या, दक्षिण अफ्रीका और मारीशस में हुआ। मुख्य आयोजन था केन्या के कार्य– 'हिन्दू स्वयंसेवक संघ' के पचास वर्ष। नैरोबी के इस मुख्य आयोजन के अतिरिक्त प्रवास में अन्य अनेक कार्यक्रम हुए और अनेक विशिष्ट लोगों से भेंट हुई। केन्या में दूरदर्शन तथा दक्षिण अफ्रीका में रेडियो और दूरदर्शन पर मा० रज्जू भय्या की भेंटवार्ता प्रसारित की गयी। मारीशस रेडियो ने अपने लोकप्रिय सीधे (Live) रेडियो कार्यक्रम 'वार्ता' के लिए उन्हें बुलाया। भारत के बाहर अमरीका के ओरलैंडो में एकमात्र हिन्दू विश्वविद्यालय था। दूसरा केन्या के नैरोबी में प्रारंभ हुआ जिसका उद्घाटन मा० रज्जूभय्या द्वारा किया गया।

विगत ६ अगस्त से २६ अगस्त तक संघ के सहसरकार्यवाह श्री मदनदास अमेरिका एवं कनाडा के प्रवास पर गये। वहाँ उन्होंने हिन्दू स्वयंसेवक संघ, अमेरिका की कार्यकारिणी की एक बैठक में भाग लिया। वहाँ चल रहे संघ–कार्य की समीक्षा की तथा आगामी योजनाओं पर विचार–विमर्श किया। इन दोनों देशों में संघ के स्वयंसेवक भारतीय अस्मिता के निर्माण, भारतीय संस्कृति के संरक्षण तथा बच्चों में हिन्दू संस्कार देने का कार्य कर रहे हैं। साथ ही सभी हिन्दू एकजुट रहें तथा भारत के सुख–दुःख में समरस रहें, यह भाव जगाने का भी प्रयास वे करते हैं। सितम्बर मास में अपनी अमेरिका यात्रा के मध्य प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी द्वारा भारतीय मूल के अमेरिकी निवासियों के मध्य हुआ यशस्वी कार्यक्रम वहाँ चलने वाले संघ–कार्य के फलस्वरूप ही सम्भव हो सका है।

इसी अगस्त मास में संघ के सरसंघचालक श्री कुप्.सी. सुदर्शन ने सूरीनाम, गुयाना, त्रिनिदाद, नीदरलैंड एवं अमेरिका आदि देशों का दौरा किया। अपने इस महत्त्वपूर्ण प्रवास के दौरान

उन्होंने त्रिनिदाद में आयोजित 'विश्व हिन्दू सम्मेलन– २०००' में भाग लिया। संघ–स्वयंसेवकों के प्रयास से वहाँ दीपावली को 'राष्ट्रीय त्योहार' घोषित किया गया है। इस जागृति को लाने में श्री रवीन्द्र महाराज का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान है। ब्रिटेन में विविधता में एकता विषय पर श्री सुदर्शन का उद्‌बोधन अत्यन्त प्रभावशाली रहा।

लीसेस्टर संघ शिक्षा वर्ग

पिछले दिनों ब्रिटेन के सोरवैली कम्युनिटी कालेज, लीसेस्टर में हिन्दू स्वयंसेवक संघ का संघ शिक्षा वर्ग सम्पन्न हुआ। इस शिविर में ब्रिटेन के २३ नगरों से वहीं जन्म लेने वाले तथा बड़े हुए १२७ तरुण स्वयंसेवकों ने संघ–कार्य संबंधी प्रशिक्षण प्राप्त किया। रा०स्व० संघ के अखिल भारतीय सह सम्पर्क प्रमुख डा० श्रीपति शास्त्री विशेष रूप से इस शिविर में पूरे समय उपस्थि रहे तथा भारत में भानुपुरा पीठ के पूज्य शंकराचार्य स्वामी दिव्यानन्द तीर्थ महाराज ने इन संघ–शिक्षार्थियों को जीवन में अनुशासन एवं समर्पण की भावना का महत्व अत्यन्त प्रभावशाली शैली में स्पष्ट किया। भारत से बाहर विदेशों के विभिन्न देशों में चल रहे संघ–कार्य का कुशल मार्ग निर्देशन संघ के वरिष्ठ प्रचारक श्री लक्ष्मण श्रीकृष्ण भिड़े तथा डा० शंकर तत्ववादी के द्वारा योग्य रीति से किया जा रहा है। □

विवेकानन्द शिला स्मारक का निर्माण

१९६२ में चीन के साथ हुए युद्ध में अपने देश का जो बुरी तरह से पराभव हुआ था उससे भारत का जनमानस बहुत ही दुःखी और आहत था। उस समय देश के मन को अपने स्वाभाविक आत्मतेज से खड़ा करने की सबसे अधिक आवश्यकता थी। उस दृष्टि से एक जनजागरण का अभियान सोचा गया। यह तो दैवी संयोग ही कहना चाहिए कि १९६३ में स्वामी विवेकानन्द जी के जन्म शताब्दी का शुभ अवसर भी प्रस्तुत हुआ तथा उस अभियान के लिए अनुरूप प्रेरक विषय भी उपलब्ध हो गया। स्वामी विवेकानन्द जी अमेरिका जाने के पहले तीन दिन तक कन्याकुमारी के तट से थोड़ी दूर समुद्र के बीच में स्थित एक बड़े शिलाखण्ड पर बैठकर भारत के भविष्य के बारे में तन्मय होकर सोचते रहे और वहीं पर उन्होंने अपने आगे के जीवनकार्य के विषय में भी निश्चय किया। इसलिए उस पवित्र, राष्ट्रीय महत्व के चट्टान पर स्वामी विवेकानन्द जी का एक भव्य स्मारक निर्माण करने का संकल्प किया गया।

इस कार्य के महत्व को ध्यान में रखकर उस समय के संघ के सरकार्यवाह श्री एकनाथजी रानडे को ही इस कार्य के लिए मुक्त कर दिया गया। ईसाइयों के अड़ंगे लगाने के हार प्रकार के प्रयास भी होते रहे; परनतु और भी कई अड़चनों को अपनी असामान्य कुशलता और सतत् प्रयास के बल पर दूर करते हुए एकनाथ जी विवेकानन्द शिला स्मारक काकाम शुरू करने में सफल हुए। उस कार्य के लिए आवश्यक धन संग्रह हेतु देशभर में स्वयंसेवकों ने व्यापक परिमाण में जनसंपर्क का अभियान हाथ में लिया। कुछ हितैषी धनिक लोगों और प्रान्तीय सरकारों ने भी अपना सहयोग–हस्त आगे बढ़ाया। धन–संग्रह के साथ–साथ विवेकानन्द जी के राष्ट्र जागरण का संदेश लेकर हजारों विद्यालयों–महाविद्यालयों में वक्तओं के प्रभावी भाषण हुए। साथ ही स्वामी जी के प्रेरक विचारों की पुस्तिकाएँ भी सभी भाषाओं में प्रचारित की गयीं। आखिर में अभियान के सुखद समापन के नाते १९७० में उस विवेकानन्द शिला पर राष्ट्रीय प्रेरणा के दीपस्तम्भ के रूप में अत्यन्त भव्य विवेकानन्द स्मारक खड़ा हो गया, जो अब भारत के एक महान तीर्थ स्थान के रूप में स्थापित होकर प्रतिवर्ष लाखों तीर्थयात्रियों को अपनी ओर आकर्षि कर रहा है। □

रा०स्व० संघ के ७५ वर्ष

□ माधव गोविन्द वैद्य

विक्रमी संवत् १९८२ (सन् १९२५) की विजयादशमी के पावन पर्व पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना हुई। स्थापना के चार–पाँच वर्ष बाद की घटना है। नागपुर में हिन्दू–मुस्लिम दंगे का वातावरण था। सन् १९२७ में दंगा हो चुका था। उसमें मुसलमानों की ही अधिक क्षति हुई थी। मुसलमान इसका बदला लेने का अवसर ढूँढ़ रहे थे। ऐसे वातावरण में एक हिन्दुत्वनिष्ठ नेता डॉ० हेडगेवार के पास आये और प्रश्न किया "नागपुर में हिन्दू –मुस्लिम दंगा हुआ तो आपका संघ क्या करेगा ?" डॉक्टर जी ने उत्तर दिया "मैं सभी स्वयंसेवकों को कार्यालय में बुलाऊँगा और रजाइयाँ ओढ़कर सो जाने को कहूँगा।"

सम्पूर्ण समाज का संगठन

डाक्टर जी का अभिप्राय यह था कि दंगे के समय लोग घर में बैठ जायें और संघ के स्वयंसेवक उनकी रक्षा में आयें, यह सम्भव नहीं है। संघ कोई अखाड़ा या पुलिस दल नहीं है। संघ का उद्देश्य सम्पूर्ण हिन्दू समाज को संगठित करना है।

कालान्तर में संघ में प्रचारक व्यवस्था बनी। डाक्टर जी ने न अपना दवाखाना खोला और न विवाह कर घर बसाया। वे तो प्रारम्भ से ही प्रचारक ही थे। उनका जीवन संन्यासी जीवन ही था। लेकिन उनकी वेशभूषा सामान्य लोगों की तरह ही थी। बाबा साहब आप्टे, दादाराव परमार्थ, रामभाऊ जामगड़े प्रारम्भ के प्रचारक अर्थात संन्यासी ही थे। द्वितीय सरसंघचालक पू०मा०स० गोलवलकर उपाख्य गुरुजी के कार्यकाल में प्रचारकों की संख्या काफी बढ़ गई। यह एक व्यवस्था बन गई। लेकिन गुरुजी ने प्रचारकों के लिए कोई अलग वेश भूषा नहीं रखी। डा० हेडगेवार ने भगवा वस्त्र धारण करने को नहीं कहा। सभी स्वयंसेवकों के लिए, कार्यक्रम की दृष्टि से एक गणवेश संघ ने निश्चित किया, लेकिन उसका महत्व कार्यक्रम तक ही सीमित रखा। इसका उद्देश्य संघ के संपूर्ण समाज का संगठन बनाना था, न कि समाजान्तर्गत अलग संगठन।

संगठन का एक अर्थ

अनेक लोगों ने संघ की भूमिका का ठीक आकलन नहीं किया है, जिसके कारण अनेक भ्रम उत्पन्न हुये। डाक्टर जी का हिन्दू महासभा और डा० मुञ्जे सरीखे नेताओं से घनिष्ठ सम्बन्ध था। इस कारण हिन्दू महासभा संघ को अपना एक स्वयंसेवक संगठन ही समझती रही। लेकिन इस भ्रम का निराकरण समय के साथ हो गया। संघ का प्रारम्भ से ही यह लक्ष्य रहा है कि जिन जातियों और वर्गों से यह हिन्दू समाज बना है, उन सभी का संघ में समान स्थान होना चाहिए। सन् १९३२ में संघ के पहले शीतकालीन शिविर में कुछ ऐसे स्वयंसेवक भी आये थे जिन्हें अस्पृश्य कहा जाता था। कुछ लोगों के ध्यान में आने पर वे डाक्टर जी के पास गये और उनसे कहा कि उनके साथ एक पंक्ति में बैठकर भोजन नहीं करेंगे। किन्तु डाक्टर जी कहा मैं तो उन्हीं के साथ भोजन करूँगा, आप अलग बैठने के लिए स्वतन्त्र हैं।

उन १०–१२ लोगों ने पृथक बैठकर भोजन किया परन्तु वे अत्यन्त लज्जित हुए और सह भोजन करने लगे। यह कार्यपद्धति ऐसी थी जिसमें अस्पृश्य समझे जाने वाले वर्ग के स्वयंसेवकों में किसी प्रकार की हीन–भावना नहीं उत्पन्न हुई और न ही आपसी द्वेष पैदा हुआ।

जाति–पाँति रहित एकात्म एवं एकरस संघ कैसे बना यह लोग समझ ही नहीं पाये।

संघ के विषय में अनेक भ्रम प्रारम्भ से ही रहे। सन् १९४६ में केन्द्रीय गृहविभाग के सचिव ने श्री गुरुजी को एक पत्र लिखा था जिसमें सरदार पटेल की ओर से यह लिखा गया था कि संघ के अधिकारियों में एक ही प्रदेश व जाति के लोग दिखते हैं। श्री गुरु जी ने सरदार पटेल को सूचित किया कि, "आपने कई हजार स्वयंसेवकों को जेलों में बन्द कर रखा है, उनकी जाति और प्रान्त की जानकारी एकत्र कर लें तो भ्रम दूर हो जायेगा।"

समाज का स्वरूप

"सम्पूर्ण समाज के संगठन का

अधिक गहरा और व्यापक अर्थ भी है। समाज में विविध क्षेत्र होते हैं। वे कभी एक रंगी नहीं होते। संघ की समस्त गतिविधियों का एक ही लक्ष्य है "हिन्दू राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति।" संघ की प्रार्थना में "परं वैभवं नेतुमेतत् स्वराष्ट्रं" ऐसी शब्दावली है। इसका यही अर्थ है। सम्पूर्ण हिन्दू समाज का उत्थान और विकास यही संघ का लक्ष्य है। संघ सम्पूर्ण समाज का संगठन है, इसका अर्थ यह है कि आधारभूत पावरहाउस के सम्पर्क और संबंध से भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में प्रकाश और ऊर्जा की व्यवस्था होनी चाहिए।

प्रारम्भ के दिनों में संघ

जब संघ की स्थापना हुई तब अपना देश परतन्त्र था। गुलामी की स्थिति में समाज की सर्वांगीण रचना सम्भव नहीं थी। इसीलिए संघ की प्रारम्भिक प्रतिज्ञा में "हिन्दू राष्ट्र को स्वतन्त्रत करके" यह शब्दावली थी। सन् १९४५ में द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होने पर जागतिक परिस्थिति के कारण १९४७ में भारत को स्वतंत्रता मिली। लेकिन भारत को स्वतंत्र करते समय इंग्लैण्ड ने अपनी कुछ शर्तें भारत पर लादीं जिन्हें कांग्रेस ने मान्य किया।

विभाजन के उपरान्त

विभाजन की स्वीकृति देने वाले नेताओं ने हिन्दुओं का क्या हश्र होगा इस पर विचार भी नहीं किया। पिछले लगभग एक हजार वर्ष में मुस्लिम समाज का जो अनुभव पूरे संसार को हुआ उसे नेताओं ने अनदेखा कर दिया। परिणाम यह हुआ कि क्रूर भेड़ियों के चंगुल में आने वाले भेड़ों की स्थिति पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दुओं की हो गयी। किसी महायुद्ध में इतने लोग नहीं मरे होंगे उतनी हत्यायें इस विभाजन से हुई। महिलाओं की इज्जत लूटी गयी। दो करोड़ लोग शरणार्थी हो गये। ऐसे संकटकाल में अपने भाइयों को सुरक्षित रूप से भारत लाने, उन्हें बसाने और देखभाल करने के काम में संघ लगा रहा। ऐसे कठिन समय में एक दुर्घटना और हो गयी। ३० जनवरी १९४८ को गांधी जी की हत्या हो गयी और संघ के विरुद्ध शासन ने जेहाद छेड़ दिया। यह एकपक्षीय युद्ध था। संघ को एक अग्निपरीक्षा से गुजरना पड़ा। ऐसे समय में सरसंघचालक श्रीगुरुजी के संयम, धैर्य, सत्यनिष्ठा, स्वाभिमान और कुशलता आदि गुणों की परीक्षा हुई। संघर्ष तो बहुत विषम था परन्तु जेल में एकान्तवास में संन्यस्तवृत्ति के व्यक्ति के रूप में गुरुजी की विजय हुई। संघ पर से प्रतिबन्ध हटा और पुनः संघ की गतिविधियाँ नये उत्साह से प्रारम्भ हुईं।

बदलती परिस्थिति में

अब परिस्थिति बदल चुकी है। जो लोग स्वतंत्रता प्राप्ति को ही एकमात्र लक्ष्य मान बैठे थे उन्हें लगा कि अब संघ की आवश्यकता समाप्त हो चुकी है। श्री गुरुजी को वास्तविकता का ज्ञान था और समाज के सर्वांगीण विकास के भवन को खड़ा करना था। उन्होंने संघ के मौलिक कार्य को विस्मृत नहीं होने दिया। उन्हें बदलती परिस्थिति का आभास था। १९४५ में द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने पर रूस की जो विजय हुई उसके कारण कम्युनिज्म की प्रतिष्ठा काफी बढ़ गयी। तमाम बुद्धिजीवी समाजवाद और कम्युनिज्म से प्रभावित थे। अमीर घरों के लड़के भी समाजवादी और कम्युनिस्ट बनने लगे। अमेरिका में जिस तरह समृद्धि ने हिप्पियों को जन्म दिया उसी तरह भारतीय अमीरी ने समाजवादी और कम्युनिस्ट कार्यकर्त्ताओं को जन्म दिया। उसका प्रभाव शिक्षा के क्षेत्र में भी काफी पड़ा। इसलिए संघ की प्रेरणा से प्रथम 'विद्यार्थी परिषद्' की स्थापना हुई। आज पचास वर्ष बाद शिक्षा के क्षेत्र में विद्यार्थी परिषद् इस क्षेत्र का सर्वोपरि संगठन है। ऐसा संगठन जिसमें शिक्षकों की भी सहभागिता है। यह संघ के विचारों का प्रकटीकरण है।

राजनीतिक क्षेत्र

गाँधी हत्या को लेकर संघ पर लगे प्रतिबन्ध से संघ के अन्दर राजनीतिक क्षेत्र के विषय में विचार प्रारम्भ हो गया। इसी बीच डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी नेहरू मंत्रिमंडल से अलग हो गए तथा उन्होंने भारतीय जनसंघ की स्थापना करने के साथ–साथ संघ से सहायता माँगी। सर्वश्री दीनदयाल उपाध्याय, अटल बिहाहरी वाजपेयी, नाना जी देशमुख, रामप्रसाद दास, कैलाशपति मिश्र, कुशाभाऊ ठाकरे, रामभाऊ गोडबोले, गोपाल ठाकुर, जगन्नाथराव जोशी आदि उसमें सम्मिलित हुए किन्तु उन्हें यह स्पष्ट कर दिया गया कि उन्हें जनसंघ का संगठन स्वयं खड़ा करना है। इन कार्यकर्ताताओं और डा० मुखर्जी के प्रयासों ने अमेरिका की साँठ–गाँठ से जम्मू–कश्मीर को भारत से अलग करने के शेख अब्दुल्ला के षड्यत्र को विफल बना दिया, यद्यपि इसके लिए डा० मुखर्जी को अपने प्राणों की बलि चढ़ानी

पड़ी।

फिर भी ये कार्यकर्ता निरुत्साहित नहीं हुए तथा अपने अथक प्रयासों से वे जनसंघ को प्रभावशाली बनाते चले गये। १९६७ के चौथे आमचुनाव में जनसंघ को व्यापक सफलता मिली और डा० राममनोहिर लोहिया के गैर–कांग्रेसवाद के आधार पर अन्य राजनीतिक दलों के सहयोग से अनेक प्रदेशों में संविद सरकारें बनीं।

लेकिन कुछ ही समय बाद कांग्रेस के विभाजन और बंगला देश की स्वतन्त्रता से देश में इन्दिरा गाँधी का वर्चस्व बढ़ गया। सत्ता मद में चूर उन्होंने जून १९७५ में सम्पूर्ण देश में आपात्काल लागू कर देश को एक बड़ा कारागार बना डाला। जयप्रकाश नारायण की लोक संघर्ष समिति के अन्तर्गत संघ कार्यकत्ताओं की अगुवाई में जनसंघ सहित सभी गैर कांग्रेस (इ) तथा गैर कम्युनिस्ट दलों ने जबर्दस्त संघर्ष किया। मार्च, १९७७ में हुए चुनाव के समय इन दलों का विलय होकर जनता पार्टी बनी। जनसंघ ने अपने को उसमें विलीन करके प्रथम भूल की। उसके सदस्यों ने संघ के मुद्दे पर अप्रैल, १९८० में जनता पार्टी से अलग होकर जनसंघ को पुनर्जीवित न करके भारतीय जनता पार्टी का गठन किया। यह दूसरी गलती थी। तीसरी भूल भाजपा द्वारा एकात्म मानववाद को भुलाकर गाँधीवादी समाजवाद अपनाने की हुई। फलस्वरूप १९८४ के चुनाव में उसे लोकसभा में केवल २ स्थान मिले। तदुपरान्त जब भाजपा ने अपने को 'हिन्दुत्व' से एकाकार किया तो उसकी सदस्य संख्या लोकसभा में निरन्तर बढ़ती गई और १९९९ में वह १८२ पर पहुँच गई। लेकिन चौथी भूल उसने अपने राजनीतिक दर्शन को बंद बिस्तर में डालने की इस समय की है। इसी कारण उसकी वृद्धि रुक गई है।

भारतीय मजदूर संघ

राजनीति के क्षेत्र में संघ के विचार के प्रवेश के वाद संघ के श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी ने योजनापूर्वक इंडियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस (इंटक) से प्रशिक्षण लेकर भारतीय मजदूर संघ की स्थापना की। आज भारतीय मजदूर संघ सबसे बड़ा श्रमिक संघ है। वह राष्ट्रवाद पर आधारित है। पहली मई के स्थान पर विश्वकर्मा दिवस को श्रमिकों द्वारा राष्ट्रीय मजदूर दिवस के रूप में मनाया जाता है।

विश्व हिन्दू परिषद्

संवत् २०२१ (१९६४) में श्री गुरुजी ने एक महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी कदम उठाया। उन्होंने हिन्दुओं के सभी पंथो, संप्रदायों को एकत्रित करके विश्व हिन्दू परिषद् की स्थापना की। उसमें जैन, बौद्ध, सिख, सनातनी, वैदिक, आर्यसमाजी, शाक्त, शैव सभी आये और सभी ने हिन्दू नाम को स्वीकार किया। विश्व हिन्दू परिषद् ने एक नया संसार व्यापी लक्ष्य इन पंथों के प्रमुखों के समक्ष रखा और इसके माध्यम से क्रान्तिकारी परिवर्तन का लक्ष्य रखा। शंकराचार्य ने घोषणा की अस्पृश्यता हमारे धर्म का अंग नहीं है। सभी सन्त महन्तों ने घोषणा की, "न हिन्दू पतितो भवेत्" और हिन्दू धर्म में पुनः परावर्तन का मार्ग प्रशस्त किया।

वनवासी कल्याण आश्रम

मध्यप्रदेश के रायगढ़ जिले के जसपुर तालुका में वनवासियों के अज्ञान व दरिद्रता का लाभ उठाकर उन्हें ईसाई बनाने के दुष्कर्म को देखकर श्री बालासाहब देशपाण्डे ने श्री गुरुजी के आशीर्वाद से जमशेदपुर को अपना कार्यक्षेत्र बनाकर वनवासी कल्याण आश्रम की स्थापना की। उस सीमित क्षेत्र में कल्याण आश्रम की सफलता देखकर अखिल भारतीय वनवासी कल्याण आश्रम की स्थापना हुई। आज यह देशव्यापी है। हजारों एकल विद्यालय चल रहे हैं। इसके अतिरिक्त अस्पताल, दवाखानों आदि अनेक प्रकल्प चल रहे हैं। वनवासी कल्याण आश्रम के कारण ईसाईकरण पर रोक लगी है। यही नहीं उनकी 'घर वापसी' भी प्रारम्भ हो गयी है।

जब अच्छे विद्यालय की बात आती है तो ईसाइयों द्वारा संचालित कान्वेन्ट ही हैं, ऐसा प्रचार है। स्व० भाऊराव देवरस ने उ.प्र. में सरस्वती शिशु मंदिरों की स्थापना कर इस भ्रम को चुनौती दी। माध्यम हिन्दी, अपनी संस्कृति की शिक्षा और वह किसी ईसाई कॉन्वेंट से कम नहीं, ऐसे गुणों की विशिष्टता से युक्त शिशु मंदिरों की स्थापना। उसी में आगे माध्यमिक विद्यालय, उच्च माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना हुई और विद्या भारती का विशाल वृट वृक्ष खड़ा हुआ। आज विद्या भारती द्वारा संचालित विद्यालयों की संख्या लगभग १६ हजार है। ८७ हजार शिक्षक और २० लाख विद्यार्थी पढ़ते हैं। सारे विस्तार के लिए विद्या भारती ने सरकार से एक पैसा भी नहीं लिया। स्वतंत्रता के बाद व्यापार की वृद्धि से अनेक भारतीय विदेश गए। विदेशों में

व्यापार के निमित्त संघ के स्वयंसेवक भी विदेश गये। परन्तु वे स्वयंसेवकत्व भूले नहीं। उन्होंने अपने क्षेत्र में शाखायें प्रारम्भ कीं। सबसे पहले कीनिया, ब्रह्मदेश (म्यांमार) में शाखायें प्रारम्भ हुईं। यह कार्य अब ३३ देशों में फैल चुका है। इनके संचालन के लिए विश्व विभाग बना। उसके लिए अलग पृथक नाम व रचना प्रकाशित हुई। उसके लिए संघ सहायक बना।

राष्ट्र सेविका समिति

संघ में सिर्फ पुरुषों का प्रवेश है महिलाओं को नहीं, ऐसा कहा जाता है। सन् १९३६ में श्रीमती लक्ष्मीबाई केलकर आगे आयीं। वे डाक्टर जी के पास गयीं। संघ ने उनकी सहायता करना स्वीकार किया। राष्ट्र सेविका समिति की स्थापना हुई। इस समय समिति का कार्य भी पूरे देश–विदेशों में भी फैला है। आशय यह है कि संघ ने कोई प्रस्ताव पास करके आनुषंगिक कार्यों को प्रारम्भ किया, ऐसा नहीं। स्वयंसेवकों ने अपनी प्रतिभा से कार्यक्षेत्र का विस्तार किया और उस पर संघ की मुहर लगायी। अपने व्यक्तिगत काम को आगे नहीं किया। यही संघ के विचारों की विशिष्टता है। सब कुछ राष्ट्र को समर्पित। देश ही ध्येय है "राष्ट्राय स्वाहा इदं न मम्"। इसी प्रेरणा से किसान संघ, ग्राहक पंचायत, स्वदेशी जागरण मंच, स्वदेशी भारती, लघु उद्योग भारती, राष्ट्रीय सिख संगत, संस्कार भारती, प्रज्ञा प्रवाह, स्वदेशी विज्ञान परिषद् ऐसी अनेक भिन्न–भिन्न संस्थायें पिछले २५ वर्षों के कालों में अस्तित्व में आयीं और वे अपने–अपने क्षेत्र में प्रभाव दिखा रही हैं। इन संस्थाओं का प्रयास संघ के विचार को प्रश्रय है अर्थात् यह एकात्म, एकरस राष्ट्रभाव का प्रभाव है।

सेवाभारती

परन्तु संघ की प्रत्यक्ष योजना से प्रारम्भ किया एक महत्वपूर्ण कार्य पिछड़ी बस्तियों में प्रारम्भ किया गया। १९८९ वर्ष में संघ संस्थापक डा० हेडगेवार का शताब्दी वर्ष था। उस वर्ष समाज में धन संग्रह किया। धन संग्रह से पूर्व यह निश्चय किया गया कि इस धन का विनियोग सेवा में ही किया जायेगा। वैसे यह सेवा कार्य पहले से चल रहा है। कात्रे नाम के एक कुष्ठ रोगमुक्त स्वयंसेवक ने गुरुजी से विचार विमर्शकरके विलासपुर जिले के चम्पा नामक स्थान पर कुष्ठग्राम स्थापित किया। उसके पीछे उनकी भावना यही थी कि अन्य लोगों को भी रोग से मुक्त किया जाये। संघने इस कार्य में सहायता की। अनाथालय भी चल रहे थे। कुछ लोग झोपड़–पट्टियों में संघ की प्रेरणा से ही शिक्षा प्रदान कर रहे थे। वनवासी क्षेत्र में एक– दो दवाखाने भी थे। कई स्थानों पर चिकित्सालय भी थे। लेकिन १९८९ में इन समस्त कार्यों और प्रकल्पों को विशिष्ट योजना के अन्तर्गत लाया गया और 'सेवाभारती' के नाम से योजना प्रारम्भ हुई। अखिल भारतीय स्तर पर 'सेवाप्रमुख' की नियुक्ति हुई। प्रत्येक प्रान्त में भी एक सेवा प्रमुख नियुक्त हुआ। फिर योजना को आगे बढ़ाकर प्रत्येक जिले में एक सेवा प्रमुख नियुक्त हुआ। प्रत्येक शाखा कोई न कोई सेवा प्रकल्प प्रारम्भ करे, ऐसा आग्रह होने लगा। अब संघ का एक कार्य यह भी है कि दरिद्रता और अज्ञान से त्रस्त अपने बंधुओं की सेवा की जाये और इनकी सेवा का महत्व समझा जाये और उसका कार्यान्वयन सेवाभारती द्वारा किया गया।

कुशल नेतृत्व

जब संघ प्रारम्भ हुआ उस समय देश को अपनी शक्ति से स्वतंत्र करना उसकी जिम्मेदारी हिन्दू समाज पर होने से हिन्दू समाज को संगठित करना यही तात्कालिक समाज का ध्येय था। परन्तु राष्ट्र को परम वैभव के मार्ग पर ले जाने के लिए अब संघ के स्वयंसेवक राष्ट्रजीवन के समस्त क्षेत्रों में सक्रिय होकर कुशल नेतृत्व दे रहे हैं।

संघ अर्थात् प्राणतत्त्व

संघ समाज में अपने विचार का वर्चस्व प्रस्थापित करना चाहता है। विभिन्न क्षेत्रों में संघ के जो कार्यकर्ता कार्यरत हैं, उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे संघ के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के विचार, हिन्दू राष्ट्र का विचार, अपने–अपने क्षेत्र में रखें। हिन्दू कोई सम्प्रदाय नहीं है। कोई कर्मकाण्ड नहीं हैं। हिन्दू का अर्थ रूढ़िगत कुरीतियाँ नहीं है। समस्त मानव जाति का कल्याण करने की क्षमता हिन्दू संस्कृति में है। यह विचार समस्त आनुषंगिक संगठनों के मूल में हो, फिर उन्हें पूर्ण स्वतंत्रापूर्वक कार्य करने की छूट है। इस प्रकार की प्रेरणा श्री गुरुजी ने स्वयंसेवकों को दी है। श्री गुरुजी के पश्चात् श्री मधुकर दत्तात्रय उपाख्य बालासाहब देवरस सरसंघचालक हुये। वे इस पद पर २१ वर्ष तक रहे। उन्हीं के कार्य काल में एक जिले तक सीमित वनवासी कल्याण आश्रम देशव्यापी बना। सेवाकार्य में सूत्रबद्धता आयी और विस्तार हुआ। सामाजिक समरसता के लिए

पूर्ण प्रयत्न हुये। एकात्मता स्तोत्र में महात्मा फुले तथा डा० भीमराव अम्बेडकर का नाम जुड़ा। श्री गुरुजी ने डा० अम्बेडकर पर एक लेख में उनकी तुलना विवेकानन्द से की थी। उन्होंने कहा कि डा० अम्बेडकर ने अपने समाज के लिए जो महान् कार्य किया उसे विस्मरण नहीं करना चाहिए। बालासाहब के कार्यकाल में ही सामाजिक समरसता मंच की स्थापना हुई। बाद में ६ वर्ष प्रो० राजेन्द्रसिंह सरसंघचालक रहे। उन्होंने उसी परम्परा को आगे बढ़ाया। अब श्री कुप्.सी. सुदर्शन सरसंघचालक के रूप में संघकार्य को आगे बढ़ाने व मार्गदर्शन करने में लगे है।

विकास ही विकास

सन् १९२५ से २००० तक की राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की यह यात्रा है। यह केवल यात्रा नहीं, विकास है। संघ के मूल विचार में ऐसे समाजव्यापी विकास की परिकल्पना पहले अमूर्त थी। लेकिन मूलप्राणतत्त्व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का यही है। उस प्राणतत्त्व का एक पक्ष हिन्दू राष्ट्रवाद का सिद्धान्त व्यक्ति समाज के लिए है और उसे समाज रूपी विशाल इकाई से जोड़ना चाहिये, यही धर्म है। इस धर्म का जो पालन करता है वही चारित्रिक गुण है। ऐसे चरित्र की संघ की मूल कल्पना है। संघ केवल एक संस्था नहीं, एक जीवनशैली है। श्री शंकराचार्य ने षट्पदी नामक एक सुन्दर स्तोत्र की रचना की है। उसमें भक्त भगवान से कहता है "तुमसे साक्षात्कार हो चुका। इस कारण भक्त और भगवान यह द्वैत समाप्त हो गया, अद्वैत निर्माण हुआ है। फिर भी हे भगवान ! मैं तुम्हारे लिए तुम मेरे लिए नहीं। लहर समुद्र की होती है लेकिन समुद्र कभी लहर का नहीं होता।" संघ यही समझता है कि व्यक्तियों का ही समाज बनता है फिर भी व्यक्ति को यह समझना चाहिए कि मैं समाज का हूँ, समाज मेरे स्वार्थ के लिए नहीं।

इसके लिए सतत क्रियाशील रहना आवश्यक है। इसमें विश्राम का कोई स्थान नहीं। कारण, यह मार्ग, विश्राम का मार्ग नहीं है। किसी कवि ने लिखा है :

इस पथ का उद्देश्य नहीं है
श्रान्ति भवन में टिक रहना।
किन्तु पहुँचना उस सीमा तक
जिसके आगे राह नहीं।।

□

अनुवादक– **जनार्दनराव पावगी**

देशभक्ति, पर, नहीं भुनाई

सन् १९२१ के 'झण्डा सत्याग्रह' में आप्पा जी ने नागपुर को अनेक टोलियाँ भेजी थीं। इसी सत्याग्रह के कारण उनके अनुज श्री शंकर राव को (और आप्पा जी को भी) खासी मुसीबत झेलनी पड़ी थी। कारागृह से मुक्त होने पर कट्टर ब्राह्मणों ने आग्रह किया कि शंकर राव को प्रायश्चित करना चाहिए; परन्तु आप्पा जी ने ऐसा करने से साफ मना कर दिया। इस कारण ब्राह्मणों ने आप्पा जी के घर का बहिष्कार कर दिया। इससे उनकी पुरोहिती प्रभावित हुई और काफी आर्थिक नुकसान होने लगा।

वैसे भी देश–कार्य और व्यवसाय के बीच होने वाली रस्साकशी के कारण व्यवसाय के दुर्लक्ष्य का विचार करके सेठ जमनालाल बजाज ने आप्पा जी से 'कांग्रेस फण्ड' से वेतन लेने का आग्रह किया। परन्तु 'देश–कार्य निःस्वार्थ वृत्ति में ही करना चाहिए और उसके लिए कोई भी मूल्य लेना नितान्त अनुचित है'– आप्पा जी ने अपना यह विचार नम्रता, किन्तु दृढ़ता से प्रकट करके वेतन लेने का प्रस्ताव ठुकरा दिया। तब श्री जमनालाल जी ने सुझाव दिया कि आप्पा जी 'लक्ष्मी नारायण मन्दिर ट्रस्ट' का कार्य देखकर उसके लिए वेतन स्वीकार करें, किन्तु आप्पा जी ने इसे भी नहीं माना। आगे स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् अनेकों नेताओं ने देशभक्ति की कीमत वसूल की और पेंशन या कम से कम 'ताम्र–पत्र' तो प्राप्त कर ही लिया। परन्तु, आप्पा जी ने निःस्वार्थ देश सेवा का अपना व्रत नहीं छोड़ा। इस संबंध में अनेक कांग्रेस जनों द्वारा अनेक बार किया गया आग्रह भी उन्होंने नहीं माना।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ : वामन से विराट

□ हो.वे. शेषाद्रि
सहसरकार्यवाह रा.स्व. संघ

७५ वर्षों के उतार–चढ़ाव वाले अपने लम्बे इतिहास में संघ के लिए सरकार द्वारा प्रस्तुत अग्नि–परीक्षाओं का कभी भी अभाव नहीं रहा है। यह अध्ययन शिक्षाप्रद होगा कि किस प्रकार इस संगठन ने इन सभी चुनौतियों का मुँहतोड़ जवाब दिया है।

प्रथम चरण : १९३२

सर्वप्रथम ऐसी कठिन चुनौती १९३२ में आयी। उस समय संघ अपनी शैशवावस्था के सात वर्ष का भी नहीं हुआ था। संघ की स्थापना अति उत्कट देशभक्त एवं क्रांतिकारी डॉ. हेडगेवार ने की थी। अतः इसकी पूर्ण संभावना थी कि अंग्रेज उस पर किसी भी क्षण प्रहार कर सकते हैं। शीघ्र ही उन्होंने आदेश पारित करके सरकारी सेवकों पर संघ की गतिविधियों में भाग लेने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। कुछ वर्ष पश्चात् ऐसा ही प्रतिबंध सरकारी सहायता पाने वाले जिला बोर्डों तथा अन्य स्थानीय निकायों के कर्मचारियों पर भी लगा दिया गया। सरकार ने संघ पर फासीवादी और साम्प्रदायिक होने का भी आरोप लगाया।

यह तो स्पष्ट था कि इन दो प्रतिषेधात्मक परिपत्रों की तोप के गोलों का लक्ष्य जनसाधारण को इस बात की कठोर चेतावनी देना था कि वे संघ से दूर ही रहें। यह चेतावनी सार्वजनिक प्रतिष्ठा वाले उन व्यक्तियों के लिए भी थी जो उन दिनों संघ की गतिविधियों की सराहना करने और उनमें भाग लेने लगे थे।

प्रथम परिपत्र के प्रचारित होते ही डॉ. हेडगेवार ने किसी को भी इस भ्रम में नहीं रहने दिया कि संघ निरादर की इस कड़वी घूँट को शांत भाव से पी लेगा। उनका उद्देश्य केवल संघ की साख को स्थापित करना और उसके कार्यकर्त्ताओं को सरकार के प्रहार से बचाना मात्र नहीं था। उनका उद्देश्य तो विदेशी सत्ताधीशों से वैचारिक स्तर पर युद्ध करने और हिन्दुओं पर साम्प्रदायिकता का लांछन लगाने के उनके षड्यंत्र को चकनाचूर करने का था। उन्होंने जनमत को संगठित करने के लिए तुरंत एक अभियान छेड़ दिया और शीघ्र ही उसके परिणाम निकलने लगे। एक के बाद दूसरा स्थानीय निकाय सरकार की भर्त्सना करने वाला संकल्प पारित करने लगा। जनता का दबाव तेजी से और व्यापक रूप से बढ़ने लगा। मध्य प्रान्त और बरार विधान–सभा के सदस्यों ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसमें सरकार के जघन्य परिपत्रों के लिए उसकी निन्दा की गयी थी। विभिन्न समूहों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक के बाद दूसरा सदस्य संघ के विरुद्ध आरोपों का खंडन करने के लिए खड़ा हुआ जिनमें एक मुस्लिम भी था, और उन्होंने गृहमंत्री को आरोप प्रमाणित करने की चुनौती दी। गृहमंत्री की बोलती बन्द हो गयी, प्रस्ताव पारित हो गया और सरकार इस प्रश्न पर गिर गयी।

द्वितीय चरण : १९४८–४९

स्वाधीनता आयी, पर साथ ही विभाजन का भीषण संहार और विनाश लायी। लाखों पीड़ित हिन्दुओं के जीवन तथा सम्मान की रक्षा में संघ स्वयंसेवकों के शौर्य तथा बलिदानों की गाथा से प्रेरणा पाकर हजारों युवजनों ने, विशेषतः उत्तर में, स्वयंसेवकों के रूप में सम्मिलित होकर संघ–कार्यकर्त्ताओं की संख्या में विपुल वृद्धि कर दी। देश में अन्यत्र भी मुस्लिम लीगियों के निरंकुश धर्मान्ध बर्बर जत्थों के विरुद्ध संघ ही हिन्दुओं के लिए अभेद्य रक्षाकवच सिद्ध हुआ। परिणामतः संघ की लोकप्रियता और संगठन का विस्तार असाधारण गति तथा शक्ति से समग्र देश में हुआ। इसी प्रकार देश की एकता के प्रश्न पर कांग्रेस ने जनता के साथ जो विश्वासघात किया, उसके कारण कांग्रेस के प्रति हिन्दू का मोहभंग उतना ही विकट तथा विस्तृत हो गया।

अब अंग्रेजों का स्थान कांग्रेसियों ने ले लिया, पर कैसा दुर्भाग्य कि वे शीघ्र ही अंग्रेजों के पद–चिह्नों का अनुसरण भी करने लगे। वे अब संघ की उस लोकप्रियता में असाधारण वृद्धि को देखकर डर गये थे जो उनके पापों का भांडा फोड़ने की दिशा में तेजी से बढ़ रही थी। कम्युनिस्ट भी, जो १९४७ से पूर्व ब्रिटिश तथा मुस्लिम लीग के

समर्थन में सबसे आगे थे, कांग्रेस का ही राग अलापने लगे और समाजवादी भी। घटिया से घटिया हथकंडे अपनाये गये। संघ–कार्यकर्त्ताओं को फँसने के लिए उत्तर प्रदेश में हिंसा और हत्या का एक प्रकरण गढ़ा गया। उनके विरुद्ध प्रचण्ड विषैला प्रचार किया गया मानों उनका दोष सिद्ध हो चुका हो। किन्तु सत्र–न्यायाधीश ने न केवल उन्हें निर्दोष ठहराया अपितु नितान्त झूठे तथा सप्रयोजन आरोपों तथा असत्य साक्ष्य देने के लिए पुलिस की भर्त्सना की। इस प्रकार पाँसा कांग्रेस के विरुद्ध पलट गया। तथापि बहुत पहले अक्टूबर १९४७ में ही अखिल भारतीय कांग्रेस कार्यकारिणी ने एक गुप्त बैठक में सरकार को यह कहने का संकल्प कर लिया था कि संघ पर प्रतिबंध लगा दिया जाये, परन्तु उस समय इसके लिए कोई बहाना ही नहीं मिल पाया।

सत्य तथा न्याय का घोर दमन

आश्चर्य नहीं कि इस पृष्ठभूमि में महात्मा गांधी की हत्या तथा उसके संघ विरोधी जनोत्तेजकों के लिए ईश्वरीय वरदान के रूप में प्रकट हुई। जिस तत्परता तथा उग्रता के साथ विशेषतः महाराष्ट्र में संघ–कार्यकर्त्ताओं के विरुद्ध उत्तेजक भाषणों में आक्षेपों, हिंसा तथा सम्प्रदायवाद के नितांत झूठे आरोपों की जो झाड़ी लगा दी गयी तथा उससे भी बढ़कर गांधीजी की हत्या का बहाना लेकर जो शारीरिक आक्रमण भी किये गये, उनका अन्य उदाहरण आज तक नहीं मिलता। यह सब गांधीजी की हत्या का समाचार प्रसारित होते ही प्रारम्भ हो गया और इस सम्पूर्ण उच्छृंखल तथा वीभत्स कांड के जन्मदाता स्वयं प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू थे। इन झूठी अफवाहों को प्रामाणिकता का चोला पहनाने के लिए देश भर में २०,००० से भी अधिक संघ–कार्यकर्त्ताओं को बन्दी बना लिया गया और उनमें से प्रत्येक पर आरोप व संदेह गांधीजी की हत्या का दिखाया गया। यह नृशंस कांड चलता रहा और बन्दी लोगों को कारागारों में ठूँसा जाता रहा जबकि देश के गृहमंत्री सरदार पटेल २६ फरवरी १९४८ को अर्थात् गांधीजी की हत्या के एक महीने से भी कम समय के भीतर प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को लिखित रूप में बता चुके थे कि उन्होंने स्वयं अपराध के बारे में पूरी जाँच–पड़ताल की थी, सभी वांछित व्यक्ति पकड़े जा चुके थे और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का अपराध से किसी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं था। निरपवाद रूप से सम्पूर्ण 'राष्ट्रीय प्रेस' ने सरकार के सुर में सुर मिलाया, संघ पर अनर्गल आरोप लगाये और उसके विरुद्ध निराधार अफवाहें फैलायीं।

राष्ट्र की अन्तरात्मा को जगाया

महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि संघ के नेताओं और विशेषतः सामान्य स्वयंसेवकों की कैसी प्रतिक्रिया थी? जब सम्पूर्ण प्रेस, समग्र सरकारी तंत्र, राष्ट्रीय नेता तथा सभी राजनीतिक दल एक स्वर से चिल्ला रहे थे– 'उन्हें मृत्युदण्ड दो', तो क्या वे झुक गये? क्या उन्होंने घुटने टेक दिये? क्या उन्होंने मृत्यु के फंदे से बचकर निकलने के लिए क्षमायाचना की? श्वास रोककर इतिहास ने यह देखने के लिए प्रतीक्षा की कि क्या स्वयंसेवकों के मानस में अंकुरित–पल्लवित किये गये आदर्शवाद, अनुशासन तथा निष्ठा के सभी दैनिक संस्कार उस भयंकर अग्नि–परीक्षा में हिन्दू राष्ट्र के वैभव तथा सम्मान को पुनर्जीवित करने के अपने ध्येय की ओर अग्रसर होने की पात्रता को सही सिद्ध कर सकेगा?

और उसने पूर्णतया सिद्ध कर दिया। एक बाल–स्वयंसेवक भी न तो निस्तेज और न ही शिथिल हुआ। वे तनिक भी आतंकित नहीं हुए, बल्कि आत्म–बलिदान, आत्मसंयम तथा शौर्य के स्वयंसेवकों के गुण और भी अधिक जगमगाकर चमक उठे। जब सत्तारूढ़ लोगों ने सत्ता के मद में सत्य तथा न्याय के लिए मृदुल प्रेरणा, तर्क तथा अनुरोध की सभी बातों को अनसुना कर दिया तो उन्होंने मूल्य चुकाने का मार्ग अपनाया। उन्होंने पुलिस की बर्बरताओं को झेलकर, जेल जाकर, पढ़ाई छोड़कर और नौकरियाँ गँवाकर भी शाखाओं को पुनः चालू करने या सामान्य भाषा में कहा जाये तो सत्याग्रह करने का निश्चय किया। सरकार अपने गुप्तचर विभाग के इन समाचारों के आधार पर निश्चिन्तता से विश्राम कर रही थी कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का तो लगभग सफाया कर दिया गया है और अधिक से अधिक ५,००० स्वयंसेवक ही सरकार को चुनौती देने तथा परिणाम भोगने का दुस्साहस करेंगे। किन्तु उस समय उन्हें बड़ा धक्का लगा और उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहर जब जेल जाने वालों की संख्या ६५,००० को भी पार कर गयी। संख्या से भी अधिक बड़ा झटका सरकार को अत्याचार–बोध से उद्वेलित राष्ट्र के अन्तरात्मा से उठी वाणी से लगा। सुकुमार अवस्था के बालक भी पुलिस की बैंत की मार झेल रहे थे और जेल जाते समय वे ऊँचे स्वर से नारा लगा रहे थे– "या तो

आरोप सिद्ध करो, या प्रतिबंध हटाओ।" इसने अपनी गंभीरता तथा निष्पक्षता के लिए विख्यात अनेक सार्वजनिक प्रतिष्ठा वाले लोगों को खड़े होकर यह पूछने पर विवश कर दिया कि "यह सब किसलिए हो रहा है ? सरकार संघ की चुनौती स्वीकार करने से क्यों कतरा रही है ?" तब तक संघ के प्रति भड़काया गया प्रारंभिक जन-आक्रोश भी शांत हो चुका था।

घोर काली रात उज्ज्वलतम भोर में परिणत हुई

सरकारी नेताओं तथा संघ के सरसंघचालक श्री गुरुजी के बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसमें श्री गुरुजी ने सरकार के घोर अन्याय, झूठ तथा क्रूर दमन की धज्जियाँ उड़ा कर रख दीं। अतः संघ के स्थान पर जनता की दृष्टि में सरकार कठघरे में खड़ी थी।

हो सकता है कि एक और बात ने सरकार पर दबाव डाला हो। उसने सोचा हो कि शीघ्र ही स्वतंत्र न्यायपालिका वाला स्वतंत्र संविधान बनेगा। यदि संघ सर्वोच्च न्यायालय से न्याय की माँग करेगा तो निश्चय ही सरकार के पापों का भांडा फूट जायेगा। निश्चय ही संघ के पक्ष में होने वाले अनिवार्य न्यायिक निर्णय और विशेषतः श्रीगुरुजी तथा केन्द्रीय सरकार के नेताओं के आपसी पत्र-व्यवहार से सत्ता तथा प्रतिष्ठा के सर्वोच्च पदों पर आसीन व्यक्तियों की घटिया चालाकी तथा क्षुद्रता की पोल खुल जाती। एक और संभावना भी थी कि संघ के लिए कार्य करने के अपने अधिकार से वंचित लाखों संघ- स्वयंसेवक तथा शुभचिंतक अब राजनीतिक अखाड़े में कूद पड़ते और शासकों को राजनीतिक कठघरे में खड़ा कर देते।

अतः सरकार ने विवेक को शौर्य से उत्तम समझा और बिना किसी शर्त के प्रतिबंध को उठा लिया। जी हाँ, प्रतिबंध को शत-प्रतिशत बिना शर्त के हटाया गया था जैसा कि बम्बई प्रेसीडेन्सी के गृहमंत्री ने विधानसभा में दोटूक शब्दों में कहा था। सरकार की लाज बचाने वाले मध्यस्थों के आग्रह पर संघ ने केवल यह स्वीकार किया था कि वह संविधान के रूप में संघ की कार्यशैली को लिखित रूप में प्रस्तुत कर दे।

और इस प्रकार संघ की दूसरी अग्निपरीक्षा का आख्यान पूरा हुआ।

किन्तु संघ की दृष्टि कहीं ऊँचे लक्ष्य पर टिकी थी। उसका लक्ष्य मात्र स्वतंत्र अस्तित्व तथा अस्मिता का परिरक्षण नहीं था। संपूर्ण देश में जन-अनुमोदन तथा जयजयकार के विराट प्रदर्शनों के बीच स्वयं को शांत रखते हुए श्री गुरुजी ने संघ की नौका को उसकी नयी तथा बड़ी राष्ट्रीय भूमिका के लिए उतारा। तब तक स्वयंसेवकों के लिए प्रेरणा का स्रोत प्रभुतासम्पन्न वैभवपूर्ण हिन्दू राष्ट्र की प्रस्तावना के रूप में स्वाधीनता-प्राप्ति था। पर अब उसे सर्वोच्च लक्ष्य-प्राप्ति के लिए हिन्दू मनीषा के प्रकाश में नवजात स्वाधीनता की सुरक्षा तथा राष्ट्रीय जीवन का पुनर्निर्माण करना था। प्रतिबंध हटाये जाने के बाद देश के अपने सम्पूर्ण तूफानी प्रवास में श्री गुरुजी ने सबसे पहला काम यह किया कि, उन्होंने शत्रुभाव को समाप्त करने का आह्वान किया। उन्होंने स्वयंसेवकों से कहा- "यदि संयोगवश कभी दाँतों से जीभ कट जाये तो क्या आप दाँतों को ही उखाड़ कर फेंक देंगे ?"

आनेवाला समय सभी राष्ट्रवादी शक्तियों के एकजुट होने का था ताकि सभी मोर्चों पर राष्ट्र को सुदृढ़ किया जा सके और वह प्रभावी रूप से आंतरिक तथा बाह्य चुनौतियों का सामना कर सके। किन्तु कैसी विचित्र बात है कि वस्तुतः इसी कारण संघ के प्रति कांग्रेस की मानसिकता असहिष्णुता (एलर्जी) बनी रही। देश के विभाजन का भयंकर मूल्य चुकाने के बाद भी कांग्रेस अपने छद्म राष्ट्रवाद तथा सत्ता के लिए संघ का अन्ध विरोध करने के अपने आत्मघाती सिद्धान्त से चिपकी रही। संघ पर वैसी ही निंदापरक भाषा, वैसे ही झूठे निराधार आरोपों तथा अपशब्दों की बौछार की गयी। श्री गुरुजी ने सुलह और सहयोग का जो हाथ बढ़ाया था, उसका तिरस्कार किया गया और उसके स्थान पर उन्हें तनाव और संघर्ष की चुनौती दी गयी।

"विवेकानन्द के आह्वान का निकटतम उत्तर ...."

मतभेद की यह खाई चौड़ी होती गयी। अन्ततः उसका विस्फोट १९७५-७७ के आपात्काल के रूप में हुआ और वह संघ की अग्निपरीक्षाओं के इतिहास में तीसरा सुनहरा अध्याय सिद्ध हुआ। यह कथा अपेक्षाकृत निकट अतीत की है। अतः उसका वर्णन संक्षेप में तथा सर्वोत्तम ढंग से संघेतर व्यक्तियों और अभिकरणों के शब्दों में हो सकता है।

जो भूमिगत आन्दोलन आपात् स्थिति-विरोधी जन-प्रतिरोध के यज्ञ में आहुति के लिए जनबल तथा संसाधन जुटाने तथा उसके भयंकर मुख पर से मुखौटा उतारने का प्रमुख साधन सिद्ध हुआ, उसके बारे में लंदन 'इकॉनॉमिस्ट'

ने कहा था कि वह 'विश्व की एकमात्र अवामपंथी क्रांतिकारी शक्ति' है। पत्र ने कहा है, "उसमें संघ–संवर्गों के लाखों कार्यकर्त्ताओं का बाहुल्य है, यद्यपि उसमें उत्तरोत्तर और अधिक रंगरूट भर्ती हो रहे हैं और उसके मंच का एकमात्र उद्देश्य भारत में लोकतंत्र की पुनः स्थापना है।"

इसी प्रकार के विचार ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता डॉ. शिवराम कारंत तथा 'इंडियन रिव्यू' के संपादक एवं वरिष्ठ पत्रकार एम.सी. सुब्रह्मण्यम् ने भी प्रकट किए जिसका उल्लेख अन्यत्र किया जा चुका है।

नयी भूमिका

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस तीसरे चरण में संघ निरंकुशता के विरुद्ध सभी लोकतंत्रीय शक्तियों के संघर्ष में उन्हें एकजुट करने वाले केन्द्र–बिन्दु के रूप में उभर रहा था। परन्तु जैसे ही लोकतंत्रीय ढाँचा पुनः स्थापित हो गया, वैमनस्य उभारने वाली शक्तियों ने पुनः सिर उठाया और राष्ट्रीय मेल–मिलाप के मंच जनता पार्टी को तोड़ दिया। जैसा कि विघटनकारियों ने बाद में स्वयं स्वीकार किया, दोहरी सदस्यता का प्रश्न तो मात्र एक तमाशा था और उनकी वास्तविक आशंका तो यह थी कि कहीं जनता पार्टी का जनसंघ घटक शीघ्र ही अपनी संख्या, अपनी एकजुटता तथा बढ़ती हुई लोकप्रियता के बल पर दूसरों को निगल न जाये। अर्थात् १६४८ में पंडित जवाहरलाल नेहरू को और बाद में १६७५ में उनकी पुत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबंध लगाने के लिए प्रेरित करने वाला भय और यह भय एक ही प्रकार का था।

तथापि आपत्काल में संघ की भूमिका ने, यद्यपि वह अल्पकालिक थी, उस मूल परिवर्तन को उजागर किया जो १६४८ के बाद से संघ के सन्दर्भ में राष्ट्र के मानस में आ गया था। १६४८ में सारे देश को तत्कालीन परिस्थितियों में उसके विरुद्ध खड़ा कर दिया गया था और उसके केन्द्र में सरकार थी। किन्तु अब लगभग सम्पूर्ण देश ने सरकार के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था और संघ उसके एकजुट होने का केन्द्र था। इस केन्द्रीय भूमिका के उपरान्त भी संघ पूरी अवधि में पृष्ठभूमि में रहा और संघर्ष में सम्मिलित होने के लिए 'जे. पी.' (जयप्रकाश) विविध राजनीतिक समूहों के केन्द्र–बिन्दु बने। इस दृश्य–सज्जा में से जो तथ्य उभरता है, वह पर्याप्त चौंकाने वाला है। वह यह है कि ऐसे सभी समूहों अर्थात् कांग्रेस (सं), समाजवादी, तथा अन्य समूहों के अन्तःकरण में इस बारे में कोई पापशंका नहीं थी कि आन्दोलन के व्यावहारिक संचालन तथा उन सभी के लिए समरसता प्रदान करने वाली केन्द्रीय शक्ति के रूप में संघ की भूमिका को स्वीकार करने के स्तर पर वे संघ के साथ सहयोग करें। इसका अर्थ है कि संघ द्वारा मान्य हिन्दू राष्ट्र के दर्शन से उनका तथाकथित वैचारिक मतभेद वास्तव में महत्त्व नहीं रखता था। उनके लिए अधिक महत्त्व– और वास्तव में एकमात्र निर्णायक महत्त्व राज्यसत्ता का था।

चौथा चरण : १६६०

संघ चौथे तथा नवीनतम चरण में १६६० में पहुँचा था। यह समय श्रीराम–जन्मभूमि मन्दिर के जीर्णोद्धार के लिए विश्व हिन्दू परिषद् द्वारा छेड़े गये विराट 'कारसेवा आन्दोलन' का है। यदि १६३२ के पहले चरण से देश का एक छोटा–सा भाग जुड़ा था तो १६४८–४६ के दूसरे चरण में संघ नितान्त अकेला था और सम्पूर्ण देश उसके विरोध में खड़ा था। जहाँ १६७५–७७ के तीसरे चरण में संघ पर्दे के पीछे रहते हुए भी सभी लोकतंत्रीय शक्तियों के लिए मिलन के केन्द्र के रूप में रहा, वहाँ १६६० के चरण में वह उन सभी सफल आन्दोलनों में भी सबसे महान् मेरूदण्ड रहा है जो हमारे देश में अथवा उस प्रयोजन से किसी लोकतंत्रीय देश में कभी हुए हैं। इस बार भी हिन्दू शक्तियों के विरुद्ध संपूर्ण सरकारी शक्तियों, सरकार द्वारा नियंत्रित आकाशवाणी तथा दूरदर्शन जैसे संपूर्ण जन–संचार–माध्यमों तथ संपूर्ण अंग्रेजी प्रेस ने मोर्चा लगाया और आन्दोलन के विरुद्ध धुँआधार प्रचार का धावा बोल दिया। ऐसा लगता था मानो हिन्दू पक्षधर अकेले पड़ गये हों और शेष सभी उनके विरोध में खड़े हों। तथापि जन–स्तर पर आन्दोलन में जनता की विराट भागीदारी एक नितांत भिन्न कहानी प्रस्तुत करती है। आन्दोलन के फलस्वरूप विरोधी शक्तियों को सर्वाधिक लज्जाजनक नैतिक तथा व्यावहारिक पराजय का मुँह देखना पड़ा है। वास्तव में अकेलेपन की टोपी विरोधी शिविर के सिर पर बिलकुल ठीक बैठी।

अंतिम चरण की तैयारी

ऐसा लगता है कि अब दशकों पुराने संघर्ष का अंतिम चरण तेजी से

निकट आता जा रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दू–समर्थक तथा हिन्दू–विरोधी दोनों ही शक्तियों ने इसे अति स्पष्ट रूप से देख लिया है। स्वाभाविक है कि हिन्दू विरोधी शक्तियाँ वर्तमान हिन्दू–उत्थान को अपने अस्तित्व के लिए दोनों स्तरों पर, चाहे सैद्धान्तिक हो (यदि ऐसा कोई है) या व्यावहारिक, घातक संकट समझ लें। अतः इसकी पूर्ण संभावना है कि हिन्दुओं को मूर्ख बनाने और उनमें फूट डालने के लिए तथा उससे अधिक केवल राष्ट्र के जीवन में अपने वर्तमान वर्चस्व के सर्वनाश को रोकने के लिए वे हर संभव हथकंडा अपनायें, स्थानीय हो या विदेशी– हर प्रकार के संसाधनों को जुटायें तथा हर संभव प्रपंच रचें। किन्तु दीवार पर उभरी लिखावट इतनी स्पष्ट है कि अंधा भी उसे समझने में भूल नहीं कर सकता। हिन्दू–मानस को अब तक उसके विरुद्ध जो ये सब रणनीतियाँ अपनायी गयी हैं और उनके जाल में फँसने पर उसे अभी तक जो भयंकर मूल्य चुकाना पड़ा है, उसका पर्याप्त कटु अनुभव हो चुका है। वह अब अति जागरूक है और अपने लक्ष्य को पूर्ण एकाग्रता से देखता है। अनेक शक्तियों के विखंडित मानस तथा विनष्ट शक्ति के बाद यह प्रथम अवसर है जब उसने यह दृढ़ निश्चय किया है कि वह अपनी समग्र विराट शक्ति को समेटकर अपनी हजार वर्ष पुरानी घोर निद्रा को मार भगाने में लगायेगा और भारत के सच्चे तथा वैभवपूर्ण राष्ट्रत्व, हिन्दू राष्ट्र को पुनरुज्जीवित करने की अपनी नियति को साकार करेगा। □

केशवं स्मरामि सदा

परिस्थिति की वस्तुपरक समीक्षा, इतिहास सिद्ध निष्कर्ष, निस्पृह और निरपेक्ष विचार, स्पष्ट ध्येय, निस्वार्थ कार्य, अचूक दृष्टि, अजातशत्रु भावी लोकसंग्रह और सबसे अधिक विलक्षण व्यक्ति–निर्माण की अत्यन्त सरल कार्य पद्धति– सभी बातों में मौलिकता का एक चमत्कार : डाक्टर हेडगेवार के शब्द जितने प्रेरक रहे, उतने ही सरल और ह्रदय को छू जाने वाले होने के कारण अद्भुत संस्कार निर्माण करते हैं। उनके संदेशपूर्ण वाक्य नित्य स्मरण करने योग्य हैं। उन्हीं में से कुछ यहाँ प्रस्तुत हैं जो परमपूजनीय डाक्टर हेडगेवार (छोटा जीवनचरित्र) पुस्तक से उद्धृत हैं :

१. चौबीस घंटे राष्ट्रीयता के विचार हमारे मनों में गूँजते रहें, इसीलिए संघ का नाम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ रखा गया है। (पृष्ठ ६३)

२. मैं दावे के साथ जता दूँ कि संसार में संगठन ही ऐसी एकमात्र शक्ति है जिसके बल पर सारी राष्ट्रीय समस्याएँ हल हो सकती हैं। (पृष्ठ ६३)

३. हमारा उद्देश्य और कार्य नितान्त पवित्र तथा जनकल्याणकारी होने के कारण ईश्वरीय है, और यही कारण है कि हर समय तथा हर परिस्थिति में हम अवश्य सफल होंगे। (पृष्ठ ७८)

४. अतएव स्वयंसेवक को वही काम करना उचित है, कि जिससे संगठन को लाभ पहुँचे। (पृष्ठ ५७)

५. हम आत्मनिरीक्षण करके अपने सभी दुर्गुणों का मूलोच्छेदन कर डालें। (पृष्ठ ५४)

६. हमारी चादर इतनी साफ रहे कि हमारे चरित्र में ढूँढ़ने से भी दोष या कलंक का छींटा तक न मिले। (पृष्ठ ५३)

७. मेरी आपसे यही प्रार्थना है कि इस विशाल भारत के कोने–कोने में ऐसे ध्येयनिष्ठ और बलवान तरुणों के संघ का घना जाल फैला दो। (पृष्ठ ५०)

८. विश्वास कीजिए, हिन्दु शक्ति सारे संसार में अजेय सिद्ध होगी। (पृष्ठ ७६)

संघ विचारधारा से अनुप्राणित मुख्य संगठन

□ देवदत्त शर्मा

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से राष्ट्रभक्ति एवं चारित्र्य के संस्कार ग्रहण कर संघ के इन स्वयंसेवकों ने राष्ट्र–जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय रहकर अपनी एक अलग पहचान बनायी है। इसके लिए उन्होंने अनेक संगठन अथवा संस्थाएँ गठित की हैं। इनकी संख्या ५१ से भी अधिक है। उनमें से कतिपय प्रमुख इकाइयों का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

१. अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् : इस समय भारत में छात्र–छात्राओं एवं गुरुजनों का सबसे क्रियाशील विशाल संगठन है।

२. विद्या भारती : शिक्षा क्षेत्र में भारत ही नहीं विश्व का सर्वाधिक विराट गैर सरकारी संगठन है।

३. विश्व हिन्दू परिषद : समस्त विश्व के हिन्दुओं का सबसे प्रभावशाली संगठन विश्व में हिन्दू–बौद्ध एकता के लिए प्रयत्नशील। अयोध्या में राम मंदिर के निर्माण के साथ–साथ काशी में भगवान विश्वनाथ तथा मथुरा में कृष्ण जन्मभूमि स्थान को मुक्त कराने के लिए कृतसंकल्प।

४. वनवासी कल्याण आश्रम : वनवासी एवं गिरिजन बंधुओं को राष्ट्र की मुख्य धारा में लाने के लिए सतत प्रयत्नशील।

५. भारतीय मजदूर संघ : श्रमिक क्षेत्र में राष्ट्रवाद के आधार पर चलने वाला भारत का सर्वाधिक सदस्य संख्या वाला प्रभावशाली संगठन।

६. भारतीय किसान संघ : भारत के किसानों का सबसे बड़ा एवं प्रभावशाली गैर राजनीतिक संगठन।

७. राष्ट्र सेविका समिति : भारत की मातृशक्ति में नव चैतन्य का संचार करने वाला एक राष्ट्रीय संगठन।

८. सेवा भारती : समाज के पिछड़े एवं अति पिछड़े वर्गों के सामाजिक–सांस्कृतिक–आर्थिक उत्थान के लिए प्रयत्नशील एवं समर्पित।

९. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ : राष्ट्र–निर्माताओं में राष्ट्रवाद की अलख जगाकर उन्हें राष्ट्र की भावी पीढ़ी को उन्नायक बनाने का गुरु गंभीर दायित्व।

१०. भारतीय शिक्षण मंडल : शिक्षा जगत में विविध विषयों पर लेखन, गोष्ठियों, शोध आदि को प्रश्रय।

११. राष्ट्रीय सिख संगत : केशधारी एवं गैर केशधारी समाज बंधुओं की अटूटता को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए समर्पित।

१२. स्वदेशी जागरण मंच : भारत में स्वदेशी एवं स्वावलम्बन की अलख जगाने के लिए प्रयत्नशील।

१३. दीनदयाल शोध संस्थान : एकात्मवादी दर्शन के आधार पर भारत के ग्रामीण क्षेत्र की संरचना करने के रचनात्मक कार्य–योजना की प्रभावशाली इकाई।

१४. भारत विकास परिषद् : आभिजात्य वर्ग में राष्ट्रीय चेतना का जागरण करते हुए उन्हें समाज सेवा में क्रियाशील बनाना।

१५. भारतीय इतिहास संकलन योजना : सृष्टि के प्रारंभ से आज तक का तथ्यपरक इतिहास प्रस्तुत करना।

१६. संस्कृत भारती : भारत सहित संपूर्ण विश्व में संस्कृत के पठन–पाठन–संभाषण को लोकप्रिय बनाना।

१७. संस्कार भारती : सेवा बस्तियों, समाज के उपेक्षित वर्गों के साथ–साथ भारत से बाहर रहने वाले देश–बांधवों को उदात्त धर्म, संस्कृति एवं श्रेष्ठ जीवन के संस्कार देना।

१८. अधिवक्ता परिषद् : देश की विधि एवं न्याय व्यवस्था को भारतीय संस्कृति के आदर्शों के अनुरूप बनाना।

१९. हिन्दू जागरण मंच : भारत में अभारतीयता के गंभीर खतरों से राष्ट्र को सचेत कर शुद्ध राष्ट्रभाव का जागरण।

२०. साहित्य परिषद : संस्कारक्षम एवं राष्ट्रवादी साहित्य सृजन को प्रोत्साहन।

२१. प्रज्ञा भारती : देश के बुद्धिजीवियों का संगठन करके उन्हें राष्ट्र जीवन में सक्रिय बनाना।

२२. विज्ञान भारती : भारतीय वैज्ञानिकों की उपलब्धियों से सम्पूर्ण विश्व को अवगत कराने के साथ–साथ वैज्ञानिक शोध को प्रोत्साहन तथा उसे समाजोपयोगी बनाना।

२३. लघु उद्योग भारती : भारत के लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन तथा उक्त हेतु उसमें नवीन तकनीकी ज्ञान के प्रयोग को प्रश्रय।

२४. ग्राहक पंचायत : ग्राहकों में जागरूकता लाकर उन्हें उत्पादकों के शोषण से मुक्त कराना।

२५. सहकार भारती : देश में सहकारिता एवं सहकारी आंदोलन को प्रभावपूर्ण बनाना।

२६. पूर्व सैनिक सेवा परिषद् : सेवानिवृत्त सैनिकों की समस्याओं का हल निकालते हुए उनकी प्रतिभा का राष्ट्रहित में उपयोग।

२७. लोक भारती : ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता, लोक संस्कार केन्द्र खोलना, वृक्षारोपण, ग्रामीणों के विकास के लिए गंभीर प्रयास करना आदि।

२८. विश्व आयुर्वेद परिषद् : आयुर्वेद की महत्ता जगविख्यात है। उसमें शोध कार्य को प्रोत्साहन देने हेतु इसका गठन किया गया हे।

२९. विश्व संवाद केन्द्र : समाचार तथा लेख संकलन एवं संप्रेषण आदि का महत्त्व सर्वविदित है। इस समय संपूर्ण देश में २५ केन्द्रों से उसका संचालन किया जा रहा है। मुख्यालय लखनऊ में है जो अन्तरताने तथा साइबर सेवा से युक्त है।

३०. नेशनल मेडिकोज संगठन : देश भर में एलोपैथी चिकित्सिक स्वयंसेवकों का संगठन।

३१. भारतीय जनता पार्टी : संघ की सदस्यता के मुद्दे पर जनता पार्टी से अलग होकर राजनीतिक क्षेत्र में कार्य करने वाले स्वयंसेवकों द्वारा १९८० में गठित भारतीय जनता पार्टी राजनीतिक क्षेत्र में कार्य करने वाले स्वयंसेवकों द्वारा आज देश का सबसे बड़ा एवं केन्द्र में सत्तारूढ़ राजनीतिक दल है। □

धर्म रथ पर आरूढ़

डाक्टर केशव बलिराम हेडगेवार मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र के आदर्श पर चले। रामायण में यह प्रसंग आता है जब अत्याचारी रावण से युद्ध करने के लिए प्रभु रामचन्द्र नंगे पैर बिना रथ–सारथी के उपस्थित होते हैं और भक्त विभीषण अत्यधिक प्रीतिवश अपने मन का संदेह इन शब्दों में प्रकट करता है :

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना
केहि विधि जितब बीर बलवाना।

तब प्रभु रामचन्द्र भक्त विभीषण को कहते हैं कि :

सौरज धीर जाहि रथ चाका
सत्य शील दृढ़ ध्वजा पताका।

और

सखा धर्ममय अस रथ जाके
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके।

प्रभु रामचन्द्र जी की लंका विजय पर "विजेतव्या लंका चरण तरणीयो जलनिधिः" वाला जो श्लोक लिखा गया है उसकी अंतिम पंक्ति है "क्रिया सिद्धिः सत्वे भवति महतां नोपकरणे।" यानी महापुरुष किसी उपकरण से नहीं अपने सत्व के बल पर ही क्रिया सिद्धि प्राप्त कर लेते हैं। यह पंक्ति डाक्टर हेडगेवार जी पर पूरी तरह सही उतरी दिखाई पड़ी। प.पू. श्री गुरुजी ने इस सम्बन्ध में कहा है कि :

"परमपूजनीय डाक्टर जी के कष्टपूर्ण, परिश्रमी एवं कर्मठ जीवन से सर्वसाधारण व्यक्ति को एक आशादायी सन्देश मिलता है। दरिद्रता, प्रसिद्धि विहीनता, बड़ों की उदासीनता, परिस्थिति की प्रतिकूलता, पग–पग पर बाधाएँ, विरोध, उपेक्षा, उपहास आदि के कटु अनुभव के साथ–साथ स्वीकृत कार्य की पूर्ति के लिए आवश्यक साधनों का अत्यन्त अभाव आदि कितनी ही कठिनाइयाँ मार्ग में आयें तो भी अपने कार्य के साथ तन्मय होकर "मुक्तसंगोऽनहंवादी ....." इस वृत्ति से सुख–दुःख, मानापमान, यशापयश आदि किसी की भी चिन्ता न करते हुए यदि कोई प्रयत्नरत रहेगा तो उसे अवश्य सफलता मिलेगी। पूर्व प्रकाशित डाक्टर जी के छोटे जीवनचरित्र के आरम्भ में "क्रियासिद्धिः सत्वे भवति महतां नोपकरणे" जो यह सुभाषित दिया है वह उनके ऊपर पूरी तरह घटता है– किंबहुना उनका सम्पूर्ण जीवन ही इस उक्ति का मूर्तिमन्त उदाहरण था। अपने घर–बार के कामकाज में हताश होकर हाथ–पाँव छोड़ देने वाले को, किसी भी सामाजिक कार्य को करते समय बाधाओं से घबड़ाकर निराशा से कार्यविमुख होने वाले को, इस पवित्र जीवन से आशा का सन्देश प्राप्त होकर सदैव ही कार्यरत रहने की प्रेरणा मिल सकेगी।"

With Best Complements From

Market leaders in flexible packaging materials, PET/BOPP films, Machines, Ink & Adhesives

FLEX GROUP OF COMPANIES

A-107-109, Sector-IV,
Noida-201301
Gautham Budh Nagar
Uttar Pradesh

दीपावली

की

हार्दिक शुभकानाओं सहित

राजीव पालीवाल

मेसर्स गणेश स्टील इंडस्ट्रीज

सफेदाबाद (बाराबंकी)

With
Best Wishes
From

UNIWORLD TELECOM LTD.

F-18, Sector-8, NOIDA

Tel : 4556691, 4534484, 4534485

Manufacturer of :

STD PCO Monitors, Conference Machines, Local Call Meters & Push Button Telephones

दीपावली

एवं

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ७५ वर्ष पूर्ण होने पर
'विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका' के
'संघ सरिता' अंक के प्रकाशन पर

हार्दिक शुभकानाओं सहित

डॉ. अनुराग सिंह

मैकबरी फार्मास्युटिकल

लखनऊ

दीपावली

एवं

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ७५ वर्ष पूर्ण होने पर
'विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका' के 'संघ सरिता' अंक
के प्रकाशन पर

हार्दिक शुभकानाओं सहित

मेसर्स मदर्सन्स सेमी सिस्टम लिमिटेड

एम-15, सेक्टर-6,
नोयडा

Fax : 91-11-8-4560583
E-mail : jkmag@VSNL.com

Phone : 91-11-8-4560425
4560428
4560430
4560432

Manufacturing World Class

AUDIO MAGNETICS
TAPE
COBALT, EXCEL & PREMIUM Grade

India's No. 1 Seller

J.K. Corp Limited

(JK Magnetics Division)

B-4, Surajpur Industrial Area-II
Distt. Gautam Budh Nagar (U.P.) 201306 (India)

दीपावली

एवं

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ७५ वर्ष पूर्ण होने पर
'विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका' के 'संघ सरिता' अंक
के प्रकाशन पर

हार्दिक शुभकानाओं सहित

मेसर्स इण्डिया पैरिफैरल लिमिटेड, नोएडा

कम्प्यूटर हार्डवेयर की ट्रेडिंग करते हैं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के
७५ वर्ष पूर्ण होने पर
'विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका' के 'संघ सरिता' अंक
के प्रकाशन पर

हार्दिक शुभकानाओं सहित

राजीव पालीवाल

मेसर्स गणेश स्टील इंडस्ट्रीज

सफेदाबाद (बाराबंकी)

GRIPWEL FASTENERS

WORKS

UNIT I .: C-19.20 , SECTOR-59,NOIDA-201 301 (U.P.

UNIT II.:B-23,SECTOR-58,NOIDA-201301 (U.P.)

MANUFACTURE ITEM'S

TRACTOR PARTS & ACCESSORIES

AAL

Autometers Alliance Ltd

INDUSTRY SEGMENT

Rolling Stock Components

- ☆ Vacuum Circuit Breaker
- ☆ Protection Relay
- ☆ General Purpose Relay
- ☆ Auxiliary Convertor
- ☆ AC Coach Convertor
- ☆ Bulk Inverter
- ☆ Energy cum Speed Monitoring System
- ☆ Wheel Flange Lubricator
- ☆ Tachograph System
- ☆ Circular Connectors

Uninterruptible Power Supply System

***Pegasus* ◆ UPS™**

- ❐ 1ø Input / 1ø Output (1KVA - 8KVA)
- ❐ 3ø Input / 1ø Output (4KVA - 20KVA)
- ❐ 3ø Input / 3ø Output (10KVA - 40KVA)

STRATEGIC ALLIANCES

- ☞ Secheron Ltd., Switzerland
- ☞ Powertronix S.p.A, Italy
- ☞ Hyundai Heavy Industries Co. Ltd., South Korea
- ☞ Indian Railways (CLW), India
- ☞ Gimota AG, Switzerland

C-63, Sector-57, Noida-201 307 (U.P.)
Ph : 0118-4583545, 4583546 Fax : 0118-4583542
E-mail : automet@vsnl.com Web Site : www.autometers.com

AN ISO 9001 COMPANY

"World class technology™ through power of Alliance"

INSTITUTE OF BUSINESS MANAGEMENT & COMMUNICATION

(Affiliated to Chaudhary Charan Singh University, Meerut)

SPOT ADMISSION

BBA, BCA & B.Com.

(BCA & B.COM at INSTITUTE OF BUSINESS MANAGEMENT & FASHION TECHNOLOGY, BULANDSAHAR)

Eligibility :

10 + 2 Intermediate or equivalent any discipline, No condition of percentage of marks.

Contact :

* I.B.M.C. 14-125, Raj Nagar, Ghaziabad.
  Ph : 0120-751561
* I.B.M.F.T. Bulandsahar.
  Ph : 05732-27783

दूरभाष– ०५२२ २१६२३५
फैक्स– २३६६१६

विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका (त्रैमासिक)

डी/२, पार्क रोड ६ लखनऊ–२२६ ००१

दिनांक ....

सदस्यता नियमावली

विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका का सप्तम पुष्प आपके हाथों में है। पत्रिका विस्तार की दृष्टि से आपके सहयोग की भी आवश्यकता है। इसी को ध्यान में रखते हुए पत्रिका के वार्षिक और आजीवन सदस्य बनाने का विचार कर इस योजना को प्रारम्भ किया है।

सदस्यता शुल्क :

१ वर्ष	:	१०० रु० मात्र।
आजीवन सदस्यता	:	१००० रु० मात्र।

आवश्यक सूचना :

पत्रिका साधारण डाक से भेजी जायेगी।
वी.पी.पी. अथवा कोरियर से मँगाने पर उसका व्यय अलग से देना होगा।

सदस्यता फार्म

सेवा में,
व्यवस्थापक महोदय,
'विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका' (त्रैमासिक)
डी/२ पार्क रोड–६, लखनऊ।

मैं .... पता ....
....
.... अपना शुल्क : १ वर्ष/आजीवन .... रु० मात्र मनीआर्डर/पोस्ट आर्डर/बैंक ड्राफ्ट से भेज रहा हूँ।

हस्ताक्षर

विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका के अब तक प्रकाशित छः पुष्प

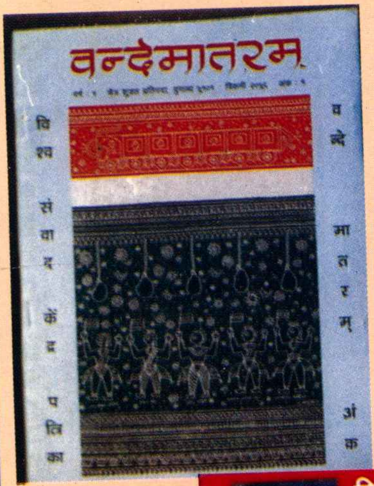

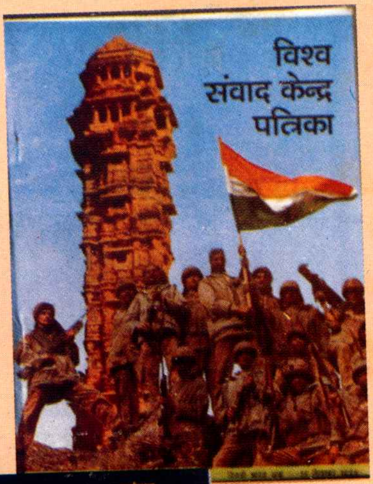

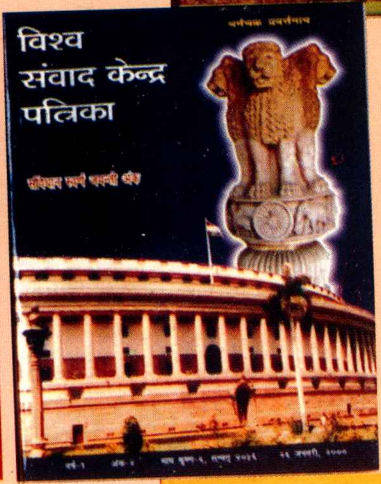

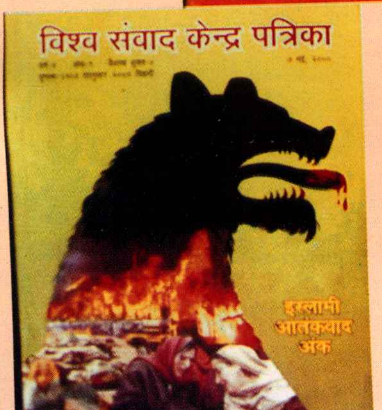

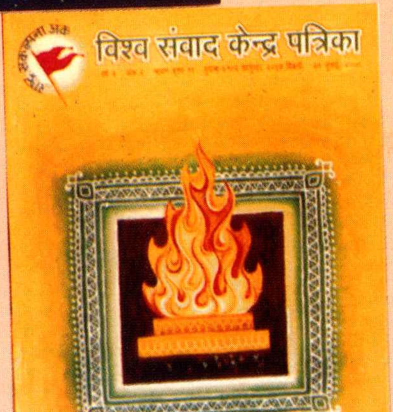

उत्तर प्रदेश

उज्ज्वल भविष्य की ओर

राम प्रकाश
मुख्यमंत्री, उ.प्र.

बहुमुखी प्रगति और समग्र विकास

आबादी की दृष्टि से सबसे बड़ा राज्य उत्तर प्रदेश अन्न उत्पादन, चीनी उत्पादन, दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में प्रथम स्थान पर है। विद्युत उत्पादन, सॉफ्टवेयर निर्यात, रसायन निर्माण, खाद्य क्षेत्र, चर्म उत्पादन, पेय-पदार्थ उद्योग, रबर उद्योग, मशीन निर्माण, पूँजीगत सामग्री के मामले में हम आज देश में भले ही दूसरे स्थान पर हैं, लेकिन आने वाले समय में सुनियोजित प्रबन्धन के परिणामस्वरूप प्रथम स्थान पर आ सकेंगे।

औद्योगिक गतिविधियों में अत्यधिक वृद्धि मौजूदा समय की सबसे बड़ी उपलब्धि है। अपने प्रदेश के मुख्यमंत्री के मुम्बई प्रवास के दौरान प्रमुख उद्योगपतियों द्वारा लगभग २६,००० करोड़ रुपये का निवेश प्राप्त हुआ। हमारा राज्य देश का पहला राज्य है, जहाँ एक अन्य निर्यात प्रोत्साहन पार्क की स्थापना की जा रही है।

प्रदेश के विकास के लिए उपयुक्त माहौल के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा लालफीताशाही और भ्रष्टाचार है। ऐसे सभी अधिकारियों/कर्मचारियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई की जा रही है जो भ्रष्टाचार में लिप्त हैं।

इनके अतिरिक्त अपराध पर प्रभावी नियन्त्रण तथा कानून व्यवस्था चुस्त-दुरुस्त किये जाने से शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के निवासियों में सुरक्षा की भावना का अहसास हुआ है। राज्य सरकार का संकल्प है कि लोगों के अधिकारों की रक्षा करना पुलिस का सर्वोपरि दायित्व है। इस प्रकार उत्तर प्रदेश बहुमुखी प्रगति और समग्र विकास के पथ पर अग्रसर है।

पारदर्शी शासन : स्वच्छ प्रशासन

- मुख्यमन्त्री द्वारा राज्य स्तर पर लागू किये गये भ्रष्टाचार निवारण उपायों की केन्द्रीय सतर्कता आयोग द्वारा सराहना की गई।
- भ्रष्ट तरीकों से अर्जित सम्पत्ति को जब्त करने तथा उसे नीलाम करने के लिए कानून बना।
- भ्रष्टाचार से सम्बन्धित मामलों का तेजी से निस्तारण करने के लिए ७ विशेष न्यायालयों की स्थापना।
- भ्रष्टाचार निवारण से जुड़े विभिन्न विभागों के मध्य बेहतर सम्बन्ध स्थापित करने के लिए मुख्य सतर्कता आयुक्त कार्यालय की स्थापना प्रस्तावित।
- स्वच्छ, पारदर्शी एवं कुशल प्रशासन का मार्ग प्रशस्त करने के लिए जन उपयोगिताओं से जुड़े १८ विभागों में 'सिटीजन चार्टर' लागू करने का निर्णय। इनमें से १५ विभागों में चार्टर लागू।

कानून व्यवस्था : नयी दिशाएँ

- पुलिस को आपराधिक तत्त्वों के विरुद्ध सख्त से सख्त कार्रवाई के साथ-साथ मानवाधिकारों के हनन के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील व जागरूक रहने के निर्देश। किसी भी व्यक्ति को बिना अभिलेखों में दर्ज किये पुलिस थानों में निरुद्ध न रखने के निर्देश।
- पुलिस बल के आधुनिकीकरण के लिए १९ करोड़ रुपये की योजना स्वीकृत।
- प्रदेश में पंचायत चुनाव स्वतंत्र, निष्पक्ष व शांतिपूर्ण वातावरण में सम्पन्न। कड़ी चौकसी के फलस्वरूप पिछले चुनावों की अपेक्षा इस चुनाव में हिंसा की घटनाओं में कमी।
- हिन्दुओं, मुसलमानों एवं सभी वर्गों के प्रमुख त्योहार जैसे- ईदुल-फितर, महाशिवरात्रि, ईदुल-जुहा, होली, नवरोज, रामनवमी तथा मोहर्रम शान्तिपूर्ण ढंग से सम्पन्न।
- अपराध नियन्त्रण की दिशा में प्रभावी कार्रवाई करने तथा अपराधों की विवेचना में तेजी एवं गुणात्मक सुधार लाने के उद्देश्य से विवेचना एवं कानून व्यवस्था को पृथक करने का निर्णय।
- प्रदेश के थानों में दर्ज जघन्य अपराधों की विवेचना का अनुश्रवण एवं विवेचना अधिकारियों के कार्यों के पर्यवेक्षण के लिए ७२ जिलों में पुलिस उपाधीक्षक (अपराध एवं विवेचना) के नये पद सृजन का निर्णय।

कृषि : नये आयाम

- इस वर्ष गेहूँ का रिकार्ड उत्पादन २५९.७६ लाख टन हुआ, जो देश के अन्य प्रदेशों की तुलना में सर्वाधिक है।
- वर्ष २०००-२००१ में कुल ५१० लाख टन खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य।
- आलू निर्यातक किसानों को ट्रांसपोर्ट किराये में १० प्रतिशत का अनुदान।
- ३१ अक्टूबर, २००० तक २ प्रतिशत मण्डी शुल्क तथा आधा प्रतिशत विकास शुल्क स्थगित।
- शीतगृहों में किसानों के आलू भण्डार पर १० रुपये प्रति टन अनुदान।
- प्रदेश में किसानों के लिए राष्ट्रीय फसल बीमा योजना।
- चावल सहित अन्य फसलों से लगभग ६०० करोड़ रुपये का निर्यात।
- प्रदेश की नयी कृषि नीति में २००७ तक खाद्यान्न उत्पादन दोगुना करने का लक्ष्य।

गन्ना विकास एवं चीनी उद्योग : बेहतर सुविधाएँ

- गन्ना खरीद मूल्य में ५ रुपये प्रति कुन्तल की वृद्धि।
- १० सितम्बर, २००० तक कुल गन्ना मूल्य ४०८९.८५ करोड़ रुपये में से लगभग ४००० करोड़ रुपये का भुगतान। कुल भुगतान ९६ प्रतिशत, एक ऐतिहासिक उपलब्धि।
- पेराई सत्र १९९९-२००० में ४५.५६ लाख टन चीनी का रिकार्ड उत्पादन।
- ८० प्रतिशत शीरा नियन्त्रण से मुक्त। एकमुश्त खाण्डसारी लाइसेंसिंग प्रणाली लागू।

- अल्कोहल निर्यात हेतु अनुज्ञापत्र फीस की दर में वृद्धि।

ग्रामीण विकास : नयी सुविधा

पेयजल

- स्वच्छ एवं समुचित पेयजल के प्रति २५० व्यक्तियों पर एक हैण्डपम्प उपलब्ध। इसके अतिरिक्त इस वर्ष १,१५,६२१ हैण्डपम्प लगाने का निर्णय। माह अगस्त, २००० तक ७७,६९२ हैण्डपम्प लगाये गये।

रोजगार

- स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत वित्तीय वर्ष में १६४.३८ करोड़ रुपये व्यय कर ३.७५ लाख गरीब परिवारों को लाभान्वित करने का लक्ष्य।
- जवाहर ग्राम समृद्धि योजना के अन्तर्गत वर्तमान वित्तीय वर्ष में ४१९.५२ करोड़ रुपये व्यय कर ६२३.४४ लाख मानव दिवस सृजित करने का लक्ष्य। माह अगस्त, २००० तक १३९६.१२ करोड़ रुपये खर्च कर १९.६४ लाख मानव दिवस सृजित।
- सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत इस वर्ष २९२.६५ करोड़ रुपये व्यय कर ३६ लाख मानव दिवस सृजित करने का लक्ष्य। माह अगस्त, २००० तक ३३३१.४५ लाख रुपये खर्च कर ३६.८२ लाख मानव दिवस सृजित।

मकान

- इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत इस वर्ष ३१४.२० करोड़ रुपये व्यय कर १,८७,६२९ आवास निर्मित किये जाने का लक्ष्य। माह अगस्त, २००० तक २९६४.३४ लाख रुपये व्यय कर २१,२९७ आवास निर्मित।
- ग्रामीण आवासों के लिए ऋण एवं अनुदान योजना के अन्तर्गत २०.१६ करोड़ रुपये व्यय कर २०,००० आवास निर्मित।

सड़क

- प्रदेश के ७०,००० गाँव पक्की सड़कों से जोड़े गये। बाकी गाँवों को लोक निर्माण व ग्राम्य विकास विभाग द्वारा शीघ्र जोड़ने की रणनीति तैयार।
- पं० दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण सम्पर्क मार्ग योजना के अन्तर्गत १४५९ ग्रामों से जोड़ा गया।

अन्य

- अम्बेडकर ग्राम विकास योजना के अन्तर्गत अब तक चयनित २३,५५७ अम्बेडकर ग्रामों में विकास कार्य पूर्ण।
- ग्रामों के नक्शों तथा भूमि की सही पैमाइश हेतु डिजिटल मैप प्रणाली की व्यवस्था।
- कुल १,१२,५९६ ग्रामों के कम्प्यूटरीकरण का कार्य पूरा।
- सभी ब्लाकों में सूचना केन्द्र स्थापित।
- १० हजार ग्रामीण सूचना केन्द्रों को स्थापित करने का लक्ष्य।

पंचायती राज : नयी व्यवस्था

- पंचायती राज संस्थाओं को पिछले वर्ष के ११०० करोड़ रुपये के बजाय इस वर्ष कुल २९०० करोड़ रुपये दिये गये। इस प्रकार विगत वर्ष की तुलना में इस वर्ष १८०० करोड़ रुपये अधिक दिये जाने का प्राविधान।
- सभी प्रकार के पेंशन एवं छात्रवृत्ति स्वीकृत करने और वितरण करने का अधिकार ग्राम पंचायतों को।
- ग्राम पंचायत के कार्यों में पारदर्शिता लाने के उद्देश्य से ग्राम पंचायत के सूचना पट्ट एवं कार्यस्थल पर कार्यों तथा लाभार्थी के विवरण का प्रकाशन कराने का निर्णय।
- प्रत्येक गाँव सभा की खुली बैठक ३ माह में एक बार अवश्य आयोजित कराने का निर्णय।
- नव निर्वाचित लगभग ७ लाख पंचायत पदाधिकारियों एवं बहुउद्देशीय कर्मियों को दो चरणों में प्रशिक्षित कराये जाने का निर्णय।

- ग्रामीण क्षेत्रों में इण्डिया मार्क-II हैण्ड पम्पों की स्थापना के लिए स्थलों का चयन करने का अधिकार ग्राम पंचायतों को।
- वर्ष २०१० तक प्रदेश के समस्त गाँवों को पक्की सड़कों से जोड़ने की योजना।
- प्रदेश में पंचायत चुनाव स्वतन्त्र, निष्पक्ष एवं शान्तिपूर्ण वातावरण में सम्पन्न। कड़ी चौकसी के फलस्वरूप पिछले चुनावों की अपेक्षा इस चुनाव में हिंसा की घटनाओं में कमी।

समाज कल्याण : मानवीय सरोकार

- अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के निर्धन एवं असहाय व्यक्तियों के इलाज एवं उनकी पुत्रियों की शादी के लिए सहायता प्राप्त करने हेतु आय सीमा १२,००० रुपये वार्षिक करने का निर्णय।
- निराश्रित विधवा सहायक योजना के तहत इस वर्ष ७५५०.४२ लाख रुपये की धनराशि से ५,०४,४९५ विधवाएँ लाभान्वित।
- बाल विकास परियोजना कार्यक्रम के तहत वर्त्तमान में कुल ५५० परियोजनाएँ संचालित।
- कारगिल युद्ध के 'आपरेशन विजय' के १७१ शहीदों की पत्नियों को ५००० रुपये प्रति माह तथा १६० शहीद सैनिकों के माता-पिता को २५०० रुपये प्रतिमाह की दर से पेंशन देने का निर्णय।
- 'आपरेशन विजय' के शहीद परिवारों पर राज्य सरकार का ऋण माफ।
- शहीद के परिवार के बच्चों को स्नातक तक निःशुल्क शिक्षा देने का निर्णय।
- राजकीय सेवाओं, स्वरोजगार/गरीबी उन्मूलन तथा शिक्षण संस्थाओं में विकलांग व्यक्तियों हेतु ३ प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था।
- १८ वर्ष तक के विकलांग बच्चों को निःशुल्क शिक्षा।

अल्पसंख्यक कल्याण

- अल्पसंख्यक समुदाय के छात्र एवं छात्राओं के लिए छात्रवृत्ति योजना के अन्तर्गत १०६.४० करोड़ रुपये की छात्रवृत्ति वितरित कर २५,२७,८७० छात्र लाभान्वित।
- अरबी-फारसी मदरसों के आधुनिकीकरण की योजना के अन्तर्गत अब तक ६९० मदरसों का आधुनिकीकरण।

बदलता परिवेश

लोक निर्माण

- मार्गों को चौड़ा करने की योजना के अन्तर्गत १०८८ किमी. लम्बाई के १५ राजमार्गों को एक लेन से दो लेन चौड़ा किया गया।
- सामान्य अनुरक्षण एवं गड्ढा मुक्ति योजना के अन्तर्गत ३००० किमी. राजमार्गों तथा प्रमुख जिला मार्गों का सामान्य अनुरक्षण एवं पैच वर्क किया गया।
- प्रदेश में सेतु निगम द्वारा ६१ पुलों का निर्माण कार्य पूर्ण।

सिंचाई

- नहरों की सफाई के समय लोगों को पहले से सूचित करने का निर्णय।
- नहरों के संचालन के लिए ९००० किमी. में सिल्ट सफाई का कार्य पूरा। वर्ष २०००-२००१ में २५,००० कि.मी. सिल्ट सफाई का लक्ष्य।
- प्रदेश के लघु सिंचाई विभाग के सभी कार्यालयों को नेटवर्क से जोड़कर सूचना तन्त्र स्थापित करने का निर्णय।
- वर्षों से लम्बित पुनरीक्षित टोंस पम्प नहर, चित्तौड़गढ़ जलाशय, घाघरा नहर का आधुनिकीकरण, बेवर फीडर तथा गुन्टा नाला बाँध परियोजना पूरी। वर्ष २०००-२००१ में सात और परियोजनाओं को पूरा करने का लक्ष्य।
- आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक निजी लघु सिंचाई द्वारा १२५ लाख हे० सिंचन क्षमता का सृजन। नवीं पंचवर्षीय योजना में ७.०० लाख हे० सिंचन क्षमता के सृजन का लक्ष्य।

नगर विकास : बढ़ती सुविधाएँ

- उत्तर प्रदेश नगर निगम (सम्पत्ति कर) नियमावली- २००० प्रख्यापित। प्रक्रिया को सरल बनाते हुए नागरिकों को स्वकर निर्धारण की सुविधा उपलब्ध कराई गई।
- स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत २७.३२ लाख मानव दिवस रोजगार सृजित कर २४,३७१ लोग लाभान्वित किये गये।
- भाऊराव देवरस योजना के अन्तर्गत २३,७९५ भूखण्ड/भवन उपलब्ध कराये गये।

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य : बेहतर सेवा

- राजकीय चिकित्सालयों में बेहतर सुविधाएँ उपलब्ध कराने हेतु चिकित्सा सेवा दरों में संशोधन।
- गरीबी की रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को निःशुल्क चिकित्सा की सुविधा।
- पहली बार सरकारी अस्पतालों में प्रति शैय्या प्रतिवर्ष १०,००० रुपये व्यय करने की व्यवस्था।

हथकरघा एवं वस्त्रोद्योग : नया जीवन

- हथकरघा के क्षेत्र के विकास हेतु तीन वर्षों में २७.२९ करोड़ रुपये राज्यांश के रूप में व्यय। इस वर्ष २३.८० करोड़ रुपये व्यय करने का प्राविधान।
- हथकरघा बुनकरों के समग्र विकास हेतु प्रोजेक्ट पैकेज योजना बनी। अब तक कुल ३९८ प्राइमरी समितियों के प्रोजेक्ट स्वीकृत और ३३,७४० से अधिक बुनकरों हेतु स्वरोजगार उपलब्ध।
- हथकरघा बुनकरों के लिए सामूहिक बीमा योजना।

दुग्ध विकास, पशुधन एवं मत्स्य पालन : नया वातावरण

- १३६.१८ लाख टन दूध का उत्पादन कर प्रदेश, देश में प्रथम।
- प्रति व्यक्ति दैनिक दुग्ध उपलब्धता बढ़कर २३५ ग्राम।
- जुलाई, २००० तक सघन मिनी डेरी परियोजना के अन्तर्गत १०२१ मिनी डेरियों की स्थापना कर ५३९० व्यक्तियों को स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराये गये।
- सघन मिनी डेरी परियोजना के अन्तर्गत कृषकों द्वारा पशु क्रय किये जाने पर देय स्टाम्प शुल्क की सीमा ४५,००० रुपये से बढ़कर ५९,००० रुपये हुई।
- १०,००० से अधिक संख्या वाले कुक्कुट फार्मों को उद्योग का दर्जा।
- ग्राम सभा के तालाबों को मत्स्यपालन हेतु १० वर्ष की लम्बी अवधि के पट्टे पर मछुआ समुदाय के व्यक्तियों को वरीयता के आधार पर दिये जाने की व्यवस्था। अब तक कुल ९१३१८ हे० क्षेत्रफल के पट्टे मत्स्य पालकों को उपलब्ध कराये गये।
- मत्स्य बीज की निरन्तर बढ़ती माँग की आपूर्ति हेतु निजी क्षेत्र को बढ़ावा।

जनसंख्या प्रदेश की शक्ति का स्रोत है तो वह समस्या भी है। सरकार ने हाल में ही एक जनसंख्या नीति बनायी है, जिस पर अमल कर जन्म दर को वर्तमान ५ प्रतिशत से घटाकर २.१ प्रतिशत करने का लक्ष्य तय किया गया है। जन्म दर घटने तथा उद्योग, उत्पादन, कृषि और बागवानी के बढ़ने से गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी और शोषण समाप्त होंगे। इस तरह यह प्रदेश विकास की एक नयी राह पर चल पड़ा है।

E-mail Address : upid @ lw1.vsnl.net. in

Website Address : www.upinfo.org.

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा जनहित में प्रसारित।

भारत सरकार के सर्वश्रेष्ठ **राष्ट्रीय उत्पादकता पुरस्कार** से सम्मानित

उत्तर प्रदेश राज्य भंडारण निगम

(माननीय प्रधानमंत्री द्वारा घोषित राष्ट्रीय भंडारण नीति के अन्तर्गत वैज्ञानिक भंडारण के उद्देश्यों को साकार करने वाला प्रदेश का एकमात्र उपक्रम)

कुल भंडारगृह — 144 **भण्डारण क्षमता — 20.42 लाख मी. टन**

क्षमता का उपयोग — 99 प्रतिशत

जमाकर्त्ताओं का हित पूर्णतया सुरक्षित

- निगम के भण्डारगृहों में कोई भी व्यक्ति / संस्था अपना माल जमा कर सकती है।
- भण्डारित माल की कीड़े-मकाड़ों, चूहों, सीलन आदि से सुरक्षा।
- भण्डारित माल का चोरी, आग, डाका, बाढ़ से बीमा।
- भण्डारित माल के लिए जारी रसीद पर बैंकों से ऋण की सुविधा।
- प्रदेश की 'संग्रह एजेन्सी' के रूप में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के सफल क्रियान्वयन में विशेष योगदान।
- प्रदेश में विश्व बैंक द्वारा संचालित ऊसर भूमि सुधार कार्यक्रम को सफल बनाने में योगदान।
- इन्लैण्ड कन्टेनर डिपो के माध्यम से निर्यात संवर्धन में विशेष योगदान।

कृषकों को विशेष सुविधाएँ

- कृषकों को भण्डारण शुल्क में 20 प्रतिशत छूट की सुविधा।
- कृषकों को प्राविधिक क्रियाओं के लिए निःशुल्क प्रशिक्षण की व्यवस्था।
- कृषकों के घरों / निजी गोदामों में रखे अनाज की सुरक्षा हेतु कीटपरिनाशक सेवा।

(सी.एम. सिंह)
प्रबन्ध निदेशक

(बद्री प्रसाद अवस्थी)
अध्यक्ष

‘संघे शक्तिः कलौयुगे’

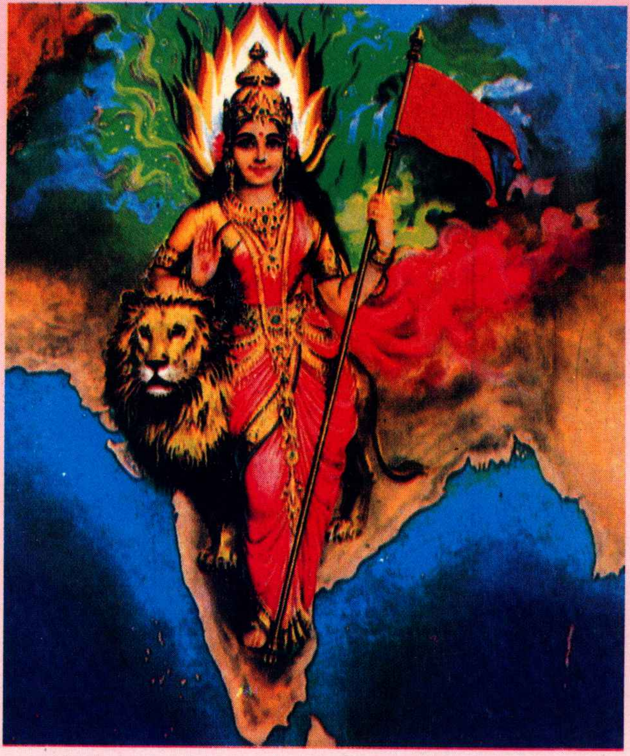

भारत माता की जय

समृद्ध किसान - सुदृढ़ उद्योग - खुशहाल देश

द्वारिकेश शुगर इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

द्वारिकेश नगर, उत्तर प्रदेश